मूल्यों के विविध आयाम

संपादक

डॉ. पी. के. वार्ष्णेय
प्राचार्य

डॉ. प्रवेश कुमार
सहायक प्राध्यापक, अध्यापक-शिक्षा विभाग

राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर, (उ.प्र.)

Neel Kamal Prakashan

Shahdara, Delhi- 32

Published by :
NEEL KAMAL PRAKASHAN
1/11052-A, Subash Park, Shahdara, Delhi-110032
email : nkplife@gmail.com
Mob: 9411006565

© *Editor-* the concern author(s) will be responsible for views, data, text and the data analysis presented in the chapter.

ISBN : 978-93-93248-08-4

Price : **Rs. 600.00**

First Edition : **2022**

Printed by :
NEEL KAMAL PRAKASHAN.

प्राक्कथन

शिक्षा मनुष्य के विकास का आधार है। जिस समाज में जैसी शिक्षा होती है, वह समाज उसी के अनुरूप प्रगति के पथ पर गतिमान होता है। यदि किसी समाज की शिक्षा व्यवस्था भौतिकवाद पर आधारित है, तो उस समाज की भौतिक उन्नति होगी और यदि शिक्षा व्यवस्था आध्यात्मिक है, तो वहां आध्यात्मिक उन्नति होना स्वभाविक है। यदि किसी समाज की शिक्षा व्यवस्था आध्यात्मिक एवं नैतिक मूल्यों का संवर्धन करने वाली है तो वहां का समाज उक्त सभी मूल्यों से परिपूर्ण होगा। जीवन को सजाने और संवारने में अनेक तत्वों का योग होता है। मूल्य उनमें से एक आवश्यक तत्व है, जिसके बिना न तो सुखद व शांतिपूर्ण वैयक्तिक जीवन संभव है,न ही सामाजिक जीवन संभव है, और न ही इनके बिना आध्यात्मिक जीवन ही संभव है। अतः मूल्यों की महत्ता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। वास्तव में मूल्य जीवन को बहुआयामी रूप देने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। आज भौतिक प्रगति की अंधी दौड़ में हम इस प्रकार भाग रहे हैं, जिससे हमारी संस्कृति, सभ्यता एवं मूल्यों का सतत पतन हो रहा है। अतः आवश्यकता है कि हम अपनी भौतिक प्रगति के साथ–साथ मानवीय मूल्यों को भी दृष्टिगत रखें। इसी आशा और विश्वास के साथ उच्च शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संपोषित एवं राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर (उत्तर प्रदेश) द्वारा दिनांक 22–23 फरवरी, 2020 को "शिक्षा में मानवीय मूल्य एवं व्यावसायिक नैतिकताः आवश्यकता एवं महत्व" विषय पर आयोजित राष्ट्रीय सेमिनार में प्राप्त शोध पत्रों/लेखों का संकलन सम्पादित पुस्तक "मूल्यों के विविध आयाम" के रूप में सुधी पाठकों, विद्यार्थियों, शिक्षकों, अनुसंधानकर्ताओं एवं शिक्षाविदों के समक्ष प्रस्तुत है, जिससे कि वे मूल्यों के विविध पक्षों को समझ कर अपने जीवन में अंगीकार कर सकें।

डॉ. पी .के. वार्ष्णेय

डॉ. प्रवेश कुमार

मूल्यों के विविध आयाम; ISBN: 978-93-93248-08-4

Contents

S.No.	Chapter Name & Writer	Page No.
1.	पर्यावरण संरक्षण और मानवीय मूल्य *डॉ. एकता भाटिया*	01 – 04
2.	पर्यावरण संरक्षण में मानवीय मूल्यों की भूमिका : भारतीय परिवेश में *डॉ. अरविन्द कुमार, मौ० आजम*	05 – 10
3.	विपष्यना एवं प्रेक्षा की तनाव प्रबंधन में भूमिका : एक समीक्षात्मक अध्ययन *अशोक कुमार यादव, सुनील कुमार श्रीवास*	11 – 18
4.	पर्यावरण संरक्षण एवं मानवीय मूल्य *डॉ. बबली रानी*	19 – 22
5.	भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्य *भुवाल चौहान*	23 – 25
6.	विधि एवं मानवीय मूल्य *चन्द्रमुखी पाल*	26 – 33
7.	कल्याणकारी विज्ञान एवं मानव मूल्य *जितेन्द्र सिंह*	34 – 40
8.	शिक्षा में मानवीय मूल्यों की मानव जीवन में आवश्यकता एवं महत्व *डॉ० ललित कुमार*	41 – 51
9.	धर्म दर्शन एवं मानवीय मूल्य *मेहनाज अंजुम*	52 – 54
10.	मानवीय मूल्यों में योग एवं शारीरिक शिक्षा का महत्व *डा0 नगेन्द्र पाल*	55 – 60
11.	शिक्षा में मानव मूल्य और व्यावसायिक नैतिकता की भूमिका *डॉ0 नीता गुप्ता, कीर्ति सिंह*	61 – 63

12. योग, शारीरिक शिक्षा एवं मानवीय मूल्य 64 – 70

ममता रानी, डॉ. नीता गुप्ता

13. भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्य 71 – 73

पूनम रावत

14. शिक्षा में व्यावसायिक प्रतिबद्धता और आचार संहिता 74 – 78

प्रदीप कुमार

15. वर्तमान समय में मानव मूल्यों की स्थिति 79 – 83

लैफ्टिनेन्ट (डॉ.) प्रवेश कुमार, रिंकू सिंह

16. व्यावसायिक शिक्षा एवं मानवीय मूल्य 84 – 86

किशन सैनी

17. शिक्षा का नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्य 87 – 90

डॉ. राजेश कुमार पाल

18. मुक्तिबोध के साहित्य में मानवीय मूल्य 91 – 96

डॉ. राजेश कुमार

19. सहशिक्षा महाविद्यालय और महिला महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन 97 – 105

डॉ. श्रीमती रजनी दुबे

20. मानवीय मूल्यों पर आधुनिकता का प्रभाव और वर्तमान शिक्षा 106 – 115

डॉ. राकेश कुमार शर्मा, शक्ति सिंह

21. वर्तमान अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की चुनौती 116 – 119

डॉ. राम किशोर सागर, सुषमा रानी

22. डिजिटल इण्डिया एवं मानवीय मूल्य 120 – 129

रंजीत सिंह

23. शिक्षा में मानवीय मूल्य एवं व्यावसायिक आवश्यकता एवं महत्व 130 – 131

रेशू गंगवार, डॉ. अनुपमा महरोत्रा

24. वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण का मानवीय मूल्य संरक्षण में योगदान 132 – 135

ऋचा राघव

25. शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों (Social Media) की भूमिका 136 – 141

दीपक कुमार शर्मा, शरद गंगवार

26. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों एवं मानवीय मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन 142 – 155

डॉ. रोहित कुमार

27. आजादी के समर मे आधुनिक शिक्षा का योगदान 156 – 156

सचिन कुमार

28. त्रिलोचन की कविता और मानवीय मूल्य 157 – 160

सच्चिदानन्द पाण्डेय

29. शिक्षक, शिक्षा और मूल्य 161 – 168

डॉ. संजीव कुमार

30. भौगोलिक परिस्थितियाँ तथा मानवीय मूल्य 169 – 173

सौरभ भारद्वाज

31. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का अध्ययन 174 – 180

शिव शंकर शुक्ला

32. कल्याणकारी अर्थशास्त्र एव ंमानवीय मूल्य 181 – 182

डॉ. सीमा मलिक

33. शिक्षा में मानवीय मूल्य एवं व्यावसायिक नैतिकता 183 – 184

डॉ. शुचि श्रीवास्तव

34. शिक्षा एवं मानवीय मूल्य 185 – 190

डॉ. विजय सिंह

35. पर्यावरण संरक्षण और मानवीय मूल्य — 191 – 199

विनोद कुमार

36. ब्राह्मण ग्रन्थों में नैतिकता एवं मानवीय मूल्य — 200 – 209

ज़फर अली

37. मानवीय मून्यों के सन्दर्भ में चित्राकला का दायित्व — 210 – 211

डॉ. मनीषा शर्मा

38. मानव मूल्यों को शिक्षा की आवश्यकता — 212 – 215

सुशील कुमार

39. स्नातक स्तर पर शिक्षण के सन्दर्भ में सरकारी एवं निजी प्रबन्धतंत्रा (प्राईवेट) महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मूल्यों एवं सामाजिक सफलता के मध्य सह–सम्बन्धों का तुलनात्मक अध्ययन — 216 – 221

डॉ. नीतू चावला

40. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवीय–जीवन में मूल्यों की आवश्यकता — 222 – 226

उमा गुप्ता

41. शिक्षक एवं व्यवसायिक नैतिकता — 227 – 229

डॉ. मनीष पोरवाल

42. मानवीय मूल्यों पर वातावरण का प्रभाव — 230 – 239

लेफ्टिनेंट (डॉ.) प्रवेश कुमार,
डॉ. सुनीति लता

पर्यावरण संरक्षण और मानवीय मूल्य

डॉ. एकता भाटिया
एसोसियेट प्रोफेसर, बी0एड0 विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद

प्रकृति ईश्वर द्वारा मनुष्य को प्रदत अमूल्य निधि है। मानव प्रकृति में अटूट संबंध है। विकास की राह पर अग्रसर होता मनुष्य भौतिकता की चाह में अपने पर्यावरण के प्रति संवेदन शून्य होता जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग, अमली वर्षा जैसी गंभीर समस्याएं इसी संवेदनहीनता की देन हैं। जल, ध्वनि, वायु, मृदा प्रदूषण के कारण मानव जीवन निरंतर प्रभावित हो रहा है। बाढ़, सूखा, भूमि क्षरण, भूकंप जैसी प्राकृतिक आपदाएं वन विनाश के कारण उत्पन्न हो रही हैं। यदि मानव प्रकृति व प्राकृतिक संसाधनों से इसी प्रकार छेड़छाड़ करता रहेगा तो मानव जीवन को खतरे से बाहर निकालना संभव नहीं रहेगा। प्राचीन काल में पर्यावरण की रक्षा धर्म से जोड़कर की जाती थी किंतु अब मनुष्य की लापरवाही से पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है। पर्यावरण संरक्षण आज के समय की महती आवश्यकता है। धर्म, जन चेतना, शिक्षा, जीवन मूल्य, संस्कार, शोध तकनीकी और जीवन शैली में परिवर्तन लाकर पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता लायी जा सकती है।

अधिकांश भारतवासी प्राचीन भारतीय जीवन मूल्यों और पाश्चात्य जीवन मूल्यों के बीच अपना जीवन जी रहे हैं। मूल्य बदलने से जीवन पद्धति बदल जाती है और जीवन पद्धति बदलने से मूल्य बदल जाते हैं। युग व आवश्यकता अनुसार मूल्यों, रीति–रिवाजों, आचार व्यवहार, परंपराओं, नीति नियमों को अपनाया जाना महत्वपूर्ण है। मूल्य संबंधों को संतुलित कर व्यवहारों में एकरूपता स्थापित करते हैं। मूल्यों के अभाव में मानव के अस्तित्व की कल्पना करना व्यर्थ है। अज्ञेय के अनुसार "जीवन मूल्य व्यवस्थित परस्पर आश्रित रूप में ही एक विशिष्ट जीवन प्रतिमान का निर्माण करते हैं। मानव ही मूल्य का स्रोत और सृष्टा है।"

मानव मूल्य व्यक्ति के अतःकरण द्वारा नियंत्रित होते हैं तथा समाज की संस्कृति परंपरा आदि द्वारा इनका पोषण होता है। सहभागिता, सहयोग, अभिव्यक्ति, सहनशीलता आदि व्यक्ति को समाज का आदर्श सदस्य बनाते हैं। पर्यावरण विषय से मूल्यों को संबंधित करके पर्यावरण के प्रति मनुष्य को उसके उत्तरदायित्व से परिचित कराया जा सकता है तथा यह पर्यावरण संरक्षण में सहायक सिद्ध होगा। स्वार्थपरता की होड़ में मनुष्य का जीवन यंत्रवत हो चुका है अतः मानवीय मूल्यों का उत्थान पर्यावरण को बचाने के लिए करना होगा। उपकार, विनम्रता, समभाव आदि गुणों का समावेश करके व्यक्ति अपने घर, समाज, देश व पर्यावरण के प्रति दायित्वों को निष्ठा से निभा सकता है मानवीय मूल्य ही व्यापक दृष्टिकोण के विकास में सहायक हो सकते हैं।

पर्यावरण संरक्षण भारतवर्ष के लिए प्राचीन अवधारणा है। शताब्दियों पूर्व पराशर, कश्यप, कपिल आदि मुनियों ने इसे जन आंदोलन बनाया। वेदों में अंतरिक्ष, पृथ्वी, वनस्पतियों, औषधियों व समस्त ब्रह्मांड में शांति की प्रार्थना की गई है। हमारे प्राचीन ग्रंथों अभिज्ञान शाकुंतलम, मेघदूत आदि की रचना स्थली वन ही रहे हैं। वन भारतीय सभ्यता और संस्कृति के केंद्र बिंदु रहे हैं। सम्राट अशोक ने भी वृक्षों के संरक्षण के अनेक नियम बनाये। हमारे प्राचीन ग्रंथ जीवन शैली निर्माण में सहायक हो सकते हैं, किंतु दुर्भाग्यवश हम आधुनिकता के विस्तार में उलझ गये है। मानव का उत्तरदायित्व है कि आने वाली पीढ़ी को स्वच्छ पर्यावरण हस्तांतरित करें। जो व्यवस्था आज विद्यमान है उसी में से प्रकृति की सीमाओं को खोजना होगा। मानवीय मूल्यों को इस प्रकार विकसित किया जाए कि मनुष्य पर्यावरण के प्रति अधिक संवेदनशील बन सके।

पर्यावरण ऐसी समस्या है जो सभी को प्रभावित करेगी। विश्व स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के लिए लगातार प्रयास किए गए जा रहे हैं। भावी पीढ़ी में पर्यावरण की रक्षा हेतु मूल्यों के विकास के लिए प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा से इसे विषय के रूप मे जोड़ दिया गया है। पर्यावरण संरक्षण संबंधी नियमों, अधिनियमो, साधनों की जानकारी भी इसमें सम्मिलित है। 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है। पृथ्वी शिखर सम्मेलन 1929 में मॉरिसस स्ट्रांग महोदय ने कहा था–"सभी देशों के सूत्रधार भली–भांति समझ लें कि अगर जंगल जैसे प्राकृतिक संसाधनों का विनाश बंद नहीं किया गया और अधिकतर लोगों को गरीबी के अभिशाप से मुक्ति नहीं दिलाई गई तो मानव संपदा और उसे धारण करने वाली धरती पर कोई नहीं बचेगा।" पर्यावरण विकास हेतु मानव को शिक्षित करना स्वयं में एक चुनौती है। वर्तमान विश्व के समक्ष मानव मूल्यों के साथ तालमेल बिठाकर पर्यावरण की रक्षा करने का उत्तरदायित्व है। गांधीजी के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य बच्चों का सामंजस्य उनके आसपास के पर्यावरण के साथ स्थापित करना होना चाहिए, अपने चारों ओर पर्यावरण से अपनी संस्कृति, मूल्यो, वैज्ञानिक तकनीकी जानकारियों का पारस्परिक संबंध क्रियान्वयन करने में हम सक्षम हो।

व्यवहारिक, प्राकृतिक, प्रयोगिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, वैश्विक, वैज्ञानिक मूल्य पर्यावरण शिक्षा से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। ये मानवीय सोच को व्यापक बनाकर पर्यावरण संरक्षण में सहायक है। भारतीय संस्कृति के 'वसुधैव कुटुंबकम' तथा 'सत्यम शिवम सुंदरम' ऐसे दो जीवन दायिनी सूत्र है जो संपूर्ण विश्व को एक धागे में पिरोये हुए हैं। पर्यावरण मानव जीवन की प्रकृति, जीवो के व्यवहार, परिपक्वता को प्रभावित कर रहा है। मानव किस प्रकार पर्यावरणीय प्रभावों से उत्पन्न भयंकर बीमारियों व प्राकृतिक आपदाओं से बचाव एवं सामना कर सके, इसके लिए पर्यावरण संरक्षण पर बल दिया जाना चाहिए। मानवीय, सांस्कृतिक, मूल्यों, मानको तथा मान्यताओ में आई गिरावट को दूर कर पर्यावरण को प्राकृतिक व सामाजिक संरचना की गुणवत्ता बनाने पर बल देना चाहिए। राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक संस्थाए पर्यावरण संरक्षण व

प्रदूषण नियंत्रण के लिए प्रयंत्नशील है। पर्यावरण शिक्षा पर यूनेस्को ने संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (1977) द्वारा मुख्य रूप से यही सुझाव दिया कि पर्यावरण के भौतिक, रासायनिक, जैविक व भौगोलिक स्वरूप को उसके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं मानवीय पक्ष से अलग नहीं किया जा सकता।

पर्यावरण संकट पर चिंतन विचार विमर्श के पश्चात पर्यावरण शिक्षा को इस समस्या के समाधान हेतु सशक्त यंत्र माना गया है। जन समुदाय में पर्यावरण चेतना का विकास शिक्षा के सभी स्तरों पर औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली द्वारा किया जाना संभव है। मानव मूल्यों को प्राकृतिक संरक्षण से जोड़कर ही पर्यावरण को बचाने के लिए भावी पीढ़ी तैयार कर सकते हैं। भारत में पर्यावरण जनजागृति के लिए बड़े पैमाने पर कार्यक्रम, आंदोलन, पुरस्कार दिवस, कल्याण बोर्ड, फैलोशिप आदि के रूप में पर्यावरण संबंधी जन जागरूकता लाने का सतत प्रयास जारी है, जिसमें भारत को अच्छे एवं स्वस्थ पर्यावरण के रूप में विकसित किया जा सके। पर्यावरण जागरूकता के माध्यम से आम जन को जैव विविधता के संरक्षण, जल संसाधनों के उपयोग, खाद्य सुरक्षा, खनिज संसाधनों की सुरक्षा, वन विनाश रोकने के उपाय, भू–क्षरण, मरुस्थलीकरण, सूखे आदि से बचाव, औद्योगिक प्रदूषण का निवारण जैसे– पर्यावरण से जुड़े पक्षों की जानकारी दी जाती है व उन्हें स्वच्छ पर्यावरण के लिए प्रेरित किया जाता है।

वास्तव मे पर्यावरण संरक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य होता है प्राकृतिक संसाधनो का इस तरह समुचित उपयोग, परीक्षण तथा प्रबंध किया जाए ताकि मानव द्वारा विवेक पूर्ण उपयोग के लिए सदैव सुलभ हो सके और पारिस्थिकीय संतुलन बना रहे। पर्यावरण संरक्षण के बिना स्वस्थ्य समाज का निर्माण असंभव है तथा स्वस्थ समाज का निर्माण तभी हो सकता है जब मानव को स्वस्थ व संतुलित वातावरण मिले। आदर्श, स्वर्णिम व विकसित देश के स्वपन को पूरा किया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण के अभाव में आदर्श व विकसित वैश्विक समाज की कल्पना व्यर्थ है। पर्यावरण संरक्षण में विद्यालय महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। शिक्षक अपने छात्रों को पर्यावरण संरक्षण के प्रति उत्तरदातित्व समझाने में सक्षम हैं। विद्यालय क्रियाओं में छात्रों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता लाई जा सकती है।

पर्यावरण की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए योजनाबद्ध सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है। अपने वातावरण का संतुलन बिगाड़े बिना प्राकृतिक संसाधनों को समुचित व संतुलित ढंग से उपयोग करते हुए सतत व टिकाऊ विकास होना चाहिए। विभिन्न आंदोलनों के परिणाम स्वरुप पर्यावरण के प्रति आम जनता मे जागरूकता पैदा हुई है। मानवीय मूल्य और पर्यावरण संरक्षण को एक दूसरे से संबंधित करना आवश्यक है। पर्यावरण संरक्षित है तो जीवन सुरक्षित है। और इसे सुरक्षित रखना हमारा नैतिक, सामाजिक व धार्मिक कर्तव्य है। पर्यावरण संरक्षण के द्वारा ही हम जीवन की निरंतरता को बनाए रख सकते हैं।

संदर्भ

1. *पर्यावरण विज्ञान – तिवारी व जाधव, आई.के. इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 2009 पृ. 511–520.*
2. *शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार – माथुर एस0 एस0, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, 2010 पृ. 49–52*
3. *पर्यावरण शिक्षा – भटनागर व भटनागर, आर0 लाल0 बुक डिपो, मेरठ पृ. 50–200*
4. *एनवायरमेंटल एजुकेशन – शर्मा आर0पी0, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ*
5. *शिक्षा के सामान्य सिद्धांत– त्यागी व पाठक, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, पृ. 552–577*

पर्यावरण संरक्षण में मानवीय मूल्यों की भूमिका : भारतीय परिवेश में

डॉ. अरविन्द कुमार[1], मौ. आजम[2]
[1]असि. प्रो. बी.एड. विभाग
[2]बी.एड. प्रथम वर्ष
रा. रजा पी.जी. कॉलेज, रामपुर।

हम अपने चारों ओर ईश्वर के बनाए इस पर्यावरण को देखकर आनंदित हो जाते हैं। पर्यावरण की गोद में ये महकते गुल, बढ़ते पेड़–पौधे और चहकती चिड़ियाँ नजर आती हैं। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है जिसको सामान्य में अर्थ इस प्रकृति के द्वारा प्रदान किया जाता है। हम भारतीयों का प्राचीन काल से ही जीव–जंतुओं से विशेष लगाव रहा है। हमारे समाज में पेड़–पौधों तथा जानवरों को धर्म से जोड़ कर उनकी पूजा की जाती है। जिस प्रकार हमें अपना जीवन व्यतीत करने के लिए मानवीय मूल्यों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पर्यावरण के भी अपने आंतरिक मूल्य होते हैं। लेकिन मानव अपनी जिज्ञासा और नई खोजों की अभिलाषा में पर्यावरण को नुकसान पहुंचाता रहा है। अपनी पुस्तक "द हिंद स्वराज" में गांधी जी ने कहा था कि नई खोजों से उत्पन्न उत्पाद और सेवाएं मानवता के लिए ही खतरा है। आज हम पर्यावरण के बारे में केवल गांधी जयंती, पर्यावरण दिवस, भाषण–प्रतियोगिताओं तथा संगोष्ठियों में ही बात करते नजर आते हैं। जबकि हमारी संस्कृति में हमारे मौलिक, नैतिक, संवैधानिक तथा मानवीय मूल्य तो हमें पर्यावरण को स्वच्छ रखने और अगली पीढ़ीके लिए संरक्षित करने के लिए प्रेरित करते हैं।

संविधान का अनुच्छेद 48, सरकार को पर्यावरण संरक्षण के लिए निर्देश देता है तो अनुच्छेद 51, (G) हम भारतीय नागरिकों को पर्यावरण संरक्षण के प्रति हमारा कर्तव्य बताता है। हमारी संस्कृति में जगत के सभी प्राणियों के सुखी होने की बात कही गई है। इसको हम इस श्लोक के द्वारा समझ सकते हैं

"सर्वेभवंतुसुखिनः,सर्वेसन्तुनिरामया।"

हमारा देश एक विकासशील देश है परिणाम स्वरूप औद्योगीकरण के चलते हमारे यहां भी भारी मात्रा में प्रदूषण बढ़ा है। इस पर्यावरण प्रदूषण का जिम्मेदार केवल औद्योगिकीकरण को

नहीं ठहराया जा सकता बल्कि हमारे द्वारा कृत अन्य कारक भी इसमें शामिल हैं, जैंसे पॉलिथीन का प्रयोग करना, पेड़ों को काटना, कीटनाशकों तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करना आदि। राष्ट्र के राज्यों में प्रदूषण को हम निम्न आंकड़ों के द्वारा समझ सकते हैं—

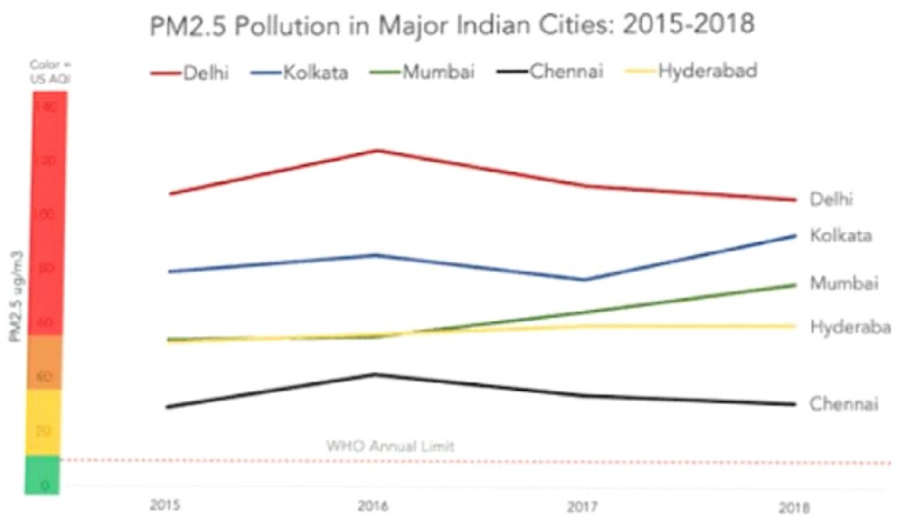

Data: US Embassy and consulates

वास्तव में प्राचीन मानव और प्रकृति के मध्य एक संबंध था जिसमें वह लोग एक डर के साथ रहते थे। वे सभी पर्यावरण का सम्मान करते थे लेकिन जैसे–जैसे मानव ने विकास किया वह पर्यावरण के साथ खेलने लगा। पर्यावरण के संसाधनों का दोहन करने लगा। गांधीजी ने विभिन्न देशों के औद्योगिक विकास एवं आधुनिक समाज के द्वारा पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को देखते हुए कहा था कि—

"प्रकृति हमारी जरूरतों को पूरा कर सकती है किंतु हमारे लालचों को नहीं।"

आज पर्यावरण प्रदूषण के बढ़ते स्तर के लिए विकासशील राष्ट्रों को जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। लेकिन सच्चाई तो यह है कि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण दोनों एक ही सिक्के के पहलू हैं। पर्यावरण प्रदूषण से संबंधित विश्व स्वास्थ्य संगठन ने जो आंकड़ा प्रस्तुत किया है वह निम्न है—

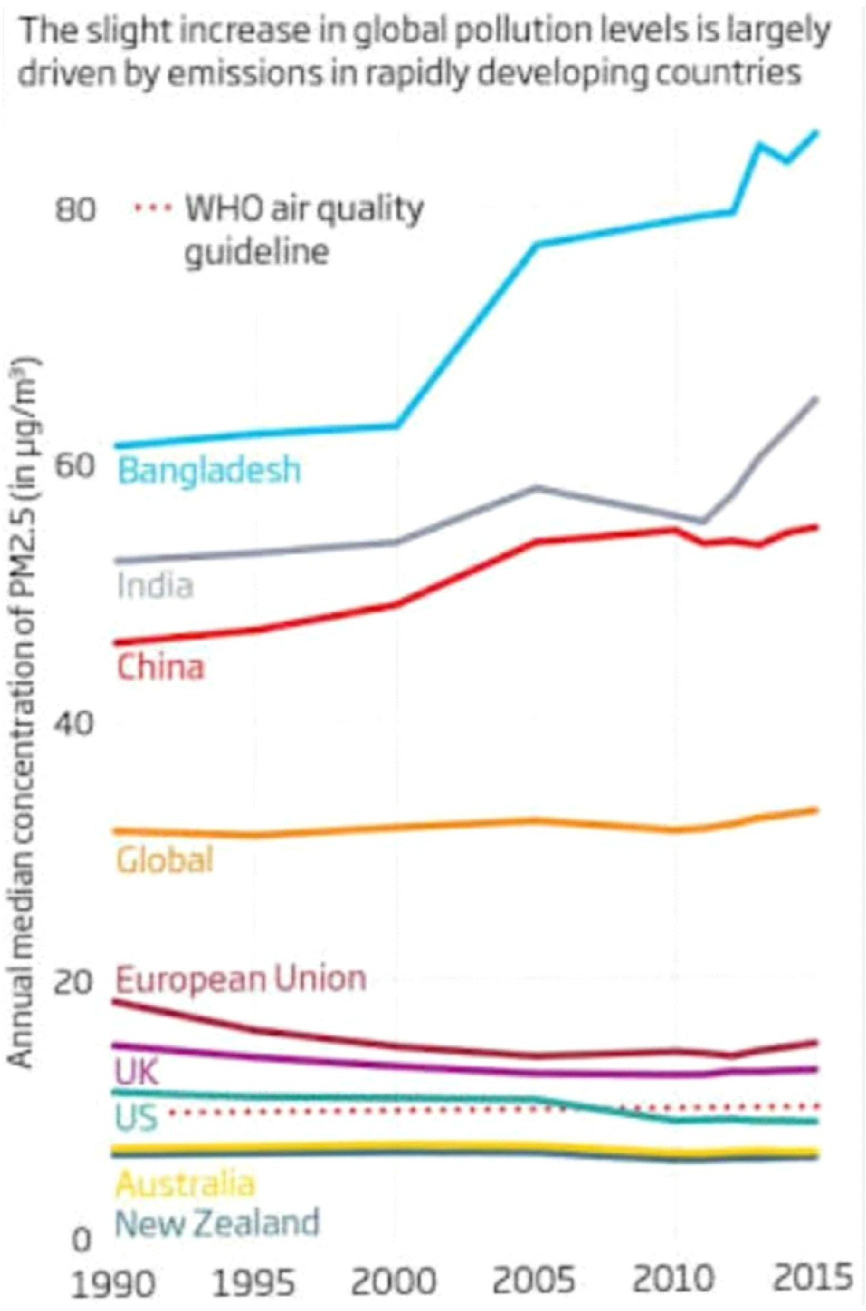

Source: shadocketal

उपरोक्त आंकड़ों के आधार परहम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि पर्यावरण को विकासशील राष्ट्रों ने विकसित राष्ट्रों से कहीं अधिक प्रदूषित किया है, अथवा कर रहे हैं। लेकिन सुख, सुविधाएं भोग रहे विकसित राष्ट्र इस बहाने विकासशील राष्ट्रों से उनका अधिकार नहीं छीन सकते हैं। विकसित राष्ट्रों को पर्यावरण के प्रति अपने कर्तव्य ईमानदारी से पालन करना चाहिए।

आज हमारे सामने ग्लोबलवार्मिंग, ग्लेशियरों का पिघलना, सुनामी, बाढ़ों का आना, वर्षा की कमी तथा भूमि अपरदन आदि बहुत सारी ऐसी समस्याएं हैं जो विश्व के विभिन्न भागों अथवा संपूर्ण विश्व को प्रभावित कर रही हैं। ग्लोबलवार्मिंग का ज्वलंत उदाहरण ऑस्ट्रेलियाई वनों में लगी आग है, जिसके कारण लाखों से अधिक जीव–जन्तुओं की मृत्यु हुई है। हम प्रत्येक वर्ष अपनी राष्ट्रीय राजधानी में भी वायु प्रदूषण का प्रकोप देखते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार 1888 ई0 से 1988 ई0 तक पृथ्वी का तापमान 0.6 से 1.2 डिग्री तक बढ़ गया है। यदि विश्व में कार्बन उत्सर्जन इसी वृद्धि से हुआ तो ताप में अधिक तीव्रता के साथ वृद्धि होगी।

वर्तमान समय में हम केवल "GO GREEN" अथवा "बंजर धरती की यही पुकार, पेड़ लगाकर करो श्रंगार" जैसे नारों तक ही सीमित दिखते हैं परंतु हमारे राष्ट्र के अनेक ऐसे महान व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने पर्यावरण संरक्षण में अहम भूमिका निभाई है।

- **महात्मा गांधी**: राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन एवं दर्शन ने भारत के पर्यावरण संबंधी आंदोलनों को केवल दिशा दी अपितु सकारात्मक रूप से प्रभावित भी किया। आपके पर्यावरणीय मूल्यों से ही प्रेरित होकर चंडी प्रसाद भट्ट, सुंदरलाल बहुगुणा एवं बाबा आम्टे ने विभिन्न पर्यावरणीय आंदोलन चलाये।
- **राजेंद्र सिंह**: आपको भारत का जल पुरुष भी कहा जाता है। जल संरक्षण में आपका योगदान उल्लेखनीय है। राजेंद्र सिंह को मैग्सेसे अवार्ड एवं स्टॉक होम वाटर प्राइज भी मिले हैं। स्टॉक होम वाटर प्राइज को नोबेल वाटर प्राइज के नाम से भी जाना जाता है।
- **सलीम अली**: सलीम अली को "भारत का बर्डमैन" के नाम से जाना जाता है। सलीम अली एक पक्षी वैज्ञानिक और प्रकृतिवेत्ता थे। सर्वप्रथम आप ने ही पक्षियों का व्यवस्थित सर्वे भी करवाया था।

पर्यावरण संरक्षण, मानवीय मूल्य तथा आवश्यकता

मनुष्य को प्रकृति के साथ सद्भावना से रहना चाहिए क्योंकि प्राकृतिक परितंत्रों के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए स्वांगीकरण, पुनर्चक्रण जैसी प्रक्रियाओं का संतुलित होना आवश्यक है। हम यदि अपनी भावीपीढ़ियों को एक स्वच्छ पर्यावरण देना चाहते हैं तो हमें पर्यावरण के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करना ही होगा। इसीलिए हमें चाहिए कि हम आर्थिक विकास के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण पर भी ध्यान दें।

मानवीय मूल्यों की पर्यावरण संरक्षण में अहम भूमिका होती है। ये मूल्य ही हमें पर्यावरण के बारे में सोचने पर मजबूर करते हैं। मानवीय मूल्यों के कारण ही हम यह सोचने को बाध्य होते हैं कि–

- क्या केवल दुनिया में इंसान ही महत्वपूर्ण हैं?
- क्या हमारी पर्यावरण के प्रति भी कोई जिम्मेदारी होती है?
- क्या हमें पृथ्वी जगत के अन्य जीवों की रक्षा के बारे में भी सोचना चाहिए?

मानव, पर्यावरण की रक्षा करने वाला मैनेजर है। हमें मानवीय मूल्यों का पालन करते हुए अपने पर्यावरण को संरक्षित करना चाहिए। अतः हम अपनी नैतिक जिम्मेदारी का वहन करते हुए पर्यावरण संरक्षण में अहम भूमिका अदा करें।

पर्यावरण तथा मानव जीवन की आवश्यकताओं को हम निम्न बिंदुओं के आधार पर समझ सकते हैं–

- मानव अपनी उत्तरजीविता के लिए अन्य जीवों पर निर्भर होता है।
- हमारे ग्रह के बारे में हम बहुत कम जानते हैं।
- मानव के अस्तित्व की सारी वस्तुएं पर्यावरण से ही मिलती हैं।

जिस प्रकार यह पृथ्वी हमारा घर है उसी प्रकार यह पृथ्वी अन्य प्राणियों का भी घर है। अतः यह हमारा कर्तव्य बनता है कि हम अपनी संस्कृति में विद्यमान मूल्यों "जियो और जीने दो" को चरित्रार्थ करें। हमें अपने बच्चों के अंदर पर्यावरण के प्रति आदर भाव विकसित करना होगा। इसीलिए हमें चाहिए कि अपने बच्चों के मन में बचपन से ही पर्यावरण के प्रति मानवीय मूल्यों को उत्पन्न करें। हमारे मानवीय मूल्यों में पर्यावरण का बहुत अधिक महत्व है। अपने मानवीय मूल्यों तथा संस्कृति में पर्यावरण के महत्व को जानने के लिए इस कविता के अर्थ को समझते हैं जिसमें कहा गया है कि–

"आकाश पिता के समान है, पृथ्वी माता के समान है और अंतरिक्ष बेटे के समान है।"

अतः मानवीय मूल्यों की सहायता से पर्यावरण को स्वच्छ बनाकर ही मानव समाज को सशक्त बनाया जा सकता है। मानवीय मूल्य के आधार पर पर्यावरण को स्वच्छ बनाने के लिए कुछ विशेष बातें निम्नलिखित हैं–

- हमें पॉलिथीन बैगों के स्थान पर कपड़े के बैगों काप्रयोग करना चाहिए।
- अपने चारों ओर के वातावरण को स्वच्छ बनाने के लिए हमें ई–कचरा खुले में नहीं जलाना चाहिए
- दोबारा प्रयोग हो सकने वाली वस्तुओं का बे झिझक प्रयोग करना चाहिए, जैसे–बोतल, पुराने अखबार, गत्ता तथा बक्सा आदि।

- खेतों तथा अन्य खुले स्थानों पर आग जलाने से बचना चाहिए, जैंसे—पराली जलाना तथा गन्ने की पत्ती जलाना इत्यादि।
- फसलों में रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।
- विभिन्न कार्यक्रमों अथवा खुशियों के मौके पर वृक्षारोपण करना चाहिए।

ऐशो—आराम के चक्कर में बड़ी भूल कर बैठा
बादल की चाह थी और आसमान में धूल कर बैठा,
कितनी मासूम सी है ये जिंदगी हमारी
शहर में रहें और गांव भी चाहिए,
बस बैठे रहें ऊंची इमारतों में हम
पेड़ों को काटें और फिर छाँव भी चाहिए।।

संदर्भ

1. *वृहदारण्यक उपनिषदसे लिया गया श्लोक https%//hi-quora-com*
2. *भारतीय शहरों में प्रदूषण डाटा यू.एस. एंबेसी एंड कंसलेट्स 2015—18*
3. *पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, दृष्टि प्रकाशन,पाँचवा संस्करण, फरवरी—2019, पेज—111*
4. *विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी किया गयाएक आँकड़ा*
5. *इंटरनेट द्वारा प्राप्त पृथ्वी के बढ़ते तापमान को बताने वाली नासा की एक रिपोर्ट*
6. *https://www.yourquote.in*

विपश्यना एवं प्रेक्षा की तनाव प्रबंधन में भूमिका-एक समीक्षात्मक अध्ययन।

अशोक कुमार यादव, सुनील कुमार श्रीवास
शोधार्थी, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना, म.प्र.।

वर्तमान समय की जीवन–शैली में बहुत परिवर्तन आए हैं। आधुनिकता की चकाचौध ने मनुष्य को अत्याधिक भौतिकवादी बना दिया है। परिणामतः उसके पास काम अधिक और समय कम रह गया है। मानसिक तनाव का स्तर दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। भारत भी इससे अछूता नहीं रहा है। पश्चिम के देशों की स्थिति तो और भी अधिक बिगड़ती जा रही है। आधुनिक सुख–सुविधाओं की प्राप्ति के कारण वहाँ के लोगों की नींद भी प्रभावित हो चुकी है। पश्चिम के कई देशों में लोगों को प्रतिदिन 'विश्रामकारी दवाएँ' लेकर सोना पड़ता है।

अब प्रश्न आता है कि क्या इस स्थिति से छुटकारा पाने का कोई तो उपाय होगा? जबाव है– हाँ। 'विपश्यना एवं प्रेक्षा तनाव प्रबंधन में भूमिका–एक समीक्षात्मक अध्ययन' नामक दार्शनिक–साहित्यक शोधका उद्देश्य जनमानस को भारत की इन दोनों प्राचीन ध्यान पद्धतियों की जानकारी से अवगत करना है, फलतः लोग इनकी विधियों को सीखकर लाभांवित हो सकें। संपूर्ण (शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक) स्वास्थ्य प्राप्त कर सकें। राग, द्वेष और मोह से विकृत हुए चित्त को निर्मल बना सकें। दैनिक जीवन के तनाव को दूर करके सुख एवं शांति प्राप्त कर सकें। अहंभाव के बंधनों से उन्मुक्त हो सकें, एक स्वस्थ–सुखी समाज का स्वस्थ–सुखी सदस्य बन सकें। आत्ममंगल और सर्वमंगल की भावनाओं से परिपूर्ण होकर अपना जीवन सुधार सकें।

प्रस्तावना

भारत ऋषियों–मुनियों, संतों–योगियों, अरिहंतों–ज्ञानियों का देश। भारत में ऐसे–ऐसे महापुरुषों ने जन्म लिया, जिन्होंने 'ऋत' का अनुसंधान किया और ऋषि कहलाए। ऋषि–मनीषियों ने तप और साधना के द्वारा अन्तर्मन की गहराईयों में जाकर चित्त में संकलित भव–संस्कारों का निरोध करके आंतरिक निर्मलता को प्राप्त किया।

जहां तक भारतीय अध्यात्म परंपरा की प्राचीनता का प्रश्न है, तो यह पूर्व वैदिक काल से ही चली आ रही है। इसका ऐतिहासिक प्रमाण खुदाई के समय जो मूर्तियां आदि प्राप्त हुई हैं, उनमें ध्यानमुद्रा में योगियों के चिह्न पाए गए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही ध्यान जीवन–शैली का एक अभिन्न अंग रहा है।

वैदिक और श्रमण दोनों ही परंपराओं में साधना की दृष्टि से ध्यान का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भगवान महावीर और भगवान बुद्ध से पहले भी ऐसे कई आचार्य हुए, जो ध्यान की उच्च अवस्थाओं के जानकार थे। ये आचार्य अपने–अपने तरीके से जनमानस को ध्यान साधना का अभ्यास करवाते थे।

स्वयं भगवान बुद्ध ने साधना–काल के प्रारंभ में आचार्य अलारकलाम से सातवां ध्यान सीखा। उससे उन्हें ध्यानसुख मिला परंतु नितांत मुक्त अवस्था प्राप्त नहीं हुई। श्रमण परंपरा के एक और आचार्य उद्दकरामपुत्त के पास जाकर उनसे आठवां ध्यान सीखा। परंतु उससे भी लक्ष्य प्राप्ति नहीं हुई। तब छहः वर्षों तक देह–दंडन की कठिन दुष्करचर्या की। वह भी विफल रही। तब स्वयं खोज करते हुए विपश्यना ध्यान विधि को ढूंढ़ निकाला। इसके द्वारा स्वयं भवमुक्त हुए, सम्यक संबुद्ध बने।

भगवान महावीर और भगवान बुद्ध को जो ज्ञान प्राप्त हुआ वह उनकी ध्यान साधना का परिणाम ही था। मानव मन को स्वभावतः चंचल माना गया है। उत्तराध्ययन सूत्र में मन को दुष्ट–अश्व की संज्ञा दी गई है, जो कुमार्ग में भागता है। गीता में मन को चंचल बताते हुए कहा गया है कि उसको निगृहीत करना वायु के रोकने के समान अति कठिन है। पातंजल योगसूत्र में चित्त की वृत्तियों के निरोध का वर्णन किया गया है। चंचल मन में विकल्प उठते रहते हैं परिणामतः अशांति का जन्म होता है। यह अशांति ही चेतना में तनाव की स्थिति पैदा करती है। चित्त की यह तनावपूर्ण स्थिति ही दुख है। इसी दुख से विमुक्ति पाना समग्र आध्यात्मिक साधना पद्धतियों का मूलभूत लक्ष्य है। इसे ही निवार्ण या मुक्ति कहा गया है।

साहित्यिक अवलोकन

विपश्यना भारत की एक प्राचीन ध्यान पद्धति हैं। इसके आधारभूत स्रोतों का उल्लेख त्रिपिटक साहित्य में मिलता है। त्रिपिटक के अंतर्गत विनयपिटक, सुत्तपिटक व अभिधम्मपिटक शामिल है। त्रिपिटक की रचना भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण के बाद प्रथम संगति में हुई थी। मूल बुद्धवाणी पाली भाषा उल्लेखित है।

निर्वाण प्राप्ति के लिए दो साधनों से सम्पन्न होने का विशेष उल्लेख किया है। (1) पहला साधन है शील शुद्धि (सत्कर्मों के अनुष्ठान से नैतिक शुद्धि) तथा (2) दूसरा साधन है चित्त–विशुद्धि (चित्त की शुद्धता)। शील–विशुद्धि का प्रतिपादन बुद्ध की शिक्षाओं में पाया जाता है, परंतु आचार्य बुद्धघोष के द्वारा अन्तेवासिक (विद्यार्थियों को मौखिक रूप से दिए जाने के कारण) चित्त–विशुद्धि का विवेचन बहुत ही कम ग्रंथों में किया गया है। 'सुत्तपिटक' के अनेक सुत्तों में भगवान बुद्ध ने समाधि की शिक्षा दी है। आचार्य बुद्धघोष का 'विसुद्धिमग्ग' इस विषय का सबसे सुंदर प्रामाणिक तथा उपादेय ग्रंथ है जिसमें ध्यानयोग का विस्तृत तथा विशद विवेचन है। विसुद्धिमग्ग में शील, समाधि और प्रज्ञा का वर्णन उपलब्ध है। शील के द्वारा अकुशल कर्म दूर हो जाते हैं। चित्त के एकाग्र हो जाने से तृष्णा और वासनाएं नष्ट हो जाती है।

विपश्यना भारत की एक प्राचीन ध्यान पद्धति है। 2600 वर्ष पूर्व भगवान बुद्ध ने इस विद्या को पुनः खोज निकाला था। 528 ई॰ पूर्व में बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात भगवान बुद्ध ने अपने जीवन के अगले 45 वर्षों तक सर्वसाधारण जन को दुख से विमुक्त होने की शिक्षा सिखाई। विपश्यना उनके संपूर्ण जीवन की शिक्षाओं का सार है। भगवान बुद्ध की शिक्षाओ को 'धम्म' कहा गया।

पांच शताब्दियों तक विपश्यना भारत के लोगों का जनकल्याण करती रही। 373–236 ई. पूर्व में सम्राट अशोक ने भारत को एक अंखड़ राष्ट्र के रूप में स्थापित किया। जिसे भारत का 'स्वर्णिम युग' कहा जाता है, क्योंकि उस समय भारत में शांति और समृद्धि दोनों में एक सम्पन्न राष्ट्र था। अशोक ने अपने धर्मदूतों को भगवान बुद्ध की शिक्षा (सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक) का प्रचार–प्रसार करने के लिए पड़ोसी देशों में भेजा, जिनमें आज का वर्मा (म्यांमार) भी सम्मिलित है। भगवान बुद्ध कि महापरिनिर्वाण कि 500 वर्षों के बाद विपश्यना का अभ्यास भारत से विलुप्त हो गया। परंतु सौभाग्य से पड़ोसी देश वर्मा (म्यांमार) में गुरु–शिष्य परंपरा के द्वारा विपश्यना का अभ्यास अपने शुद्ध मौलिक रूप में अब तक होता रहा।

वर्तमान समय में विपश्यना का भारत में पुनः जागरण होकर भारत तथा विश्व के अन्य देशों में इसे विधिवत रूप से सिखाया जाता है। इसका श्रेय विपश्यनाचार्य पद्मभूषण श्री सत्यनारायण गोयनका को जाता है, जिन्होंने सन् 1969 में भारत में विपश्यना के ध्यान शिवरों की शुरूआत की। सन् 1974 में विपश्यना विश्व विद्यापीठ की स्थापना की नींव इगतपुरी, महाराष्ट्र में रखी गई। अक्टूवर 1976 में, नियमित रूप से प्रथम विपश्यना शिविर की शुरूआत हुई। सन् 1981 में विपश्यना के सैद्धांतिक पक्ष के अनुसंधान के लिए विपश्यना विशोधन विन्यास की स्थापना की गई।

जैन ध्यान परंपरा के आधारभूत स्रोतों का उल्लेख उत्तराध्ययन तथा आचारांग–सूत्र में मिलता है। भगवान महावीर के उपरांत कई जैन–आगमों में भी कायोत्सर्ग का उल्लेख किया गया है। मूल वाणी प्राकृत भाषा में है।

शब्द शाश्वत नहीं होता अर्थ शाश्वत होता है। शब्द बदलते रहते हैं, उसके लिए समय–समय पर नए शब्दों का सृजन होता है और भाषा में परिवर्तन रहता है किन्तु तात्पर्य कभी नहीं बदलता।

प्रश्न है–प्रेक्षा शब्द कितना पुराना है? यह भगवान महावीर जितना पुराना तो है ही। किन्तु अर्थ की दृष्टि से विचार करें तो भगवान् ऋषभदेव तक पहुंच जाते हैं। जिन्होंने आत्मवाद का प्रवर्तन किया, योग–साधना का मार्ग बताया। कहा गया है–'आदिनाथ नमोस्तु तस्मै, येनपदिष्टा हठयोगविद्या'।

इस प्रकार प्रेक्षा के मूल स्रोत आदिनाथ ऋषभ देव हैं। एक घटना है– ऋषभ देव के पुत्र भरत ने स्नान किया। स्नान कर शयनकक्ष में बैठे। वह आदर्श भवन था। पूरा शीशे का बना हुआ भवन था। आसन पर बैठ गए। सामने दर्पण था उसमें वे अपने आपको देख रहे हैं, अपनी प्रेक्षा

कर रहे हैं। प्रेक्षा करते–करते, अपने आप को देखते–देखते वे सम्राट से केवली (केवली ज्ञानी यानी परमज्ञानी) बन गए। यह ध्यान की परम्परा का आदि स्रोत है।

भगवान महावीर ने ध्यान की उत्कृष्ट साधना की। सोलह–सोलह दिन और रात वे ध्यान की मुद्रा में, कायोत्सर्ग की मुद्रा में खड़े रहे। वे कभी ऊर्ध्वलोक को देखते तो कभी अधोलोक को देखते और कभी मध्य लोक को देखते। जब ऊर्ध्वलोक के तत्वों को जानना होता तो ऊर्ध्वलोक की प्रेक्षा करते। जब मध्यलोक को जानना होता तो मध्यलोक की प्रेक्षा करते और जब नीचे के तत्वों को जानना होता तब नीचे के लोक की प्रेक्षा करते। उनकी प्रेक्षा अनवरत चलती रही। भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् ध्यान की साधना चलती रही और लंबे समय तक यह क्रम चला।

सैद्धांतिक एवं प्रयोगात्मक विवेचन

पाली भाषा में 'पस्सना' का अर्थ है देखना। अर्थात् खुली आखों से जो रंग, रूप, आकृति हम देखते हैं। इसमे 'वि' उपसर्ग लग जाने पर इसका अर्थ हुआ विशेष प्रकार से देखना। इस प्रकार विपस्सना शब्द का अर्थ अपने शरीर पर विशेष प्रकार से होने वाली वेदनाओं (संवेदनाओं) को क्षण प्रति क्षण जागरूकता के साथ तटस्थ भाव से देखना।

विपश्यना सत्य की साधना है। प्रत्येक क्षण सत्य में जीने का अभ्यास है। सत्य इसी क्षण का होता है। भूतकाल की यादें होती हैं। भविष्यतकाल की कामनाएं, कल्पनाएं। वास्तविकता इसी क्षण की होती है, अतः विपश्यना इसी क्षण में जीने का अभ्यास है, जिसमें भूत की कोई याद अथवा भविष्य की कोई कल्पना नहीं।

आवरण, माया, विप्रयास, भ्रम–भ्रांति–विहीन इस क्षण को जो सत्य है, जैसा भी है, उसको ठीक वैसा ही उसके सही स्वभाव को देखना–समझना ही 'विपश्यना' है। विपश्यना सम्यक दर्शन है, विपश्यना सम्यक ज्ञान है।

विपश्यना पलायन नहीं है। जीवन–विमुखता नहीं है। प्रत्यक्ष जीवन–अभिमुख होकर जीने की एक शैली है। विपश्यना खुली हवा में ठोस धरती पर कदम रखकर चलने की एक कला है। विपश्यना शुद्ध धर्म–शील को जीवन में उतारने की विधि है। विपश्यना आत्म–मंगल, सर्व–मंगल, आचार–संहिता है।

विपश्यना ध्यान साधना के तीन मूल तत्व हैं। ये हैं– शील, समाधि और प्रज्ञा। भगवान बुद्ध ने इन्हें 'अरियों अट्ठांगिको मग्गो' अर्थात आठ अंगों वाला मार्ग कहा है। शील, समाधि और प्रज्ञा का वर्णन विसुद्धिमग्ग में मिलता है। विसुद्धिमग्ग तीन भागों और तेईस परिच्छेदों में विभक्त है। पहला भाग शील स्कन्ध कहलाता है। इसमें दो परिच्छेद हैं। दूसरा भाग समाधि स्कन्ध कहलाता है। इसमे तीन से तेरह परिच्छेद हैं। तीसरा भाग प्रज्ञा स्कन्ध है इसमें चौदह से तेईस परिच्छेद हैं।

विपश्यना ध्यान की विधिः विपश्यना ध्यान सीखने के लिए यह आवश्यक है कि साधक किसी योग्यता प्राप्त आचार्य के सानिध्य में एक दस दिवसीय आवासीय साधना शिविर में भाग ले। शिविर काल में साधक को शिविर स्थल पर ही रहना होता है और बाह्य दुनिया के संपर्क से मुक्त होना होता है। साधकों को किसी प्रकार के पढ़ाई–लिखाई के कार्यों से व अन्य सांसारिक कार्यों से विरक्त रहना होता है। अपने निजी धर्मिक अनुष्ठानों तथा क्रियाकलापों को स्थगित रखना होता है। साधकों को एक ऐसी दिनचर्या से गुजरना पड़ता है जिसमें दिन में कई बार कुल मिलाकर लगभग दस घंटे तक ध्यान करना होता है। उन्हें मौन का भी पालन करना होता है अर्थात् अन्य सह–साधकों से भी बातचीत नहीं कर सकते। अपने आचार्य के साथ साधना संबंधी समस्या एवं व्यवस्थापकों के साथ दैनिक आवश्यकताओं के लिए बातचीत की जा सकती है।

विपश्यना ध्यान के तीन चरण हैः–

(1) शील (2) समाधि (3) प्रज्ञा

शीलः पहले चरण में साधक को पंचशील का पालन करना होता है, जो निम्नलिखित हैं–

- पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि। **(**प्राणियों की हिंसा से विरत रहना।)
- अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि। (चोरी से विरत रहना।)
- अब्रह्मचरिया वेरमणी सिक्खापदं समादियामि। **(**व्यभिचार से विरत रहना।)
- मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि। **(**असत्य बातों से विरत रहना।)
- सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि। **(**नशे के सेवन से विरत रहना।)

उपरोक्त पांचों शीलों का पालन प्रत्येक साधक को साधना काल में करना होता है। शील विपश्यना साधना का आधार है, साधना की नीव है। बिना शील पालन के साधक को साधना में आगे बढ़ना मुश्किल है।

समाधि (आनापान): दूसरे चरण में साधक साढ़े तीन दिनों तक अपने श्वास पर ध्यान केन्द्रित करता है। इसे 'आनापान' कहा गया है। 'आनापान' पाली भाषा के दो शब्दो आन+अपान से मिलकर बना है। जिसका शाब्दिक अर्थ है, श्वास का आना और जाना। इसे 'आनापान सति' कहा गया है। इसके अन्तर्गत साधक को अपने नैसर्गिक श्वास के आवागमन के प्रति सजग रहने का अभ्यास करना होता है। श्वास के आने व जाने की जानकारी पूरी सजगता के साथ करनी होती है। इसका अभ्यास करते–करते साधक का चंचल मन शांत, संवदेनशील एवं सूक्ष्म हो जाता है। परिणामतः साधक का मन एकाग्र होने लगता है और उसकी समाधि पुष्ट होती है।

प्रज्ञा (विपश्यना): तीसरे चरण में साधक अन्तर्मन की गहराईयों में संचित विकारों को दूर कर मन को निर्मल बनाने का प्रयत्न करता है। ध्यान का यह चरण अगले साढ़े छह दिनों तक चलता है। इसमें साधकों को कल्याणकारी विपश्यना ध्यान साधना का अभ्यास कराया जाता है। इसके अन्तर्गत साधक शरीर के विभिन्न अंगों व भागों में होने वाली वेदनाओं (संवेदनाओं) को तटस्थ भाव से देखता है। परिणामतः प्रज्ञा जागृत होती है, जो कि मन की निर्मलता में सहायक होती है। साधक अपनी प्रज्ञा को जागृत करके अपने कायिक तथा चैतसिक स्कंधों का भेदन करता है। इस दौरान साधकों को साधना संबंधी कई निर्देश दिए जाते हैं तथा प्रतिदिन प्रगति की समीक्षा की जाती है।

प्रेक्षा ध्यान का शाब्दिक अर्थ

'प्रेक्षा' शब्द ईक्ष धातु से बना है इसका अर्थ है देखना। प्र+ईक्षा=प्रेक्षा। इसका अर्थ है गहराई में उतरकर देखना। दशवैकालिक सूत्र में कहा गया है—संपिक्खए अप्पगमप्पएणं। आत्मा के द्वारा आत्मा की संप्रेक्षा करो। मन के द्वारा सूक्ष्म मन को देखो, स्थूल चेतना के द्वारा सूक्ष्म चेतना को देखो। 'देखना' ध्यान का मूल तत्व है, इसलिए इस ध्यान पद्धति का नाम प्रेक्षा ध्यान रखा गया है।

जानना और देखना चेतना का लक्षण है। आवृत चेतना में जानने और देखने की क्षमता क्षीण हो जाती है। उस क्षमता को जागृत करने का सूत्र है—जानो और देखो। भगवान महावीर ने साधना के जो सूत्र दिए हैं, उनमें जानो ओर देखो ही मुख्य हैं।

स्वयं के द्वारा स्वयं को देखो—यह अध्यात्म चेतना के जागरण का महत्वपूर्ण सूत्र है। इस सूत्र का अभ्यास हम श्वास से प्रारम्भ करते हैं। श्वास शरीर का ही एक अंग है। हम श्वास से जीते हैं इसलिए सर्वप्रथम श्वास को देखें। हम शरीर से जीते हैं, इसलिए शरीर को देखें। इन्हें देखते—देखते मन पटु हो जाता है। सूक्ष्म हो जाता है, फिर अनेक स्पंदन देखने लग जाता है। वृत्तियां या संस्कार जब उभरते हैं तब उनके स्पंदन देखने लग जाता है। वृत्तियां या संस्कार जब उभरते हो तब उनके स्पंदन स्पष्ट होने लग जाते हैं। पूरा का पूरा दोषचक्र प्रत्यक्ष होने लग जाता है।

इस तथ्य को प्रकट करते हुए आयारो (आचारांग सूत्र) में बताया गया है, 'जो क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रियता और अप्रियता आदि दोषों को अपने भीतर देख लेता है, वह जन्म, मृत्यु और दुख के समग्र चक्रव्यूह को तोड़ देता है।'

प्रेक्षा ध्यान की प्रक्रियाः

(1) कायोत्सर्ग

(2) अन्तर्यात्रा

(3) श्वास प्रेक्षा

(4) शरीर–प्रेक्षा

(5) चैतन्य–केन्द्र प्रेक्षा

ध्यान की निष्पत्तियां

मन का संतुलन– ध्यान के अभ्यास से साधक का मन एकाग्र होता है, परिणामतः मन संतुलित होता है। साधक जितना–जितना नैतिक गुणों में मजबूत होता जाएगा, उसका मन उतना–उतना समाधिस्थ होता जाएगा। एकाग्र मन कुशाग्र होता है। एकाग्रचित्त व्यक्ति के कार्य करने की क्षमता बढ़ जाती है। साधक अपने श्वास, शरीर और चित्त के प्रति पल–पल सजग रहता है। किसी भी विपरीत परिस्थिति में साधक अपने मन का संतुलन नहीं खोता है, अपितु धैर्य बनाए रखता है।

तनाव मुक्ति में सहायक– ध्यान के अभ्यास से साधक अपने दैनिक जीवन के तनावों को दूर करके मानसिक शांति प्राप्त कर सकता है। आधुनिक जीवन–शैली ने तनाव के स्तर को काफी बढ़ा दिया है। लोग तरह–तरह के शारीरिक एवं मानसिक रोगों से ग्रस्त हो रहे हैं– अवसाद, चिंता, अनिद्रा, हृदय रोग, मोटापा, उच्च रक्तचाप आदि।

राग–द्वेष से छुटकारा– जीवन में तटस्थता का भाव जितना–जितना पुष्ट होता चला जाएगा, उतना–उतना साधक राग–द्वेष के भाव से दूर होता चला जाएगा। प्रिय के प्रति राग तथा अप्रिय के प्रति द्वेष भावना की जगह समता भाव प्रबल होने लगेगा। परिणामतः भावनामयी प्रज्ञा जागृत होने लगेगी।

चित्त विशुद्धि– जैसे–जैसे साधक शरीर पर होने वाली संवेदनाओं के प्रति तटस्थ भाव विकसित करता जाता है, उसका चित्त विशुद्ध होने लगता है। चित्त की मलिनता दूर होने लगती है। मैत्री, करुणा, मुदिता एवं उपेक्षा (समता) का जागरण होने लगता है। साधक का संपूर्ण व्यक्तित्व परिवर्तित होने लगता है।

उपसंहार

मानव जीवन एक धारा–प्रवाह के समान है। मानव के जीवन काल में कभी सुख आता है, तो कभी दुख। सुख–दुख एक ही सिक्केके दो पहलू हैं। मनुष्य के मन का स्वभाव ही कुछ ऐसा बन गया है कि जब सुख आता है तो वह खुश हो जाता है, और जब दुख की शुरूआत होती है तो विचलित होने लगता है। सदियों पहले स्व–अनुसंधान के द्वारा भारत के मनिषियों ने सम्यक ज्ञान की शिक्षा का आविष्कार किया था, जिसका प्रयोग कर उन्होंने मन की एकाग्रता और निर्मलता को प्राप्त किया। परिणामतः किसी भी विपरीत परिस्थिति में मन का संतुलन बना रहता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि विपश्यना एवं प्रेक्षा दोनों ही ध्यान की उच्चकोटि की साधना पद्धतियां हैं, जिनका प्राचीनकाल से ही मानव के कल्याण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

जहां तक आधुनिक काल का प्रश्न है तो, प्रस्तुत शोध–पत्र के माध्यम से इन दोनों ध्यान पद्धतियों की तनाव प्रबंधन में उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है।

संदर्भ

1. *बौद्ध दर्शन मिमांसा, आचार्य बलदेव उपाध्याय*
2. *योगसूत्र और विसुद्धिमग्ग का तुलनात्मक अनुशीलन, डॉ॰ पिंकी भनोट*
3. *विपश्यना–आओ करके देखें, भन्ते बुद्ध कीर्ति*
4. *प्रवचन सारांश, आचार्य सत्यनारायण गोयन्का*
5. *विसुद्धिमग्ग, आचार्य बुद्धघोष*
6. *जीवन विज्ञान, प्रेक्षा ध्यान एवं योग, मुनि धर्मेश कुमार*
7. *प्रेक्षाध्यानः प्रयोग पद्धति, आचार्य महाप्रज्ञ*
8. *जैन साधना पद्धति में ध्यान योग, डा. साध्वी प्रियदर्शना*
9. *जैन योग, मुनि नथमल*
10. *श्रीमद्‌भगवत गीता*
11. *पातंजल योगसूत्र*
12. *हठयोग प्रदीपिका, स्वात्माराम*
13. *खुद्‌दकपाठ*
14. *आयारो (आचारांग सूत्र)*
15. *तत्वार्थसूत्र*
16. *दशवैकालिक सूत्र*

पर्यावरण संरक्षण एवं मानवीय मूल्य

डॉ. बबली रानी
असि. प्रो. गृह विज्ञान
झम्मन लाल पी.जी. कॉलेज, हसनपुर, अमरोहा।

मानवीय मूल्य एक अमूर्त गुण है जो किसी वस्तु में निहित होता है तथा उसके महत्व की ओर इंगित करता है। समाज एवं पर्यावरण में जो भी घटना घटित होती हैं समाज एवं पर्यावरण उनका उचित अथवा अनुचित के रूप में मूल्यांकन करता है और यह मूल्य ही वैल्यू कहलाते हैं। मूल्य निर्धारण में सामाजिक एवं पर्यावरणीय, सांस्कृतिक धरोहर का भी महत्वपूर्ण स्थान होता है। मूल्य पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं, देशकाल एवं परिस्थिति के अनुसार प्रत्येक समाज एवं राष्ट्र के पर्यावरण मूल्यों में कुछ अंतर होता है। व्यक्ति अपने सामाजिक मूल्यों के अनुरूप अपने अथवा इन्हें प्राप्त करने हेतु अग्रसर एवं प्रयत्नशील रहता है।

हमारा पर्यावरण

पर्यावरण सृष्टि का मूल जीवन तत्व है इसकी समृद्धि है पृथ्वी पर पाए जाने वाले सभी तत्व चर–अचर एवं जीव पर्यावरण की ही देन है। व्यक्ति जीवन पर्यन्त तरह–तरह के पर्यावरण से घिरा रहता है तथा उसके व्यवहार पर इनका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव निरंतर पढ़ता रहता है। पर्यावरण दों शब्दों परि + आवरण से मिलकर बना है। परि का तात्पर्य है चारों तरफ व आवरण का अर्थ है घेरा अर्थात पृथ्वी के चारों तरफ के घेरे को पर्यावरण कहते हैं। पर्यावरण शब्द समस्त परिस्थितियों की संपूर्णता है जो जीवो के जीवन को प्रभावित करती है। पर्यावरण का तात्पर्य उस परिवेश से होता है जो जीव मंडल को चारों तरफ से घेरे हुए हैं। इसके अंतर्गत वायुमंडल, स्थलमंडल तथा जलमंडल के भौतिक व रासायनिक एवं सभी तत्वों को सम्मिलित किया जाता है। हर वर्ष जैसे ही 24 जून पर्यावरण दिवस आता है संसार भर में पर्यावरण संरक्षण के लिए और कड़े हरित कानून और विनिमय बनाने की आवश्यकता तेज हो जाती है। हालांकि कानून महत्वपूर्ण है, परंतु वे पर्यावरण के संरक्षण के लिए पर्याप्त नहीं है। हमें पर्यावरण संरक्षण को अपनी नैतिक मूल्य पद्धति का भाग बनाने की आवश्यकता है।

पर्यावरण संरक्षण का महत्व

हमारे क्रियाकलाप ऐसे होने लगे हैं जो किसी भी परिस्थितिक तंत्र में उस सीमा तक गिरावट ला दें, जहां से उनकी पुनर्प्राप्ति या पुनर्स्थापना कठिन हो जाए। अतः मानव हित में पर्यावरण एवं इसकी संरचना एवं इसके अंतर्गत चलने वाली कार्यकि का ज्ञान प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक है। जो लोग देश के नीति निर्माता एवं नीति नियामक हैं, उन्हें तो पर्यावरण का

ज्ञान होना अत्यंत ही आवश्यक है अन्यथा उनके द्वारा प्रतिपादित यदि कोई एक भी नीति पर्यावरण की प्राकृतिक अवधारणा के विरुद्ध हुई तो पर्यावरण को क्षतिग्रस्त होने में अधिक समय नहीं लगेगा। प्रशासकों को पर्यावरण संरक्षण का समुचित ज्ञान, देश में स्थलीय प्रबंधन, जलिय प्रबंधन एवं वातावरण प्रबंधन में बहुत ही सहायक सिद्ध होगा। इसके अतिरिक्त जैविक सर्वेक्षणों, मौसम सर्वेक्षणों, कृषि सर्वेक्षणों, वन विज्ञान, आखेट प्रबंधन, मत्स्य पालन, पशुपालन, मृदा संरक्षण, वन्य जीवन प्रबंधन, जल प्रबंधन, नगरीकरण औद्योगीकरण एवं संपूर्ण के संबंध में क्रांतिकारी भूमिका निभाएगा।

पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता

देश के प्रत्येक जागरूक नागरिक को इसका ज्ञान होना आवश्यक है। क्योंकि इसका अध्ययन हमारे चिंतन में पर्यावरणीय परिस्थितियों को समझने की अंतर्दृष्टि विकसित करता है। सृष्टि के आरंभ से मानव जाति ने अनेक ऐसे क्रियाकलाप किए जिसने पर्यावरण में परिवर्तनकारी प्रभाव छोड़े हैं। यह प्रभाव मनुष्य में पर्यावरणीय ज्ञान के अभाव के कारण हानिकारक साबित हुए हैं, जैसे जनसंख्या विस्फोट नगरों एवं उप नगरों की स्थापना, औद्योगिकीकरण, वाहनों का बढ़ता उपयोग, प्रदूषित जल का नदियों में विसर्जन एवं अपशिष्ट पदार्थों का जल स्रोतों एवं भूमि पर निस्तारण इत्यादि। मानव समाज की अनभिज्ञता पूर्ण क्रियाकलापों का ही परिणाम है। इसलिए जीव जगत के हित में अपने पर्यावरण को सजाने संवारने में पर्यावरण विज्ञान का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है।

पर्यावरण संरक्षण एवं मानवीय मूल्य

मानवीय मूल्य का अर्थ

मूल्य एक अमूर्त गुण है जो किसी वस्तु में निहित होता है तथा उसके महत्व की ओर इंगित करता है। समाज में जो भी घटना घटित होती हैं समाज उनका उचित अथवा अनुचित के रूप में मूल्यांकन करता है और ये मूल्य ही वैल्यू कहलाते हैं। मूल्य निर्धारण में सामाजिक पर्यावरणीय एवं सांस्कृतिक धरोहर का भी महत्वपूर्ण स्थान होता है। मूल्य पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं। देशकाल और परिस्थिति के अनुसार प्रत्येक समाज एवं राष्ट्र के मूल्य में अंतर होता है। व्यक्ति अपने सामाजिक मूल्यों के अनुरूप अपने अथवा इन्हें प्राप्त करने हेतु अग्रसर एवं प्रयत्नशील रहता है।

पर्यावरण संरक्षण के मूल्यों का ह्रास

संपूर्ण संसार पर्यावरण संरक्षण के मूल्यों के ह्रास के भयंकर दौर से गुजर रहा है। वृक्षों एवं वनों का घातक कटाव एवं नई–नई बहुमंजिला इमारतों का निर्माण हो रहा है। एवं नव निर्मित सड़कों का चौड़ीकरण किया जा रहा है। जिसके लिए व्यक्तियों को अपने मूल्य भुलाकर वृक्षों का कटाव बहुत तेजी से, बहुत बड़े पैमाने पर हो रहा है और नए वृक्ष नहीं लगाए जाते, जिनसे हमारे पर्यावरण को बहुत ही खतरे का सामना करना पड़ रहा है। मूल्य एक गुण है जो किसी वस्तु में अमूर्त रूप से होता है। मूल्य बहुत महत्वपूर्ण होते हैं, वास्तव में मूल्य सामाजिक रूप से

स्वीकृत इच्छाएं और लक्ष्य ही होते हैं जो सामाजिकरण की प्रक्रिया द्वारा आत्मसात कर लिए जाते हैं।

"मूल्य वह है जो मानव इच्छाओं की संतुष्टि करें" प्रो0 अर्बन के अनुसार

"पर्यावरण संरक्षण मूल्य एक व्यवहार के वास्तविक निर्धारक हैं तथा जो विकल्पों में से लक्ष्यों व साधनों के चुनाव हेतु कसौटी का कार्य करते हैं" प्रो0 लूमिस के अनुसार

"मूल्य किसी भी समाज व्यवस्था के विभिन्न अभिविन्यासों में से एक का चयन मानदंड है"

उपयुक्त परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मूल्य समाज के द्वारा स्वीकृत होते हैं। वास्तव में मूल्य समाज के आदर्श होते हैं जो मानव के दैनिक जीवन के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। यह मूल्य हैं जो पर्यावरण संरक्षण, प्रजातंत्र का भाव, समाजवाद, न्याय, धर्मनिरपेक्षता, सहिष्णुता, व्यक्ति की गरिमा, ईमानदारी, उपकार, विनम्रता, निस्वार्थता तथा मन वचन और कर्म की पवित्रता व एकता का गुण आदि हैं।

मानवीय मूल्य एवं आकांक्षाएं

मूल्य का संबंध व्यक्ति की पसंद से है जिस वस्तु को हम अधिक पसंद करते हैं उसे हम अधिक मूल्य प्रदान करते हैं और उसे प्राप्त करना चाहते हैं। इसी प्रकार की समानता आकांक्षा में है अर्थात जिस वस्तु को हम मूल्य अथवा महत्व प्रदान करते हैं, उसे किसी वस्तु की आकांक्षा करने का मतलब है कि हमारी नजर में उस वस्तु का मूल्य और महत्व है। उदाहरणार्थ—मेरी आकांक्षा 500 एकड़ भूमि का स्वामी बनने की है, स्पष्ट है कि मेरी दृष्टि में इतनी भूमि का महत्व अथवा मूल्य है, तभी तो मुझे इसकी आकांक्षा है। जिसके चलते अधिकांशतः लोग पर्यावरण में विद्यमान बनों, नदियों, तालाबों, घाटियों आदि का दोहन कर उनको विनाश की ओर ले जा रहे हैं। अर्थात मानवीय मूल्यों की अनदेखा कर रहे हैं, जिसके चलते पीने का पानी, प्राणवायु, वर्षा आदि जैसी आवश्यकतों से मानव वंचित होता जा रहा है।

पर्यावरण की सुरक्षा में सामुदायिक भागीदारी

पर्यावरण की सुरक्षा में जब तक सामुदायिक भागीदारी नहीं होगी तब तक पर्यावरण के प्रति मानवीय मूल्यों को जागृत नहीं किया जा सकता अर्थात प्रत्येक समुदाय को पर्यावरण को अपने नैतिक मूल्य के रूप में अपनाना ही होगा।

पर्यावरण अनुकूलन वस्तुओं का उपयोग

पर्यावरण हित में मानवीय मूल्यों को जनजीवन के साथ तथा अनुकूल वस्तु का ही उपयोग करने की सोच विकसित करनी होगी तभी हमारे मानवीय मूल्य सार्थक सिद्ध होंगे।

जानवरों को अनावश्यक हानी न पहुंचाना

पशु—पक्षी भी हमारे पर्यावरण का मुख्य हिस्सा है, जो खाद श्रंखला व खाद जाल बनाए रखकर इस पर्यावरण को स्थिर रखते हैं, तो उनको अनावश्यक रूप से हानि ना पहुंचाई जाए। जैसे—अनियंत्रित पशु कटान, सुंदर चमड़ा, हाथी दांत, मोर पंख, सींघ आदि पर प्रतिबंध हो, नहीं तो प्रत्यक्ष व परोक्ष मानवीय मूल्य भी प्रभावित होंगे।

पारंपरिक मूल्य प्रणालियों का संरक्षण

हमारे देश में प्राचीन समय से ही प्रकृति पूजा जैसे नदियों, वृक्षों, पशु–पक्षी, समुद्र, सूर्य, चंद्रमा, आदि को विशेष महत्व दिया जाता है जिसके चलते उन्हें धार्मिक परंपराओं में सम्मिलित किया गया है। जिससे कि पर्यावरण के मूल्य स्थिर बने रहें, व उनका ह्रास न हो तथा अग्रिम पीढ़ियो में भी यह मूल्य स्थानांतरित हो सके।

उद्देश्य

पर्यावरण संरक्षण एवं मानवीय मूल्यों से निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है।

- पर्यावरण संरक्षण के लिए पेड़–पौधे एवं जीव–जंतुओं का महत्व एवं उपयोगिता के प्रति जागरूक करना।
- शैक्षणिक कार्यक्रमों के द्वारा पर्यावरणीय अध्ययन की वर्तमान स्थिति का आंकलन करना।
- पर्यावरण संरक्षण को पाठ्यक्रम के उन्यन में रूपरेखा तैयार करना।
- शासकीय और अशासकीय स्तर पर पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने वाले लोगों को प्रोत्साहन हेतु वास्तविक और सही जानकारी उपलब्ध कराना।

सुझाव

- पर्यावरण जागरूकता बढ़ाने के लिए स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा किए गए प्रयासों को विषय बनाया जा सकता है।
- टीवी रेडियो पत्रिका आदि के द्वारा पर्यावरण संरक्षण जागरूकता मूल्य बढ़ाने में योगदान के विषय के रूप में चुना जा सकता है।

निष्कर्ष

समय रहते पर्यावरण मूल्यों की ओर दृष्टिगोचर नहीं हुए तो भावी पीढ़ियों को उचित और स्वच्छ पर्यावरण नहीं मिल पाएगा। जैसे चीन का प्रदूषण, जनसंख्या, इसराइल, कतर, ईरान, का जल संकट और जारडन जैसे हाल होगा। अतः हम कह सकते हैं कि मनुष्य के अस्तित्व में भौतिक सामाजिक तथा मानसिक रूप से पर्यावरण संरक्षण को उन्नत बनाने के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है वह पर्यावरण संरक्षण एवं मानवीय मूल्य के द्वारा प्रकृति से जुड़े हैं। पर्यावरण का संरक्षण हम सबका परम कर्तव्य है अर्थात उतना ही दोहन करना चाहिए जिससे उसका संतुलन ना बिगड़े यदि मानव अब भी नहीं चेता तो हमारा विनाश निश्चित है।

भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्य

भुवाल चौहान
शोध छात्र
समता पीजी कॉलेज, सादात, गाजीपुर।

भारत की संस्कृति ने संपूर्ण विश्व को प्रभावित किया है क्योंकि इसकी दृष्टि अत्यंत व्यापक है। ईसाई संस्कृति केवल ईशा के चारों ओर घूमती है, इस्लामी संस्कृति मोहम्मद साहब के और आधुनिक साम्यवादी संस्कृति कार्ल मार्क्स के चारों ओर घूमती है लेकिन भारत की संस्कृति के साथ ऐसा नहीं है। इस संस्कृति को किसी एक व्यक्ति अथवा किसी एक जाति से निर्मित नहीं किया। न जाने कितने अवतारों, कितने ऋषि–मुनियों, कितने तत्ववेत्ताओं, कितने दार्शनिकों, कितने साहित्यकारों, कितने वैज्ञानिकों, कितने संतों और कितने भक्तों आदि ने इसका निर्माण ही नहीं, बल्कि विकास किया है।

इसका विकास भिन्न–भिन्न विद्वानों, भिन्न–भिन्न जातियों, भिन्न–भिन्न भाषाओं, भिन्न–भिन्न रंग–रूपों, वेशभूषा बालों और खान–पान वालों ने मिलकर किया है। पहाड़ों जंगलों नदियों मरुस्थलों के कारण एक दूसरे से अलग रहने पर भी सांस्कृतिक दृष्टि से यहां के सब लोग एक साथ हैं। जाति और धर्म में विभिन्नता रहने पर भी सांस्कृतिक एकता है। उत्तर में केदारनाथ और बद्रीनाथ के मंदिरों में दक्षिण के पुजारियों की प्रतिष्ठा हर्षवर्धन के समय से सूर्य, शिव और बुध की संयुक्त पूजा, तुलसीदास द्वारा शैवो और वैष्णवो की मैत्री का प्रयत्न, अकबर का दीन ए इलाही और गुरु नानक के उपदेश और इसी प्रकार के न जाने कितने प्रयत्न, इस बात को सिद्ध करते हैं कि इस देश के विचारकों का केवल एक ही आदर्श रहा है कि इस देश में हर दृष्टि से एकता को स्थापित रखा जाए। भारतीय संस्कृति का सबसे बड़ा गुण है विविधता में एकता।

राधा कुमुद मुखर्जी ने लिखा है कि ''भारतवर्ष संप्रदायों और रीति–रिवाजों, धर्मो और सभ्यताओं, विश्वासों और बोलियों, जातीय प्रकारों और सामाजिक व्यवस्थाओं का एक अजायबघर है।''

इस सृष्टि में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है, जो निर्दोष हो, समय के साथ–साथ अच्छी वस्तुओं में भी दोष आ जाते हैं। भारतीय संस्कृत के साथ भी ऐसा ही हुआ। समय के साथ–साथ इसमें संकीर्णता आ गई। धर्म का अर्थ मत से लिया जाने लगा। अनेक जातियों और उसकी उपजातियां बन गई और उनमें खानपान का संबंध न रहा और न ही वैवाहिक संबंध रहे। अस्पृश्यता ने भयंकर रूप धारण किया, शूद्रों और स्त्रियों को समान अधिकार से वंचित किया गया। अनेकों रूढ़ियों और अंधविश्वासों ने जन्म लिया। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जो भारतीय संस्कृत के चार

प्रमुख कर्तव्य थे उनमें धर्म संकीर्ण हो गया और मोक्ष की ओर कोई ध्यान नहीं रहा। अर्थ और काम दो ही जीवन के लक्ष्य रह गए और उनके लिए व्यक्ति उचित अनुचित सब प्रकार के कार्य करने लगे। भारतीय संस्कृत में उक्त दोष पैदा हुए, लेकिन उन दोषों को सुधारने की भावना भी बनी रही।

राजा राममोहन राय, केशव चंद् सेन, महर्षि दयानंद सरस्वती, स्वामी श्रद्धानंद, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद और महात्मा गांधी जैसे तपस्वीयों और इतिहास पुरुषों ने हमारी संस्कृत में पैदा हुए दोषों का निवारण करने का भरसक प्रयत्न किया। इन दोषों का निवारण करने का प्रयत्न आज भी किए जा रहे हैं।

सामान्यतः किसी समाज में जिन आदर्शों को महत्व दिया जाता है और जिनसे उस समाज के व्यक्तियों का व्यवहार निर्देशित एवं नियंत्रित होता है, उन्हें उस समाज के मूल्य कहते हैं। दर्शनशास्त्र में मनुष्य के जीवन के प्रति दृष्टिकोण को मूल्य की संज्ञा दी जाती है। वेद मूलक दर्शनों के अनुसार मानव जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष है और चार्वाक तथा आजीवक दर्शनों के अनुसार भौतिक सुख भोग है। भारतीय दार्शनिकों की दृष्टि से मोक्ष और भोग दो विभिन्न मूल्य हैं तभी तो मोक्ष में विश्वास रखने वालों का व्यवहार परमार्थ केंद्रित होता है, और भोग में विश्वास रखने वालों का स्वार्थ केंद्रित रहता है। धर्म शास्त्र में नैतिक नियमों को मूल्य माना है। हम जानते हैं, कि प्रत्येक धर्म के कुछ नैतिक नियम होते हैं और मनुष्य को उनका पालन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में करना होता है।

जैसे जैन धर्म में अहिंसा को सर्व प्रमुख नैतिक नियम माना गया है, जैसे हिंदू संस्कृत में चार पुरुषार्थ माने गए हैं धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष और पांच महाव्रतों (सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य) की संस्कृति है, उसी प्रकार मुस्लिम संस्कृत में समानता और भाईचारे की संस्कृति है।

मानवीय मूल्यों को हम निम्न सूची द्वारा प्रस्तुत कर सकते हैं–

1. सत्यता (सत्य) 2. पम और सेवा भावना 3. शांति 4. अहिंसा 5. न्याय

1. **सत्यता**: यह सच है कि कोई भी झूठा व्यक्ति अधिकांश झूठे लोग स्वयं को झूठा कहलाना पसंद नहीं करते।
2. **पम और सेवा भावना**: मानव मूल के अर्थ में प्रेम का सार एक पवित्र भावना को परिलक्षित करता है।
3. **शांति**: शांति का अर्थ है, समरसता अर्थात द्वेष और संघर्ष का अभाव।
4. **अहिंसा**: अहिंसा का अर्थ हिंसा न करना। स्वार्थ और द्वेष को त्याग कर क्रोध पर विजय प्राप्त करना तथा किसी को भी किसी प्रकार का दुख न पहुंचाना।

5. **न्यायः** सुकरात व प्लेटो ने तो इसे उच्चतम मानवीय मूल्य के रूप में स्वीकार किया है। न्याय का मौलिक अर्थ है, कानून जिसके लिए सभी व्यक्ति समान हैं ।

उपरोक्त मूल्यों को हम निम्न प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं, ''किसी समाज के वे विश्वास, आदर्श, सिद्धांत, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्ड, जिन्हें समाज के व्यक्ति महत्व देते हैं और जिनसे उनका व्यवहार निर्देशित एवं नियंत्रित होता है, उस समाज एवं उसके व्यक्तियों के मूल्य कहलाते हैं।''

संदर्भ

1. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, डॉ. गिरीश पचौरी*
2. *शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत, प्रोफेसर रमन बिहारी लाल*

विधि एवं मानवीय मूल्य

चन्द्रमुखी पाल
एल.एल.एम. द्वितीय वर्ष
म.ज्यो.फु. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

प्रस्तावना

आज के वर्तमान और आधुनिकीकरण परिक्षेत्र को विकसित व विकासशील कहा जा सकता है, किन्तु जिस भारतीय समाज को सभ्य समाज रूपी भवन के नाम से जाना जाता था, जो संस्कृति, नैतिकता व सामाजिकता की दीवारों पर टिका होता है, विलुप्त सा होता जा रहा आज व्यक्तियों के बीच मानवीयता शब्द का कोई अर्थ नहीं रह गया है, केवल भारतीय संविधान द्वारा ही मानवीय मूल्यों की गारंटी दी गयी है।

भारतीय संस्कृति में मनुष्य के सामाजिक, राजनैतिक ओर धार्मिक जीवन में विशेष स्थान दिया गया है, क्योंकि मूल्यों के वास्तवीकरण का नाम ही संस्कृति है। आधुनिक समय में वैज्ञानिक तकनीकि ने जहाँ मानव को भौतिक सुख—सुविधाएँ प्रदान करने के लिए प्रत्येक क्षेत्र में अविष्कारों के ढेर लगा दिए है वहीं मानव जीवन में एक खोखलापन, असंवेदनशीलता रूपी बीज को भी उत्पन्न कर दिया है। जिसके चलते समाज व देश में मानवीय मूल्यों को असभ्य रूपी वृक्ष ने अपनी जड़ों में जकड़ लिया है। जिसके फलस्वरूप समाज देश और स्वयं के जीवन में मानव मूल्यों को तिलांजली दे दी है। मानव जीवन की सार्थकता तभी है, जब वह श्रेष्ठ भावनाएँ रखे। हम एक लोकतांत्रिक समाज का हिस्सा हैं, जहाँ पर आपसी भाई—चारे, न्याय, समान अधिकार और स्वतन्त्रता, प्रत्येक नागरिक को प्रदत्त है। संविधान में दिए गए मूल्यों की प्राप्ति से पहले हमें व्यक्ति के जीवन और समाज का भी आंकलन करना होगा तभी हम श्रेष्ठ मूल्यों को समाज में स्थापित कर सकते हैं। मूल्य, व्यक्ति की स्वयं की गरिमा की सामाजिक विरासत का एक अंग होता है। इसलिए मूल्यों की व्यवस्था मानव अस्तित्व के विभिन्न स्तरों या आयामों में व्यक्ति के अनुकूलन की प्रक्रिया का मार्गदर्शन करती है। नैतिक मूल्य व्यक्ति के जीवन के साथ—साथ समाज को भी उत्कृष्टता की तरफ अग्रसर करते हैं।[1]

इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य वर्तमान भारतीय समाज में संवैधानिक मूल्यों के प्रति जागरूक जाग्रत होकर मानवीय मूल्यों को पुर्नजीवित किया जा सके, क्योंकि भारतीय संविधान मानव समाज की व्यवस्था को नियंत्रित व व्यवस्थित करता है। जिसमें मानवीय मूल्यों की गरिमा, जीवन की आधारशीला की नींव रखी गयी है। जिसमें मानव को आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा न्याय, विश्वास, धर्म व उपासना की स्वतन्त्रता प्रदत्त की गयी है।

मानवीय मूल्य का अर्थ

मानवीय मूल्य और आचारनीति सामान्य रूप से व्यक्ति या संगठन या समाज की गुणवत्ता को परिभाषित करते है। मानवीय मूल्य वे मूल्य है, जो मनुष्य की सहजता के लिए मूलभूत है, मानवीय मूल्य सभ्य और गरिमापूर्ण समाज का सबसे महत्वपूर्ण स्तम्भ हैं। समाज या राष्ट्र की पूरी संरचयें इस स्तभ पर निर्भर करती है। यदि यह स्तभ मजबूत होगा तो समाज सभ्य और समृद्ध होगा, यदि इस स्तभ में क्षति होती है, तो सिर्फ समाज अमानवीय चरण में प्रवेश कर सकता है, मानवीय[2] मूल्यों के सूक्ष्म पहलुओं को प्रेषित करने की आवश्यकता होती है और उनको उतनी ही सावधानी से संरक्षित करने की आवश्यकता होती हैं। जैसे कि कोई माँ गर्भ की रक्षा करती है, मूल्य और आचार नीति की प्रकृति कपूर की भाँति है, अगर इन्हें ध्यान से संरक्षित न किया जाए तो वाष्पित हो जाते हैं।

संवैधानिक मूल्य क्या हैं:— इसके ऊपर संविधान की परिभाषा, एक राष्ट्र राज्य य सामाजिक समूह के मूल सिद्धान्त और कानून, जो सरकार की शक्तियों और कर्त्तव्यों का निर्धारण करते हैं और इसमें लोगों को अधिकारों की गारंटी देते है। भारतीय संविधान निश्चित रूप से एक अद्वितीय संविधान है। भारत के संविधान में जो मूल्य हैं, वे वास्तव में उल्लेखनीय हैं। संवैधानिक मूल्य वे मूल्य हैं, जो भारत के प्रत्येक नागरिक के मानवाधिकारों की रक्षा करते हैं। इसके अलावा ये सम्मान सुनिश्चित करते हैं कि भारत के किसी भी नागरिक के प्रति कोई अन्याय नहीं होना चाहिए।[3]

मानवीय मूल्यों की आवश्यकता

मानव गरिमा प्रत्येक मनुष्य जाति के लिए जम्मजात रूप में आवश्यक है और सार्वभौमिक रूप से एक मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त है। जिसमें मानव सम्मान का अधिकार भी शामिल था। संविधान में रंगभेद प्रणाली को समाप्त कर दिया और मानवीय सम्मान, समानता और मानव अधिकारों और स्वतंत्रता की उन्नति के बुनियादी मूल्यों पर स्थापित एक संप्रभु लोकतांत्रिक राज्य का गठन किया। संवैधानिक न्यायालय ने मानवीय गरिमा को मूल संवैधानिक मूल्यों में से एक माना है और अन्य मौलिक अधिकारों जैसे समानता, व्यक्ति की सुरक्षा और जीवन का अधिकारों आदि के लिए नैतिक आधार स्थापित करने के लिए, और एक सभ्य समाज के लिए, मानव गरिमा का उपयोग किया है। जो संविधान के मूल्यों को कानूनी प्रणाली के माध्यम से समाज के अस्तित्व में बनाए रखें।[4]

किसी भी इंसान के जीवन में मूल्यों का अहम योगदान रहता हैं। क्योंकि इन्हीं के आधार पर अच्छा बुरा या सही गलत की पहिचान की जाती है। इंसान के जीवन की सबसे पहली पाठशाला उसका अपना परिवार ही होता है, और परिवार समाज का एक अंग है उसके बाद उसका विद्यालय जहाँ से उसे शिक्षा हासिल होती है। परिवार, समाज और विद्यालय के अनुरूप

ही एक व्यक्ति में सामाजिक गुणों और मानव मूल्यों का विकास होता है। प्राचीन काल के भारत में पाठशालाओं में धार्मिक शिक्षा के साथ मूल्य आधारित शिक्षा भी जरूरी होती थी, लेकिन वक्त के साथ यह कम होता चला गया और आज वैश्वीकरण के इस युग में मूल्य आधारित शिक्षा की भागीदारी लगातार घटती जा रही है। सांप्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा, असहिष्णता और चोरी डकैती आदि की बढ़ती प्रवृत्ति समाज में मूल्यों के विघटन के उदाहरण हैं। जिसे केवल भारतीय संविधान प्रक्रम द्वारा ही नियंत्रित करके मानवीय मूल्यों के स्वरूप को बचाना, आवश्यकता की माँग है।[5]

मानवीय मूल्यों के लिए संवैधानिक योगदान:— विधि रूपी वृक्ष वास्तव में सम्पूर्ण मानव जाति को समान रूप से छाया रूपी समस्त अधिकार प्रदत्त करती है, दूसरे शब्दों में विधि का अस्तित्व मानव जाति से है अर्थात् मानव समुदाय, समाज व देश के प्रति विधि संरक्षक की भांति अपना योगदान देती हैं। विधि की संजीवता मानव जाति से है, इसलिए मानव जाति को भी आंतरिक संजीवता के साथ अपने मानव कर्त्तव्यों को ईमानदारी से परिपूर्ण करना चाहिए।

सह—अस्तित्व में प्रत्येक एक अपने 'त्व' सहित व्यवस्था है और समग्र व्यवस्था में भागीदारी निर्वाह करते हुए पूरकता—उपयोगिता विधि से होना देखने को मिलता है। यह भ्रमित मानव के अतिरिक्त संपूर्ण प्रकृति यथा जीव, वनस्पति तथा पदार्थ रूपों में स्पष्ट है। प्रत्येक मानव भी व्यवस्था में होना—रहना चाहता है एवं समग्र व्यवस्था में भागीदारी प्रमाणित करने के लिए उत्सुक है। यह जागृत परंपरा में ही सफल होता है न कि जीव चेतना में। प्रत्येक मानव जीवन और शरीर के संयुक्त साकार रूप में वैभव व परंपरा में है ही।

जानना—मानना ही समझदारी, पहचानना—निर्वाह करना ही ईमानदारी है, ईमानदारी पूर्वक जिम्मेदारी, भागीदारी सम्पन्न होता है। यह जीवन सहज वैभव है। जीने की कला के रूप में अखंड समाज और सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी निर्वाह करना ही मानव चेतना मूलक विधि है, आचरण है।

मानवीय मूल्यों के लिए संविधान के मार्गदशर्क मूल्य :— प्रस्तावना को भारतीय संविधान का परिचय पत्र कहा जाता है। सन् 1976 में 42वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा इसमें संशोधन किया गया था जिसमें तीन नए शब्द समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और अखंडता को जोड़ा गया था। प्रस्तावना, भारत के सभी नागरिकों के लिए न्याय, स्वतंत्रता, समानता को सुरक्षित करती है और लोगों के बीच भाई चारे को बढ़ावा देती है।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में भी कहा गया है ''हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवाद, पंथनिरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक, गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र

की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता को बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई0 को एतद द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।''

भारतीय संविधान में सभी के लिए न्याय की गारंटी के लिए प्रावधान लिखे गए है। जाति, धर्म और लिंग के आधार पर किसी के साथ भेद–भाव नहीं किया जा सकता है। सभी नागरिकों के लिए कल्याण सरकार का मुख्य उद्देश्य है, इसके अलावा, सरकार को भी विशेष रूप से समाज के वंचित वर्गों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

संविधान के मार्गदर्शक मूल्य

स्वतंत्रता :– संविधान अनुच्छेद 169 से 21 21ए, और 22 के तहत प्रत्येक नागरिक को कई स्वतंत्रतांए और स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह स्थापित किया गया है कि नागरिकों पर उनकी स्वतंत्रता को विनियमित करने के लिए कोई अनुचित प्रतिबंध नहीं लगाया जा सकता है।

अनुच्छेद 19 के तहत स्वतंत्रता का अधिकार शामिल है :– भाषण और अभिव्यकित की स्वतंत्रता का अधिकार, संघ बनाने का अधिकार, स्वतंत्र रूप से स्थानांतरित करने का अधिकार, देश के किसी भी हिस्से में निवास करें, तथा किसी भी पेशे, व्यवसाय या व्यवसाय का अभ्यास करने का अधिकार।

समानता :– संविधान कहता है कि कानून और सरकार के समक्ष सभी नागरिक समान हैं और सरकार को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जाति, धर्म और लिंग के आधार पर सामाजिक असमानताओं की पारंपरिक प्रथा को समाप्त किया जाए।

भारत के भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 से 18 के तहत समानता का अधिकार सुनिश्चित किया गया है, जो सभी व्यक्तियों को समानता के अधिकार की गारंटी देता है और धर्म, जाति, लिंग, लिंग के आधार पर किसी भी नागरिक पर किसी भी प्रकार के भेद–भाव को प्रतिबंधित करता है। जन्म स्थान।

अनुच्छेद 14 यह प्रदान करता है कि कानून के समक्ष सभी व्यक्ति समान हैं। इसका मतलब है कि सभी व्यकितयों को देश के कानूनों द्वारा समान रूप से संरक्षित किया जाएगा।

अनुच्छेद 15 कहता है कि किसी भी नागरिक के साथ उसके धर्म, जाति, लिंग, या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता हैं

अनुच्छेद 16 कहता है कि रोजगार के मामलों में राज्य किसी के साथ भेदभाव नहीं कर सकता है।

अनुच्छेद 17 भारत से अस्पृश्यता की प्रथा को समाप्त करता है। यह प्रदान करता है। कि प्रत्येक व्यक्ति को खेल के मैदानों, होटलों, दुकानों आदि सहित सभी सार्वजनिक स्थानों तक पहुंच है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 23 से 24 के तहत शोषण के खिलाफ अधिकार निहित हैं, यह भारत के प्रत्येक नागरिक को शोषण के खिलाफ मौलिक अधिकार प्रदान करता है।

संविधान का अनुच्छेद 23 किसी भी तरह के जबरन श्रम पर रोक लगाने का प्रावधान करता है और इस प्रावधान का कोई भी उल्लंघन कानून के अनुसार दंडनीय अपराध होगा।

अनुच्छेद 24 बच्चों को यह कहते हुए बचाता है कि 14 वर्ष से कम आयु के किसी भी बच्चे को किसी भी कारखाने या खानों या किसी अन्य खतरनाक रोजगार में काम करने के लिए नहीं रखा जाएगा।

भ्रातृत्व :— सभी भारतीय एक परिवार के सदस्य हैं, कोई भी नीच या श्रेष्ठ नहीं है, सभी समान है और उनके समान अधिकार और कर्तव्य है।

संप्रभुताः— भारत सरकार आंतरिक के साथ—साथ बाहरी मामलों पर कोई भी निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र है और कोई भी बाहरी शक्ति इसे निर्धारित नहीं कर सकती हैं।

समाजवादी

एक समाजवादी देश में, नागरिकों के पास संपत्ति का अधिकार है लेकिन सरकार को कानून द्वारा, सामाजिक—आर्थिक गतिविधियों को समाज में असमानताओं को कम करने के लिए इसे विनियमित करना चाहिए और इसलिए, प्रत्येक नागरिक को देश के संसाधनों को साक्षा करने का समान अधिकार है।

सामाजिक न्याय की अवधारणा को संविधान को 42 वें संशोधन द्वारा अपनाया गया था जो अदालतों को हमारे समाज में आर्थिक विषमताओं को दूर करने के प्रावधानों को बनाए रखने में सक्षम बनाता है।

धर्म निरपेक्षः— भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। सरकार का कोई आधिकारिक धर्म नहीं है और सरकार सभी धर्मो को समान रूप से मानती है। अनुच्छेद 25 से 28 प्रत्येक नागरिक के लिए 'धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार' प्रदान करता हैं। यह एक मौलिक अधिकार है जो प्रत्येक व्यक्ति को अपने धार्मिक विश्वासों और प्रथाओं द्वारा जीने की स्वतंत्रता देता है क्योंकि वे इन मान्यताओं की व्याख्या करते हैं।

सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार (अनुच्छेद 29 से 30) में कहा गया है कि सभी अल्पसंख्यक, धार्मिक या भाषाई, जिनकी अपनी एक अलग भाषा, लिपि या संस्कृति है, (और वें) अपनी भाषा को संरक्षित और विकसित करने के लिए अपने साथ स्वयं के शैक्षणिक संस्थान स्थापित कर सकते है।

सरकार की लोकतांत्रिक प्रणाली कुछ बुनियादी सिद्धांतों के अनुसार चलती है, जिन्हें सामूहिक रूप से 'नियम कानून' कहा जाता है।

सरकार के लोकतांत्रिक रूप में, देश के लोग समान राजनीतिक अधिकारों का आनंद लेते हैं, चुनाव करने और अपने प्रतिनिधियों को बदलने और उन्हें जवाबदेह बनाने के लिए चुनते हैं।

मानवीयता सहज साक्ष्य रूप में पूर्णता, स्वराज्य, स्वतंत्रता और उसकी निरंतरता को जानने, मानने, पहचानने व निर्वाह करने, कराने और करने योग्य मूल्य, चरित्र, नैतिकता रूपी विधान। मानवीयता सहज जागृति पूर्णता ही अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था पूर्वक परंपरा के रूप में अर्थात् पीढ़ी से पीढ़ी के रूप में निरंतरता को प्रमाणित करता है। यह करना, कराना, करने के लिए सहमत होना मानव में, से, के लिए मौलिक विधान है।

मानव परिभाषा के रूप में "मनाकार को सामान्य आकाँक्षा व महत्वाकाँक्षा संबंधी वस्तुओं और उपकरणों के रूप में, तन मन सहित, श्रम नियोजन पूर्वक साकार करने वाला, मनरू स्वस्थता अर्थात् सुख, शांति, संतोष, आनंद सहज अपेक्षा सहित आशावादी है।" इसे प्रमाणित करना, कराना, करने के लिए सहमत होना मानव परंपरा में, से, के लिए मौलिक विधान है।

मानव अपनी परिभाषा के अनुरूप बौद्धिक समाधान, भौतिक समृद्धि सहित अभय, सहअस्तित्व सहज स्रोत व प्रमाण है। यह मौलिक विधान है।

मानवीयतापूर्ण आचरण जो स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष, दया पूर्ण कार्य व्यवहार, संबंधों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्याँकन स्वीकृति, उभयतृप्ति, तन–मन–धन रूपी अर्थ का सदुपयोग सुरक्षा के रूप में ही मानवीयता सहज व्याख्या है। यह मानव परंपरा में मौलिक विधान है।

"मानवीयता पूर्ण आचरण, सहजता, मानव में स्वभाव गति है।" मानवीयतापूर्ण आचरण मूल्य, चरित्र, नैतिकता का अविर्भाव, अभिव्यक्ति, संप्रेषणा व प्रकाशन है। यह मौलिक विधान है।

"जागृति मानव सहज स्वीकृति है।" मानव सहज कल्पनाशीलता, कर्म स्वतंत्रता का तृप्ति बिंदु स्वानुशासन है। यह परम जागृति के रूप में प्रमाणित होता है। यह मानव परंपरा में मौलिक विधान है।

"सार्वभौम व्यवस्था व अखंड समाज, सहज वैभव है।" मानव सहज कल्पनाशीलता, कर्म स्वतंत्रता का तृप्ति बिंदु परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था में भागीदारी के रूप में प्रमाणित होता है। यह मौलिक विधान है।

"मानवीय–लक्ष्य परम जागृति के रूप में सार्वभौम है। मानवीयतापूर्ण अभिव्यक्ति, प्रकाशन सहज संप्रेषणाएँ, संपूर्ण आयाम, कोण, दिशा, परिप्रेक्ष्यों में समाधान, समृद्धि, अभय व सह अस्तित्व रूपी वैभव को प्रमाणित करता है। यह मौलिक विधान है।

"मानव बहु–आयामी अभिव्यक्ति है।" मानव सहज परंपरा में अनुसंधान, अस्तित्व मूलक मानवीयता पूर्ण अध्ययन, शिक्षा व संस्कार, आचरण व व्यवहार, व्यवस्था, संस्कृति–सभ्यता और संविधान ही सहज प्रमाण है। यही मौलिक विधान है।

मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषण (यूडीएचआर), मानव अधिकारों के इतिहास में एक मील का पत्थर दस्तावेज है। दुनिया के सभी क्षेत्रों से विभिन्न कानूनी और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के साथ प्रतिनिधियों द्वारा तैयार किया, घोषणा पत्र सभी लोगों और सभी राष्ट्रों के लिए उपलब्धियों के एक आम मानक के रूप में 10 दिसंबर 1948 महासभा संकल्प 217 ए पर पेरिस में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा घोषित किया गया। यह पहली बार के लिए, मौलिक मानवाधिकारों सार्वभौमिक संरक्षित किया जाना है,

जन्मजात गौरव और मानव परिवार के सभी सदस्यों के बराबर है और अविच्छेद्य अधिकारों की मान्यता दुनिया में स्वतंत्रता, न्याय और शांति का आधार है, जबकि मानव अधिकारों के प्रति उपेक्षा और अवमानना मानव जाति के विवेक, और मनुष्य के डर से भाषण और विश्वास और स्वतंत्रता की स्वतंत्रता का आनंद और चाहते होंगे, जिसमें एक दुनिया के आगमन पर अत्याचार किया है, जो बर्बर कार्य में हुई है, जबकि सर्वोच्च आकांक्षा घोषित कर दिया गया है, आम लोगों की, यह आवश्यक है, जबकि आदमी नहीं है, तो, मानव अधिकार कानून के शासन के द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिए, एक अंतिम उपाय के रूप में, अत्याचार और उत्पीड़न के खिलाफ विद्रोह करने के लिए मजबूर होना, यह देशों के बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों के विकास को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है, जबकि संयुक्त राष्ट्र के लोगों के चार्टर में है, जबकि मानव व्यक्ति की गरिमा और मूल्य में और पुरुषों और महिलाओं के समान अधिकारों में, मौलिक मानवाधिकारों में अपने विश्वास की पुष्टि की और सामाजिक प्रगति और जीवन के बेहतर मानकों में बढ़ावा देने के लिए चुना गया है। बडी स्वतंत्रता, सदस्य राज्यों को प्राप्त करने के लिए खुद का वादा किया है, जबकि संयुक्त राष्ट्र के साथ सहयोग में, और पालन मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता की सार्वभौमिक सम्मान को बढ़ावा देने, के लिए इन अधिकारों और स्वतंत्रता की एक आम समझ, इस प्रतिज्ञा को पूरा करने के अहसास के लिए सबसे बड़ा महत्व का है, जबकि अब, महासभा, हर व्यक्ति और समाज के हर अंग को ध्यान में रखकर लगातार इस घोषणा में रखते हुए, शिक्षण से और प्रयास करेगा, कि अंत करने के लिए, सभी लोगों और सभी राष्ट्रों के लिए उपलब्धि, का एक आम मानक के रूप में मानव अधिकारों के इस सार्वभौम घोषणा दावा शिक्षा के सदस्य राज्यों को खुद के लोगों के बीच और उनके अधिकार क्षेत्रों के अंतर्गत प्रदेशों के लोगों के बीच, दोनों इन अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए और उनके सार्वभौमिक और प्रभावी मान्यता और पालन सुरक्षित करने के लिए, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय प्रगतिशील उपायों द्वारा सम्मान को बढ़ावा देने के लिए है।

अनुच्छेद 11

सभी मनुष्य स्वतंत्र और गरिमा और अधिकारों में बराबर पैदा होते हैं। वे कारण और विवेक के साथ संपन्न हो और भाईचारे की भावना में एक दूसरे के प्रति कार्य करना चाहिए।[6]

निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर यह देखा जा सकता है कि मानव मूल्यों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए भारतीय संविधान (विधि) का योगदान है, विधि का अस्तित्व मानवीय समुदाय से है और मानवीय मूल्यों का अस्तित्व विधि से है। जहाँ कभी मानवीय मूल्यों के साथ विधि विरूद्ध गलत होता है, वहाँ भारतीय संविधान के अन्तर्गत विधि द्वारा मानवीय मूल्यों की रक्षा की जाती है। भारतीय संविधान में मानवीय गरिमा के लिए बहुत सम्मान, समानता और गैर–भेदभाव के लिए प्रतिबद्धता और समाज में कमजोर वर्ग के लिए चिंता का विषय है। इसके अलावा संविधान ने सरकार को स्वतंत्रता की रक्षा करना और उसे बढ़ावा और प्रत्येक नागरिक को जीवन स्तर के प्रति आश्वस्त करना अनिवार्य बना दिया है। दूसरे शब्दों में भारतीय संविधान भारत के प्रत्येक नागरिक को बुनियादी मानवाधिकारों की गारंटी देता है। संविधान के भाग 3 और भाग 4 में निहित मौलिक अधिकारों में शामिल किया गया है। स्वतंत्रता का अधिकार शोषण के खिलाफ अधिकार, धर्म, संस्कृति और शैक्षिक अधिकारों की स्वतंत्रता का अधिकार आदि प्रदत्त किए गए तथा इसके साथ–साथ संवैधानिक उपचार का अधिकार और कुछ वर्गों से सवंधित विशेष प्रावधान मानवीय मूल्यों को सुनिश्चित करने वाले संवैधानिक प्रावधान है। जो मानवीय मूल्यों को जीवंत स्वरूप दिए हुए हैं।

संदर्भ

1. *Kphilosophy.blogspot.com*
2. *www.ugc.ac.in*
3. *googleusercontent.com*
4. *journals.co.za*
5. *www.jansatta.com*
6. *https://realgodofindia.com*

कल्याणकारी विज्ञान एवं मानवीय मूल्य

जितेन्द्र सिंह
विद्यार्थी, जन्तु विज्ञान
एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली।

विज्ञान, प्रकृति का विशेष ज्ञान है। यद्यपि मनुष्य प्राचीन समय से ही प्रकृति संबंधी ज्ञान प्राप्त करता रहा है, फिर भी विज्ञान अर्वाचीन काल की ही देन है। इसी युग में इसका आरंभ हुआ और थोड़े समय के भीतर ही इसने बड़ी उन्नति कर ली है। इस प्रकार संसार में एक बहुत बड़ी क्रांति हुई और एक नई सभ्यता का, जो विज्ञान पर आधारित है, निर्माण हुआ।

ब्रह्माण्ड के परीक्षण का सम्यक् तरीका भी धीरे–धीरे विकसित हुआ। किसी भी चीज के बारे में यों ही कुछ बोलने व तर्क–वितर्क करने के बजाय बेहतर है कि उस पर कुछ प्रयोग किये जायें और उसका सावधानी पूर्वक निरीक्षण किया जाय। इस विधि के परिणाम इस अर्थ में सार्वत्रिक हैं कि कोई भी उन प्रयोगों को पुनः दोहरा कर प्राप्त आंकडों की जांच कर सकता है।

सत्य को असत्य व भ्रम से अलग करने के लिये अब तक आविष्कृत तरीकों में वैज्ञानिक विधि सर्वश्रेष्ठ है। संक्षेप में वैज्ञानिक विधि निम्न प्रकार से कार्य करती हैः

1. ब्रह्माण्ड के किसी घटक या घटना का निरीक्षण करिए,
2. एक संभावित परिकल्पना (hypothesis) सुझाइए जो प्राप्त आकडों से मेल खाती हो,
3. इस परिकल्पना के आधार पर कुछ भविष्यवाणी (prediction) करिये,
4. अब प्रयोग करके भी देखिये कि उक्त भविष्यवाणियां प्रयोग से प्राप्त आंकडों से सत्य सिद्ध होती हैं या नहीं। यदि आंकड़े और प्राक्कथन में कुछ असहमति (discrepancy) दिखती है तो परिकल्पना को तदनुसार परिवर्तित करिये,
5. उपरोक्त चरण (3) व (4) को तब तक दोहराइये जब तक सिद्धान्त और प्रयोग से प्राप्त आंकडों में पूरी सहमति (consistency) न हो जाय।
6. किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त या परिकल्पना की सबसे बडी विशेषता यह है कि उसे असत्य सिद्ध करने की गुंजाइश (scope) होनी चाहिये। जबकी मजहबी मान्यताएं ऐसी होतीं हैं जिन्हे असत्य सिद्ध करने की कोई गुंजाइश नहीं होती। उदाहरण के लिये 'जो जीसस के बताये मार्ग पर चलेंगे, केवल वे ही स्वर्ग जायेंगे' – इसकी सत्यता की जांच नहीं की जा सकती।

इतिहास

प्रश्न यह है कि विज्ञान की द्रुत गति से जो उन्नति हुई, उसका श्रेय किसे है? क्या प्राचीन काल के मनुष्य इन अर्वाचीन वैज्ञानिकों की अपेक्षा बुद्धि कम रखते थे? यदि ऐसी बात है, तो दर्शन, साहित्य एवं ललित कलाओं की उन्नति प्राचीन समय में इतनी अधिक क्यों हुई? संभवतः इसका रहस्य उन वैज्ञानिक विधियों में निहित है, जिनका प्रश्रय पाकर विज्ञान इतनी उन्नति कर सका है।

अर्वाचीन विज्ञान का आरंभ लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व हुआ। जैसा ऊपर कहा गया है, प्राचीन काल में भी विज्ञान की कुछ उन्नति हुई, किंतु उसका क्रम आगे न बढ़ पाया। इसलिए कुछ बात इसके पीछे अवश्य रही होगी। वस्तुतः प्राचीन काल के मनीषियों ने जो भी ज्ञान अर्जित किया, उसे बुद्धिवादी कहना ठीक होगा। अपनी बुद्धि और तर्क के बल पर ज्ञान की उच्च कोटि की बातें उन्होंने बताईं, किंतु उनके प्रकार और वर्धन की व्यवस्था नहीं थी और संसार भर में उनका व्यापक प्रचार और प्रसारण नहीं हो पाया। अर्वाचीन विज्ञान इसके विपरीत प्रायोगिक ज्ञान है, जिसका आरंभ में बड़ा विरोध हुआ। इसी के फलस्वरूप गैलिलियो जैसे अग्रगामी वैज्ञानिकों को कड़ी यातनाएँ सहनी पड़ीं। फिर भी प्रयोग द्वारा सत्यापन विधि के भीतर ही प्रसारण का बीज भी छिपा हुआ था। इस प्रकार जो ज्ञान मिलता गया, वह एक शृंखला में आबद्ध हो चला, जिसका क्रम आगे भी जारी रहा। इस ज्ञान से शक्ति के नए–नए स्रोतों का पता चला और परिणामस्वरूप न केवल इसका विरोध कम होता गया अपितु एक बहुत बड़ी क्रांति समाज में हुई। मशीन युग का सूत्रपात हुआ और संसार में आशा की एक नई किरण सामने आई। किंतु जिस प्रकार सभी वस्तुओं के साथ अच्छाई और बुराई दोनों के पहलू जुड़े हुए हैं, विज्ञान भी मानव के लिए केवल वरदान ही न रहा, उसका पैशाचिक रूप हिरोशिमा में ऐटम बम के रूप में विश्व ने देखा, जिसके विस्फोट के कारण संसार के विनाश तथा प्रलय की लीला का दृश्य उपस्थित हो गया। इस प्रकार संसार के सामने ''सत्य को केवल सत्य के लिए'' खोज न करने की आवश्यकता जान पड़ी और ''सत्यं शिवं सुंदरम'' के अदर्श को विज्ञान जगत् में भी अपनाना ही श्रेयस्कर मालूम हुआ। विज्ञान इस प्रकार नियंत्रित होकर ही मानव कल्याण में योगदान कर सकता है। इसी नियंत्रण के फलस्वरूप परमाण्वीय भट्ठियाँ बनीं, जो एक प्रकार से नियंत्रित ऐटम बम मात्र हैं, किंतु जिनसे अपार सुविधाएँ मिल सकती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि अल्प काल में ही विज्ञान ने बड़ी उन्नति की और इसका सब श्रेय प्रयोगविधि को है, जिसका उपयोग प्राचीन समय में नहीं किया गया था। इस प्रयोगविधि में प्रयोग का महत्व सर्वोपरि है, फिर भी अन्य और विधियों का उपयोग भी एक विशेष ढंग और क्रम से किया जाता है, जिन्हें हम वैज्ञानिक विधियाँ कह सकते हैं।''(वैज्ञानिक विधि ज्ञान प्राप्त करने का एक अनुभवजन्य तरीका है जो कम से कम 17वीं शताब्दी के बाद से विज्ञान के विकास की विशेषता है। इसमें सावधानीपूर्वक अवलोकन शामिल है, जो कि मनाया जाता है, इसके बारे में कठोर संदेह को लागू करना, यह देखते हुए कि

संज्ञानात्मक मान्यताएं एक को कैसे व्याख्या करती हैं, इसमें शामिल हैं, इसमें प्रेरणों के माध्यम से, अवधारणाओं से उत्पन्न कटौती के माध्यम से, संवेदनाओं से उत्पन्न कटौती के प्रयोगात्मक और माप–आधारित परीक्षण, और प्रायोगिक निष्कर्षों के आधार पर अवधारणाओं (परिमाण), ये वैज्ञानिक पद्धति के सिद्धांत हैं, जैसा कि सभी वैज्ञानिक उद्यमों के लिए लागू की निश्चित सीमा से अलग है। ''वैज्ञानिक अनुसंधान'' यहां रीडायरेक्ट है।

प्रमुख वैज्ञानिक विधियाँ

विज्ञान के अध्ययन में जिन विधियों का उपयोग सामूहिक रूप से अथवा आंशिक रूप से किया जाता है, उनका नीचे वर्णन किया जा रहा है :

(1) निरीक्षण (observation) –

जिस प्राकृतिक वस्तु या घटना का अध्ययन करना हो, सबसे पहले उसका ध्यानपूर्वक निरीक्षण आवश्यक है। यदि कोई घटना क्षणिक हो, तो उसका चित्रण कर लेना आवश्यक है, ताकि बाद में उसका निरीक्षण हो सके, जैसे ग्रहण। निरीक्षण के लिए सूक्ष्मदर्शी या दूरदर्शी का उपयोग किया जा सकता है, ताकि अधिक विस्तार के साथ और ठीक–ठीक निरीक्षण हो सके। यदि अन्य लोग भी निरीक्षण का कार्य कर रहे हों, तो उसका स्वागत करना चाहिए कि केवल निरीक्षित वस्तु पर ही ध्यान केंद्रित रहे, जैसे अर्जुन को वाणविद्या के परीक्षण के समय केवल पक्षी का सिर दिखाई पड़ रहा था। कभी–कभी किस वस्तु के विषय में मस्तिष्क में पहले से कुछ धारणा बनी रहती है, जो निष्पक्ष निरीक्षण में बहुत बाधक होती है। निरीक्षण के समय इस प्रकार की धारणाओं से उन्मुक्त होकर कार्य करना चाहिए।

(2) वर्णन (description)–

निरीक्षण के साथ ही साथ, या तुरंत बाद, निरीक्षित वस्तु या घटना का वर्णन लिखना चाहिए। इसके लिए नपे–तुले शब्दों का प्रयोग करना चाहिए, जिससे पढ़नेवाले के सामने निरीक्षित वस्तु का चित्र खिंच जाए। जहाँ कहीं आवश्यकता हो, अनुमान के द्वारा अंकों में वस्तु के गुणविशेष की माप दे देनी चाहिए, कितु यह तभी करना चाहिए जब वैसा करना बाद में उपयोगी सिद्ध होने वाला हो। फूलों के रंग का वर्णन करते समय अनुमानित तरंगदैर्घ्य देना व्यर्थ है, किंतु किसी वस्तु की कठोरता की तुलना, अन्य वस्तु की अपेक्षा अंकों में देना ही ठीक है। व्यर्थ के व्यौरे न दिए जाएँ और भाषा सरल तथा सुबोध हो। देश, काल एवं वातावरण का वर्णन दे देना चाहिए ताकि वस्तु किन परिस्थितियों में उपलब्ध हो सकती है, यह ज्ञात हो सके।

(3) कार्य–कारण–विवेचन (cause and effect)

प्रकृति के रहस्योद्‌घाटन में कार्यकारण का विवेचन महत्वपूर्ण है। वर्षा का होना, बादल की गरज, बिजली की चमक, आँधी और तूफान आदि घटनाएँ साथ हो सकती हैं। इनमें कौन कितना कारण हैं? प्रायः कारण पहले आता है, किंतु केवल क्रम ही कारण का निश्चय नही

करता। इसलिए इन बातों पर थोड़ा विचार कर लेना चाहिए, ताकि आगे किसी प्रकार का भ्रम न पैदा हो। साथ ही विभिन्न कारणों का तारतम्य भी बाँध रखना चाहिए। ये सब बातें घटना को समझने में सहायक होती हैं।

(4) प्रयोगीकरण (experimentation)

विज्ञान की इस युग में जो भी शीघ्र उन्नति हो पाई, उसका एकमात्र श्रेय इस विधि को ही है, क्योकि अन्य विधियाँ तो इसी मुख्य विधि के इर्द गिर्द संजोई गई हैं। यह तकनीक इस युग की देन है। प्राचीन समय में इसी के अभाव में विज्ञान की प्रगति नहीं हो पाई थी। अंतरिक्षयात्रा एवं पारमाण्वीय शक्ति का विकास, इसी प्रयोगीकरण के कारण, संभव हो सका है।

प्रयोग और साधारण निरीक्षण में क्या अंतर है? प्रयोग में भी तो निरीक्षण का कार्य होता है। वास्तव में साधारण निरीक्षण में प्रकृति के साथ किसी प्रकार का दखल नहीं दिया जाता, किंतु प्रयोग में दखल दिया जाता है। फलस्वरूप ऐसी संभावनाएँ एवं परिस्थितियाँ निकल आती हैं जिनसे प्रयोग के समय का निरीक्षण रहस्योद्घाटन में बड़ा सहायक होता है।

प्रयोग सत्य जानने के लिए किए जाते हैं, किंतु निरंतर वैज्ञानिक प्रयोगों के फलस्वरूप ऐसी स्थिति पैदा हो गई है कि केवल सत्य के ही नाम पर प्रयोग करना श्रेयस्कर नहीं, यदि वह सत्य मंगलकारी न हो। उस सत्य से क्या लाभ जिसके फलस्वरूप सारे संसार का विनाश निश्चितप्राय हो। इसलिए अच्छा ही है कि इस समय सारे संसार में परमाण्वीय परीक्षण का विरोध हो रहा है। सत्य की खोज के वास्ते ही यह परीक्षण कुछ राष्ट्रों के द्वारा होते रहते हैं, किंतु उसके परिणामस्वरूप रेडियो ऐक्टिवता बढ़ती जा रही है और हो सकता है, भविष्य में उसके कारण जनजीवन के लिए भारी खतरा पैदा हो जाए।

प्रयोग करते समय सच्चाई और ईमानदारी बरतनी पड़ती है। शुद्धि और त्रुटियों का ध्यान रखना पड़ता है। अनेक विभिन्नताओं के अध्ययन के पश्चात् कोई परिणाम निकाला जाता है। यदि कोई असंगत बात दिखलाई पड़े, तो उसे छोड़ नहीं दिया जाता, बल्कि ध्यानपूर्वक उसपर विचार किया जाता है। कभी–कभी इसी क्रम में बड़े–बड़े आविष्कार हुए हैं। निरीक्षण को कई बार दुहराया जाता है और मध्यमान परिणाम पर ही बल दिया जाता है। तकनीकी भाषा में विधि, निरीक्षण एवं परिणाम का वर्णन किया जाता है।

(5) परिकल्पना (hypothesis)

प्रयोग करने का एक मात्र उद्देश्य प्रकृति के किसी रहस्य का उद्घाटन होता है। कोई घटना क्यों और कैसे घटित होती है, इसको समझना पड़ता है। वर्षा क्यों होती है? इंद्रधनुष कैसे बनता है? इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देने के लिए एक परिकल्पना की आवश्यकता पड़ती है। यदि परिकल्पना ठीक है, तो वह जाँच में ठीक बैठेगी। परिकल्पना की जाँच के लिए विभिन्न प्रयोग किए जा सकते हैं। आगे चलकर ऐसे तथ्य भी प्रकाश में आते हैं जो उस परिकल्पना की

पुष्टि कर सकते हैं। यदि ऐसी बातें हैं, तो उसी परिकल्पना को सिद्धांत या नियम की संज्ञा दी जाती है, अन्यथा उसका संशोधन करना पड़ता है, या उसे छोड़ देना पड़ता है। न्यूटन के गति के नियम और आइन्स्टान का सापेक्षवाद का सिद्धात इसके उदाहरण हैं।

(6) आगमन (induction)

जब किसी वर्ग के कुछ सदस्यों के गुण ज्ञात हों, तो उनके आधार पर उस वर्गविशेष के गुणों के बारे में अनुमान लगाना उपपादन कहलाता है। उदाहरण के लिए, अ, ब, स आदि। मनुष्य मरणशील प्राणी हैं, इसके आधार पर कहा जाता है कि सब मनुष्य मरणशील प्राणी है। इस प्रकार के सामान्यीकरण (generalisation) के लिए यह आवश्यक है कि जो नमूने इकट्ठे किए जाएँ, वे अनियत तरीके से किए जाएँ, नहीं तो जो परिणाम निकाला जाएगा वह ठीक नहीं होगा। कभी कभी कुछ राशियों का मध्यमान निकाला जाता है, किंतु यह तभी करना ठीक होगा जब ऐसा करना तर्कसंगत हो। उदाहरणार्थ, "लेखा जोखा था, लड़का डूबा काहे" से पता चलता है कि नदी की औसत गहराई किसी लड़के की ऊँचाई से कम होते हुए भी लड़का डूब सकता है।

(7) निगमन (Deduction)

आगमन में जो कार्य होता है, उसका उल्टा निगमन में होता है। इसमें किसी वर्ग विशेष के गुणों के आधार पर उस वर्ग के किसी सदस्य के गुणों के बारे में अनुमान लगाया जाता है, जैसे मानव मरणशील प्राणी है, इसलिए "क", जो एक मनुष्य है, मरणशील है। निष्कर्ष निकालने की इस विधि को ही निगमन कहते हैं। इसके लिए दो बातें आवश्यक हैं: निगमन व्यवहार्य और तर्कसंगत होना चाहिए।

(8) गणित और प्रतिरूप (mathematics and model)

बहुत सी बातें हमारी समझ से परे हैं, उनके समझने में प्रतिरूप (model) से बड़ी सहायता मिलती हैं। शरीर की आंतरिक रचना, अणुओं का संगठन आदि विषय प्रतिरूप की सहायता से अच्छी तरह बोधगम्य हो जाते हैं। गणित के द्वारा भी विज्ञान के कठिन प्रश्नों को हल करने में बड़ी सहायता मिलती है। बहुत सी ऐसी बातें हैं जो हमारी ज्ञानेंद्रियों द्वारा आत्मसात् नहीं की जा सकतीं, जैसे पदार्थ, तरंगें, किंतु गणित के सूत्रों के द्वारा उनकी छानबीन संभव हो पाई है और प्रयोगों द्वारा उनकी पुष्टि भी हुई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक विज्ञान की प्रगति में गणित का बहुत बड़ा हाथ है।

(9) वैज्ञानिक दृष्टिकोण (scientific outlook)

अंत में एक बहुत ही महत्वपूर्ण विधि रह जाती है। वह है किसी प्रश्न के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अपनाना। खुले दिमाग से खोज की भावना रखकर विचार करना ही सही दृष्टिकोण है। अपने व्यक्तित्व को प्रश्न से अलग रखना चाहिए और सच्चाई एवं पक्षपात रहित भाव से किसी निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए। जीवन के रोज के प्रश्नों में भी इस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाना श्रेयस्कर है।

विज्ञान हर नए अनुसंधान के साथ मानव जीवन को अधिक सरल बनाता चला जा रहा है।आज विज्ञान के बढ़ते चहुंओर विकास के कारण मानव दुनिया के हर क्षेत्र में अग्रसर दिखाई दे रहा है। मानव ने विज्ञान की सहायता से पृथ्वी पर उपलब्ध हर चीज को अपने काबू में कर लिया है। विज्ञान की सहायता से हम ऊंचे आसमान में उड़ सकते हैं व गहरे पानी में सांस ले सकते हैं। विज्ञान के बढ़ते हुए विकास के कारण ही हम चंद्रमा से लेकर मंगल ग्रह में पहुंच पाए हैं। हाल ही में भारत के मंगलयान का सफलता पूर्वक मंगल की कक्षा में पहुंचना मानव की विज्ञान के क्षेत्र में बढ़ रही प्रगति का उदाहरण है। पुरातन काल में जो चीजें असंभव सी प्रतीत होती थी। विज्ञान के बढ़ते उपयोग के कारण अब वह साधारण सी महसूस होती हैं।

चिकित्सा के क्षेत्र में : विज्ञान के नए नए शोधों के चलते मानव हर दिन एक नई मुसीबत से छुटकारा पा लेता है। 20 साल पहले मलेरिया जहां जानलेवा बीमारी मानी जाया करती अब विज्ञान की प्रगति के साथ मलेरिया एक आम बीमारी बनकर रह गई हैं। विज्ञान ने चिकित्सा व्यवस्था में बहुत प्रगति कर ली है। पिछले सालों से लाइलाज बीमारी मानी जा रही एड्स पर भी वैज्ञानिकों ने धीरे–धीरे पकड़ बनाना शुरू कर दिया है। माना जा रहा है कि नई चिकित्सा पद्यति के चलते अब एड्स की पकड़ कमजोर पड़ने लगी है और माना जा रहा है कि निकट भविष्य में इस जानलेवा बीमारी का जड़ से खात्मा हो जाएगा।

यातायात के क्षेत्र में: आज विज्ञान यातायात के क्षेत्र में दिन दूना और रात चौगुना तरक्की कर रहा है। कहां पहले एक जगह से दूसरे जगह जाने के लिए दिनों लग जाते थे।अब हवाई जहाज और तेज रफ्तार की ट्रेनों के दौर में पलक झपकते एक जगह से दूसरी जगह पहुंचा जा सकता है।

जहां पहले आम लोगों के लिए ज्यादा किराया होने हवाई यात्रा करना मात्र एक सपना हुआ करता था।आज बदलते दौर के साथ आम लोग भी हवाई यात्रा का किराया वहन कर पाते हैं और हवाई यात्रा का आनंद उठा पाते हैं।पिछले दस सालों में भारत के लगभग हर घर में कार पहुंच गई है जो विज्ञान की प्रगति को सीधे तौर पर बयां करती है।

संचार के क्षेत्र में : ऑनलाइन न्यूजपेपर, ऑनलाइन न्यूजसाइट पर एक क्लिक पर खबरों का संसार मौजूद है। वैश्वीकरण के इस दौर में दुनिया के चप्पे–चप्पे की खबर हम अपने मोबाइल की एक बटन दबाते ही जान लेते हैं। फेसबुक, ट्विटर, वाट्सऐप के सहारे चाहे हम अपने सगे संबंधियों से कितने ही दूर क्यों न हों।पर इन सबके माध्यम से अब हम उनसे 24 घंटे जुड़े रह सकते हैं।

विज्ञान का अर्थ है विशेष ज्ञान। मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं के लिए जो नए–नए आविष्कार किए हैं, वे सब विज्ञान की ही देन हैं। आज का युग विज्ञान का युग है। विज्ञान के अनगिनत आविष्कारों के कारण मनुष्य का जीवन पहले से अधिक आरामदायक हो गया है।

मोबाइल, इंटरनेट, ईमेल्स, मोबाइल पर 3जी और इंटरनेट के माध्यम से फेसबुक, ट्विधटर ने तो वाकई मनुष्य की जिंदगी को बदलकर ही रख दिया है। जितनी जल्दी वह सोच सकता है लगभग उतनी ही देर में जिस व्यक्ति को चाहे मैसेज भेज सकता है, उससे बातें कर सकता है। चाहे वह दुनिया के किसी भी कोने में क्यों न हो।

यातायात के साधनों से आज यात्रा करना अधिक सुविधाजनक हो गया है। आज महीनों की यात्रा दिनों में तथा दिनों की यात्रा चंद घंटों में पूरी हो जाती है। इतने द्रुतगति की ट्रेनें, हवाई जहाज यातायात के रूप में काम में लाए जा रहे हैं। दिन–ब–दिन इनकी गति और उपलब्धता में और सुधार हो रहा है।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी विज्ञान ने हमारे लिए बहुत सुविधाएं जुटाई हैं। आज कई असाध्य बीमारियों का इलाज मामूली गोलियों से हो जाता है। कैंसर और एड्स जैसे बीमारियों के लिए डॉक्टर्स और चिकित्सा विशेषज्ञ लगातार प्रयासरत हैं। नई–नई कोशिकाओं के निर्माण में भी सफलता प्राप्त कर ली गई है।

सिक्के के दो पहलुओं की ही भांति इन आविष्कारों के लाभ–हानि दोनों हैं। एक ओर परमाणु ऊर्जा जहां बिजली उत्पन्न करने के काम में लाई जा सकती है। वहीं इससे बनने वाले परमाणु हथियार मानव के लिए अत्यंत विनाशकारी हैं। हाल ही में जापान में आए भूकंप के बाद वहां के परमाणु रिएक्टर्स को क्षति बहुत बड़ी त्रासदी रही।

अतः मनुष्य को अपनी आवश्यकता और सुविधानुसार मानवता की भलाई के लिए इनका लाभ उठाना चाहिए न कि दुरुपयोग कर इनके अविष्कारों पर प्रश्नचिह्न लगाना चाहिए।

शिक्षा में मानवीय मूल्यों की मानव जीवन में आवश्यकता एवं महत्व

डॉ. ललित कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
राजकीय रजा पी.जी. कॉलेज, रामपुर

प्रस्तावना

शिक्षा एक सतत् अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है, व्यक्ति जन्म के उपरान्त मृत्युकाल तक सदैव कुछ न कुछ सीखता रहता है। मानव जीवन में शिक्षा का महत्व समझने के लिए व्यक्ति के चरित्र से समझा जा सकता है। शिक्षा का अर्थ आज के सामान्यतः जीवन जीने के लिए स्त्रोतों का उपभोग, आय के साधनों को विकसित करने की कला का ज्ञान को ही समझा जाता है। ऐसे में समाज में मानवीय मूल्यों और नैतिकता का पतन हुआ है, और जिसका प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर पड़ रहा है। परिणामस्वरूप वर्तमान शिक्षा द्वारा व्यक्ति को केवल आर्थिक समृद्धि हेतु ही उद्घत किया है, शिक्षा के क्षेत्र में भी शैक्षिणिक पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा और बौद्धिक विज्ञान (Moral Science) को मात्र कक्षा–पंचम तक ही समाहित किया गया है। जिस समय बालक/बालिका नैतिक शिक्षा और बौद्धिक विज्ञान के महत्व को समझ नहीं पाते हैं, उनका प्रयोग मात्र कहानी के रूप में होता है। Moral of the story मात्र अध्ययन का विषय ही बन कर रह गया है। उसे अपने जीवन में आत्मसात् करना नहीं बताया जाता है। वैदिक परम्परा में 'ज्ञान्न शीलमं' की आवधारणा मृत प्रायः है। जिसके अनुसार शिक्षा / ज्ञान को मानव का सर्वश्रेष्ठ आभूषण बताया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में 'मानव जीवन में मानवीय मूल्यों की भूमिका तथा शिक्षा' विषय पर आधारित है।

अध्ययन का उद्देश्य

वर्तमान परिदृश्य में मानव द्वारा जीवन–मूल्यों के प्रति अनदेखी की जा रही है, जिससे राष्ट्र और समाज की प्राथमिक ईकाई–परिवार छिन्न–भिन्न होने के कागार पर पहुँच गया है, और बहुत से स्थानों पर तो परिवार विखण्डित हो भी गया है। जब राष्ट्र/समाज की प्राथमिक ईकाई परिवार ही अपने संकुचित रूप एकल परिवार के रूप स्वयं को स्थापित कर रहा है, और संयुक्त परिवार की अवधारणा मात्र उदाहरण बन कर रह गयी है। तो परिवार के प्रमुख घटक व्यक्ति, जोकि परिवार का अभिन्न अंग है, वह भी प्रभावित होगा ही। यह एक सर्वमान्य सत्य ही है, परिणामस्वरूप परिवार के विखण्डन हो जाता है, भौतिकवादी इस विचारधारा ने समाज की प्राथमिक ईकाई परिवार को छिन्न–भिन्न कर दिया है। आज के समाज में एकल परिवार तो

मिलते हैं परन्तु संयुक्त परिवार नहीं। संयुक्त परिवार के बिखरने पर समुदाय प्रभावित हुआ और समुदाय प्रभावित होने से राज्य और फिर राष्ट्र। व्यक्ति के नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का ह्रास होना स्वाभाविक है। क्योंकि भारतीय समाज एक ऐसी व्यवस्था पर आधारित है, जिसमें प्रत्येक रिश्ते, सम्बन्ध को अलग–अलग महत्व दिये गये हैं, जोकि एक विचारधारा के सदैव पोषित करते रहे हैं। वर्तमान समाज में शिक्षा में मानव में संयमशीलता का गुण गायब होता जा रहा है, परिणामस्वरूप व्यक्ति निरंकुश होता जा रहा है, व्यक्ति पर प्राथमिक ईकाई परिवार का नियन्त्रण भी नहीं रह गया है और शिक्षा प्रदान करने का उद्देश्य मात्र उच्च आय संसाधान सृजित करने व जुटानें का गुण विकसित करना मात्र रह गया है। ऐसे में समाज में व्यक्ति को भौतिकता वादी शिक्षा के कारण हुए बदलाव का प्रभाव राष्ट्र, राज्य, समुदाय, समाज, एवं इनकी प्राथमिक ईकाई को भी बर्बाद करने को प्रतिबद्ध प्रतीत होता है। शोधार्थी ने अपने अध्ययन में 'मानव जीवन में मानवीय मूल्यों की भूमिका तथा शिक्षा' प्रस्तुत कर रहा है। ताकि वस्तु–स्थिति बिगड़ने से पूर्व इसको सम्भाला जा सके।

अध्ययन पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः द्वितीय समंको पर आधारित है। इन द्वितीय समंकों का संकलन विभिन्न पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं, व दैनिक समाचार पत्रों आदि के माध्यम से एकत्र किये गये है।

विषय चर्चा

भारत देश एक अतिप्राचीन वैदिक युगीन सनातन परम्परा और अपने ज्ञान–कोश से सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित करने वाले देश रहा है। जहाँ शिक्षा प्रदान करने का कार्य आचार्यों, गुरुओं द्वारा गुरुकुल पद्धति से किया जाता था। एक अध्ययन यह बताता है, कि आजादी से पूर्व सम्पूर्ण भारतवर्ष में गुरुकुल परम्परा इतनी व्यवस्थित थी कि वह अपने आय–व्यय के स्त्रोतों को स्वयं उपभोग व नियन्त्रण करते थे, राजा / शासक द्वारा किसी भी शैक्षिक संस्था पर नियन्त्रण नहीं था। यहाँ तक भी वह गुरुकुल शैक्षिक पक्ष्विर्तमान परिदृश्य में मानव द्वारा जीवन–मूल्यों के प्रति अनदेखी की जा रही है, जिससे राष्ट्र और समाज की प्राथमिक ईकाई–परिवार छिन्न–भिन्न होने के कागार पर पहुँच गया है, और बहुत से स्थानों पर तो संयुक्त परिवार की ईकाई नष्ट हो गयी है। भौतिकतावादी संस्कृति को पोषित करने वाले इस भूमण्डलीकरण के दौर में सारा विश्व एक बाजार है। इसमें दो ही वर्ग होते हैं विक्रेता और उपभोक्ता। कोई किसी का सम्बन्धी, रिश्तेदार, मिलने वाला नहीं होता है। भौतिकता सर्वोपरि है, जो भुगतान करेगा, वही उस वस्तु को पाने का अधिकारी होगा, अन्यथा की दशा में बोली लगाकर या तो ऊँचे दाम पर बिक्रीत किया जाता है या सेल द्वारा पहले आओ, पहले पाओं के आधार पर।

वर्तमान वैश्विक परिवेश में लोगों को मात्र स्वयं का हित साधना है, चाहे उसके लिए उसे पारिवारिक निष्ठा को ताख पर ही क्यों न रखना पड़े। भौतिकतावादी परम्परा और भूमण्डलीकरण के इस दौर में परिवार का, सम्बन्ध का, रिश्तेदारी का, अपने वचन का, समाज का, राष्ट्र का कोई महत्व नहीं रह गया है। कोई भी कृत्य जिससे व्यक्ति लाभान्वित हो रहा हो, चाहे उसके कारण उपरोक्त में से किसी भी अवैधानिक पद्धति/प्रक्रिया का प्रयोग क्यों न करना पड़े। मानवीय मूल्य और शिक्षा का महत्व मृतप्रायः है, सर लार्ड मैकाले जो भारत में गर्वनर रहे थे उन्होंने सन् 1832 में भारतीय समाज में मानवीय मूल्यों को महत्व को रेखांकित करते हुए भारत के सन्दर्भ में हाउस ऑफ कामन्स में अपने अध्ययन में बताया है कि भारत देश में लोगों के मानवीय मूल्य और नैतिकता इतना जबरदस्त प्रभाव रखता था कि भारत में कोई व्यक्ति भूखा नहीं सोता था। इस देश में लोग भौतिकता से अधिक समाजिकता को महत्व प्रदान करते थे। जिसके एक प्रभाव यह था कि कोई भी व्यक्ति चाहे कितना भी आश्रित क्यों न हो परन्तु वह किसी भी दशा में असामाजिक कृत्यों के लिए उद्घृत नहीं होता था। ऐसी दशा में इस देश—भारत को गुलाम बनाने का सपना ब्रिटिश सरकार के लिए असम्भव था। शैक्षिक प्रभाव और महत्व को भारतीय समाज में इतनी महत्वपूर्ण स्थिति में स्थापित होना, निःसन्देह भारतवर्ष के गौरवमय अतीत की वानगी भर था जहाँ शिक्षा प्रदान करने की प्रक्रिया इतनी महत्वपूर्ण और वैज्ञानिक थी, कि कोई भी व्यक्ति चाहे वह शारीरिक रूप से अक्षम ही क्यों न हो, अपने जीवकोपार्जन हेतु योग्य होता था, साथ ही वह अपने पूरे परिवार का भरण—पोषण करने का माद्दा भी रखता था। लोगों में आपसी सहयोग की भावना इतनी बलबती थी, ग्राम में किसी एक परिवार की बेटी सम्पूर्ण ग्राम की बेटी होती थी, जिसके विवाह संस्कार हेतु ग्राम का हर व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार भरपूर सहयोग देता था, परिवार और ग्राम के सभी परिवार के बच्चे भी आपस में सम्पूर्ण ग्रामवासियों को सम्मान प्रदान करते थे। प्रत्येक व्यक्ति बोल—चाल में मर्यादा का पूरा पालन करता था, ग्राम समाज से दूर ग्राम का प्रत्येक व्यक्ति उस ग्राम समाज का प्रतिनिधि होता था, और उसके लिए वह सदैव ग्राम समाज हित को सर्वोपरि मान्यता प्रदान करता था। प्रत्येक व्यक्ति में परिवार, समाज, समुदाय, राज्य, राष्ट्र के प्रति निष्ठा ऐसी रची बसी थी, जैसे रक्त में लाल रंग। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने राष्ट्रभक्ति को परिभाषित करते हुए लिखा है कि—

भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
हृदय नहीं वह पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

हमारा देश राम और कृष्ण का देश है, कबीर, सूर, तुलसी, जायसी, बिहारी का देश है। जब भी देश पर विपत्ति के बादल आये प्रत्येक कवि ने अपने स्तर से इसे व्याख्यायित किया है। परन्तु सामाजिक दृष्टि से श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी श्री तुलसीदासजी लिखते हैं— 'परहित सरस सम धर्म नाहीं।' यह हमारे देश की आत्मा का कथन है, मानवीय मूल्य भारत देश में व्यक्ति के अन्दर जन्म से प्राप्त होते हैं, भारतीय समाज में पुर्नजन्म की अवधारणा भी है,— ''जैसा बोओगे

वैसा काटोगे।'' को मानने वाले इस देश में लोग आज बहुतायत से ऐसे लोग मिल जायेंगे जो किसी का बुरा करने के मात्र ख्याल से ही सहम जाता है। मानवीय मूल्यों का महत्व और आवश्यकता को ताख में रख समाजिक विकास और मानवीय संवेदना की अपेक्षा करना वास्तव में अन्धेरे में सुई ढूढंने की अपेक्षा करना ही है। भारतीय समाज को मानवीय मूल्यों को प्रभावित करने वाले कारक निम्नवत है :–

- भूमण्डलीकरण
- भौतिकतावादी संस्कृति
- व्यक्तिगत वैचारिक स्वतन्त्रता
- परिवारिक, नैतिक और मानवीय रिश्तो के प्रति असंवेदनहीनता

भूमण्डलीकरण :– आज के इस युग में जब सारा विश्व एक बाजार है, जहाँ रिश्ते भी ग्राहक, उपभोक्ता, क्रेता, विक्रेता, मालिक, नौकर, रोजगार देने वाले, रोजगार पाने वाला आदि द्वारा परिभाषित होते हैं, तो मानवीय मूल्यों की बात करना व्यर्थ और समय की बर्बादी के अतिरिक्त कोई नहीं, आज रिश्तेदारी, दोस्ती, सम्बन्धी आदि सभी फेसबुक हो गया है, जहाँ फेसबुक फ्रेण्डस् की संख्या सैकड़ों और हजारों में होती है परन्तु यदि वही व्यक्ति बीमार हो जाये तो, उसकी तीमारदारी करने वाला एक–दो एकल परिवारिक सदस्य के अतिरिक्त कोई नहीं है, यहाँ तक कि माता–पिता, भाई–भाभी, बहन–बुआ आदि कोई भी रिश्तेदार नहीं है।

कारण मात्र यह है कि दोस्त सम्पूर्ण विश्व में हैं परन्तु व्यक्ति को आवश्यकता पड़ने पर कोई नहीं। कारण मात्र एक बाजारवादी सोच। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से तब–तक ही जुड़ा है जब तक कि उसका आर्थिक–सामाजिक हित साधने में यह व्यक्ति हितकर है, अन्यथा दूध में मक्खी के समान उसे अलग कर दिया जाता है। रिश्ते का अर्थ है, पैसा, फायदा, लाभ, प्रतिष्ठा आदि है। सांस्कृतिक, पारिवारिक निष्ठा, मानवीय संवेदना कोई मायने नहीं रखते हैं। जीवन चलाने के लिए, जीवन जीने के लिए, पैसा आवश्यक है। माँ–बाप, भाई–बहन, पुत्र–पुत्री सबको दूसरे से अपेक्षा तो है परन्तु जब स्वयं की बारी आती है, तो बेमानी है। जैसा बन्दर के लिए कहा जाता है, वह सामने वाले को तो देखता है परन्तु स्वयं की नहीं। यहाँ 'नैतिक और मानवीय दायित्व' और 'भौतिकतावादी अपेक्षा' को भी समझाना आवश्यक है।

हमारी वर्तमान शैक्षिक प्रणाली हमें बौद्धिक रूप से समृद्ध करती है, परन्तु नौतिक और मानवीय दृष्टि से यह हमें निकृष्ट बना रही है। शिक्षा भी बाजारीकरण के प्रभाव से अछूता नहीं है। आज हमारी शिक्षा नैतिक और मानवीय दृष्टि से स्तरहीन हो रही है, क्योंकि शैक्षिक प्रणाली हमें शिक्षित करती है, जिसका अधिगम होता ही नहीं। अर्थात् व्यक्ति शिक्षित तो हाता है परन्तु उसे आत्मसात् नहीं करता। Educate तो होते हैं परन्तु Learning नहीं हो पाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त कर लेते है परन्तु व्यवहारिक ज्ञान नगण्य रह जाता है। तो ऐसे में शिक्षित समाज से मानवीय मूल्यों की बात करना बेमानी है।

भूमण्डलीकरण अर्थात बाजारवादी सोच हमें यह कहती हैं कि जो हमारे पास हैं वह विक्रय हेतु है, जिससे से उसके सृजन करने वाले, बनाने वाले, पैदा करने वाले, को फायदा मिले, फिर भले ही उसका कोई भी परिणाम हो।

आज के दौर में एक महत्वपूर्ण उदाहरण देना चाहूँगा कि भारत सरकार द्वारा Single Use Plastic पर बैन है परन्तु फिर भी देश में कई बहुराष्ट्रीय कम्पनी अपने प्रोडक्ट को बेचने के लिए इसी Single Use Plastic का प्रयोग कर रहे हैं, कोई भी कहीं भी इसे देख सकता है, जनता में जागरुकता का अभाव नहीं है देश की अधिकांश जनता जानती है यह प्लास्टिक पर्यावरण के लिए बहुत ही घातक है, परन्तु फिर भी व्यक्ति सब्जी, चीनी, तेल, आदि जैसी कई गृहपयोगी वस्तुओं को लाने के लिए इसी प्लास्टिक का प्रयोग धड़ल्ले से कर रहे हैं। इसके लिए सरकार को चाहिए था कि एक ईकाई जो ऐसी प्लास्टिक का निर्माण करते हैं, उपयोग करते हैं को स्पष्ट रूप से निर्देशित किया जाना चाहिए था, परन्तु ऐसा नहीं किया गया। वह उद्योपति जो इस Single Use Plastic का निर्माण कर रहे हैं, वह केवल स्वयं के आय की चिन्ता करते हैं, परन्तु इसके दुष्प्रभाव के चिन्ता नहीं, जबकि इसका प्रभाव भविष्य में उसे और उसके परिवार को भी भोगना पड़ सकता है।

भौतिकतावादी संस्कृति का प्रभाव :— भारत में मानव जीवन को जब पढ़ा जाता है, तो कहा जाता है जीवन—चक्र के समान है जो समान रूप से चलता रहता है हम जो भी करते वह कभी न कभी लौट की हमारे सम्मुख आता है। उस समय हमारे नैतिक दायित्व, मानवीय मूल्य ही सही मायने में हमारा बचाव करते हैं।

भौतिकतावादी संस्कृति का अर्थ है मेरा पैसा, मेरा घर, मेरी गाड़ी, मेरा रसूख, मेरे सम्पर्क, आदि—आदि। जिसके उपयोग एवं उपभोग मैं केवल स्वयं के हेतु ही कर सकता हूँ, इस पर अन्य किसी पारिवारिक, सामाजिक, व्यक्ति का कोई अधिकार नहीं हैं। व्यक्ति का स्वयं का महत्व बढ़ गया है, व्यक्ति में अहम का भाव बलिष्ठ हुआ है, स्वयं की स्थिति का दिखावा, अपने महत्व का प्रदर्शन करना, अपने साधनों पर इतराना। लेकिन जीवन मूल्य के प्रति व्यक्ति का नजरिया इस कदर संकुचित हुआ है कि वह इस बारे में बात तक करने से बचता है। क्योंकि किसी भी व्यक्ति के जीवन—मूल्य उसे सदैव ही पारिवारिक पृष्ठभूमि से ही प्राप्त होते हैं, यह उसकी परवरिश का परिणाम है, यही मूल्य उसके चरित्र को सही अर्थों में परिभाषित करता है। स्वयं को सर्वोपरि रखने की यह महत्वाकांक्षा वास्तव में किसी भी व्यक्ति के नैतिक और मानवीय चरित्र का मूल्यांकन करने में विपरीत प्रभाव प्रदान करने वाले ही होते हैं। ऐसी शिक्षा को प्रभाव कितना प्रभावी रह सकता है, समझा जा सकता है, भौतिकतावादी व्यवस्था में विचारधारा सुखों पर आश्रित हैं, जिसमें व्यक्ति स्वयं के हेतु अपने सुख—साधनों को पूर्ण करने के लिए प्रयास करता है। जिसके लिए वह पारिवारिक, सामाजिक, सामुदायिक, राज्यकीय, राष्ट्रीय हितों की अनदेखी करने से भी नहीं चूकता है। स्वयं की कमी को छुपाने के लिए अपने से अधिक कमी वाले व्यक्ति के साथ स्वयं की तुलना करता है।

वर्तमान में इस समाजिक व्यवस्था ने ऐसी पूरी पीढ़ी प्रभावित किया है, जो मात्र स्वयं के हेतु ही जीवित हैं। उन्हें पारिवारिक, सामाजिक, सामुदायिक, राज्यकीय, एवं राष्ट्रीय हितों से कोई मतलब नहीं। जीवन का उद्देश्य अपने समस्त ऐश्वर्यपूर्ण साधनों का उपभोग मात्र रह गया है। चाहे व्यक्ति के इस कृत्य से किसी को भी कितनी भी असुविधा हो। भौतिक संसाधनों का भरपूर उपयोग वह केवल व्यक्गित हित लाभ हेतु ही करता है, इसमें यह परिवारीजनों, समाज, समुदाय, आदि किसी को सहभागी बनाने या उनके साथ बाँटने को तैयार नहीं होता। ऐसे में व्यक्ति का आपसी पारिवारिक सोच, समाप्त हो जाती है, वह न तो अपने संयुक्त परिवार की चिन्ता करता है, न ही समाज की ना ही समाज की, ना ही समुदाय की और न ही राष्ट्र की। वह अपने द्वारा सृजित सभी साधनों का प्रयोग मात्र स्वयं के प्रत्यक्ष लाभ हेतु करता है।

मेरा क्या फायदा होगा? यह सोच भौतिकतावादी संस्कृति को आसानी से परिभाषित करती है। जिस कारण पारिवारिक ईकाई ध्वस्त प्रायः होते दीख रही है। प्रत्येक व्यक्ति व्यक्तिगत हितों को साधने में मशगूल है, उसे पारिवारिक हितों, दायित्वों से कोई सरोकार नहीं रह गया है, परिवार वह ईकाई जिससे परिवार के सभी सदस्य आपस में एक–दुसरे से जूड़े रहते हैं, परिवार के किसी भी व्यक्ति का किया गया कार्य उसके पूरे परिवार की प्रतिष्ठा को प्रभावित करता है। ऐसे ही ग्राम का एक परिवार जोकि वास्तव में एक ही जैसे परिवार के सभी प्रकार के रिश्तेदारों से पूरित होता है, की भी प्रतिष्ठा को प्रभावित करता है। जिसके कारण व्यक्ति को संयमित व्यवहार करना आवश्यक हो जाता है, और किसी भी प्रकार कार्य करने से पूर्व अच्छा–बुरा सोचने को प्रेरित भी करता है। जिसके परिणामस्वरूप मानवीय मूल्य स्वतः ही पोषित होते रहते हैं, सभी मानव का आपसी हित एक–दूसरे को प्रभावित करता है, मैं आपके लिए एक कदम चलूँगा तभी आपसे भी अपेक्षा कर सकता हूँ, यह प्रत्येक व्यक्ति का स्वयं का दायित्व है, जिसके प्रति उसे स्वयं ही तत्पर होना होता है।

व्यक्तिगत वैचारिक स्वतन्त्रता :– आज के युग में प्रत्येक व्यक्ति एकाकी रहना पसन्द करने लगा है, उसे अपनी स्वतन्त्रता पर किसी का कोई अंकुश किसी भी प्रकार स्वीकार नहीं हैं, इसके लिए चाहे कोई भी कीमत क्यों न चुकानी पड़ जाये, किसी भी तिलान्जति क्यों न दी पड़ जाये परन्तु वह अपनी स्वतन्त्रता में किसी को भी शामिल नहीं करना चाहता, वह केवल व्यक्तिगत हितों को ही सर्वोपरि महत्व प्रदान करता है। उसके मानवीय मूल्य वह स्वयं निर्धारित करता है, जो उसे सही लगता है, वही सही है उसके अतिरिक्त बाकी सब व्यर्थ है। चाहे कोई भी पारिवारिक सदस्य ही क्यों न हो, कोई भी सामाजिक मानवीय मूल्य किसी भी दशा में कोई मायने नहीं रखते हैं। वह स्वयं केवल अपने हित ही देखता और साधता है। स्वयं के आगे कोई भी अन्य व्यक्ति इसे प्रभावित नहीं कर सकता है। ऐसी दृष्टि में मानवीय मूल्य पूर्णतः अमानवीय हो जाते हैं, जोकि व्यक्ति को प्रभावित करता है। सामाजिक विचारधारा इनके लिए कोई मायने नहीं है, मानवीय मूल्य और किसी भी कृत्य को कोई भी को महत्व नहीं देता है। जिससे समाज की प्राथमिक ईकाइयाँ ध्वस्त होने के कागार पर खड़ी है।

गलाकाट प्रतिस्पर्धा के दौर में प्रतिस्पर्धा एक सैद्धान्तिक ज्ञान के अतिरिक्त कुछ नहीं रह गयी है, यदि आपको समाज में उच्चता प्राप्त करनी है तो येन–केन–प्रकारेण प्रतिद्वंद्वता करनी है, चाहे प्रतिस्पर्धा में खड़ी ईकाईयों को नष्ट करके, उनके कर्मचारियों को भ्रमित करके, उन्हे किसी अन्य माध्यम से नुकसान पहुँचाकर, कुछ भी हो शीर्ष पर रहने का एकमात्र अधिकार सिर्फ और सिर्फ मेरा ही है। ऐसी सामाजिक संरचना और व्यवस्था में मानवीय मूल्यों के प्रति लोगों में अपेक्षा रखना कतई न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता। परन्तु यह नियति सम्मत अवश्य है। एकल पारिवारिक जीवन के भौतिक लाभ निःसन्देह अधिक और प्रभावी प्रतीत होते हैं परन्तु सामाजिक लाभ उसे नहीं प्राप्त हो पाते हैं, जो भी सामाजिक लाभ उन्हें प्राप्त भी होते हैं वह भी अपनी प्रतिष्ठा के कारण ही प्राप्त होते हैं।

आज की सामाजिक संरचना व्यक्ति को मानवीय मूल्यों से अधिक भौतिक सम्पन्नता की जाने को प्रेरित करती है क्योंकि लोगों को किसी भी प्रकार वाहन–सुख, शारीरिक सुख, जैसे भौतिक सुख चाहिए, न की मानवीय, नैतिक व सामाजिक मूल्य।

जबकि यह सार्वभौमिक सत्य है कि मानवीय मूल्य व्यक्ति को आत्मिक सुख प्रदान करते हैं, उसके सुख–दुःख में उसके सहयोग के लिए एक बड़ी पारिवारिक ईकाईयाँ उसके सहयोग हेतु तत्पर रहती हैं, जिससे ऐसे में व्यक्ति के विकास की सम्भावना अत्यधिक रहती है। व्यक्ति सामाजिक बना भी रहता है, उसकी पारिवारिक सामाजिक महत्व सदैव पुष्पित और पल्लवित होते रहते हैं।

परिवारिक, नैतिक और मानवीय रिश्तो के प्रति संवेदनहीनता :– मानव एक सामाजिक प्राणी है, वह किसी भी दशा में समाज से अलग होकर नहीं रह सकता। वह जहाँ भी रहेगा समाज से सदैव जुड़ा ही रहेगा। उसका ही अंग रहेगा यह बात अलग है कि वह स्वयं को समाज के अलग समझे। ऐसे में सामान्यतः व्यक्ति के नैतिक दायित्व हो जाता है कि व्यक्ति अपनी सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्वों को पूर्ण करता रहे, मानवीय मूल्यों को पोषित करता रहे, यदि कोई व्यक्ति समाज से विलग होना चाहता है तो समाज को भी चाहिए कि उसे समय दे और इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था बनाने का प्रयास करे कि वह इस तथ्य को समझ सके कि समाज व परिवार का महत्व क्या है? इसकी आवश्यकता क्यों है? हमें सदैव इससे क्यों जुड़ा रहना चाहिए? भारत के उत्तरभारतीय समाज में एक प्रसिद्ध कहावत/लोकोक्ति प्रचलित है–''भय बिन होय न प्रीति।'' जब तक व्यक्ति को यह तथ्य और महत्व समझ में नहीं आते कि समाज में उसका महत्व क्या हैं? उसका समाज के प्रति क्या दायित्व है? उसके लिए समाज क्यों आवश्यक है? यह सभी विषय से व्यक्ति का आत्मसाक्षात्कार होना आवाश्यक है।

आज समाज अमानवीय कृत्यों से अटा हुआ हैं, व्याभिचार, छेड़–छाड़, धोखाधडी, 420, लूट–खसोट, पारिवारिक और मानवीय मूल्यों के ह्रास के कारण ही हैं। समाज में जिधर देखें

कोई न कोई अनैतिक कृत्य, अमानवीय कृत्य, पाश्विक प्रवृत्ति, दुष्चरित्रता, धूर्तता व्याप्त है। बस, कैसे भी अपना कार्य सिद्ध होना चाहिए। इससे किसी अन्य समाज, व्यक्ति, परिवार पर चाहे कोई भी आपदा क्यों न आ जाये, बस अपना कार्य सिद्ध होना चाहिए। मानव की यही सोच मानवीय मूल्यों से व्यक्ति को अलग करती हैं, संवेदनाहीन बनाती है, जिससे वह निकृष्ट प्रायः हो जाता है। 'आदमी तो अच्छा है, पर उसका चरित्र ठीक नहीं।'

मानवीय मूल्य हमें 'Simple living and high Thinking' के लिए प्रेरित करता था अर्थात कम संसाधन में जीवन जीना। दूसरे शब्दों में कहे तो संसाधनों को कुशल प्रयोग करना, ताकि उसके संसाधनों का लाभ से अधिकतम व्यक्ति लाभान्वित हो सके। जिसका परिणाम यह होगा कि व्यक्ति सदैव समाज के प्रतिष्ठित रहेगा, चाहे वह आर्थिक रूप से कितना भी विपन्न क्यों न हो गया हो, परन्तु आज भी मानवमूल्यों को सम्बर्द्धित करने वाले व्यक्ति सदैव समाज के प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं। भारतीय समाज में कई परम्पराएँ एवं व्यवस्थाएँ ऐसी हैं जो वर्ण, समुदाय, समाज विघटन कारक है, हलाँकि मानवीय मूल्यों को सभी वर्ण, समुदाय, समाज के लोग अलग–अलग प्रकार से पोषित करते रहे हैं परन्तु वर्तमान शैक्षिक प्रणाली ने लोगों को भौतिकता की ओर ही प्रेरित किया है, जिसका फायदा यह हुआ सामाजिक दृष्टि से लोगों को हुआ है, परन्तु व्यक्ति इतना शिक्षित और समृद्ध हो गया है कि वह स्वयं को बेहतर मानने लगा है। जैसे शिक्षक का सम्मान अब समाज में नहीं है, कारण को समझना कोई दुष्कर नहीं है, हमारी सामाजिक वर्ण व्यवस्था समाज के एक वर्ग को शिक्षा को अधिकार ही नहीं देती रही है परन्तु आधुनिक शिक्षा प्रणाली के लागू होने से उक्त शोषित समाज को सामाजिक शैक्षिक उत्थान का अवसर प्राप्त हुआ है, जिससे वह भी स्वयं को अधिक उन्नत और समृद्ध मानते हैं, वह समृद्ध होने के कारण अन्य वर्ग, वर्ण, समाज, समुदाय के लोगों को वह मानवीय मूल्य–आदर नहीं प्रदान करते हैं जोकि उन्हें प्राप्त होना चाहिए, वहीं उच्च वर्ण वाले लोग आज भी शोषित समाज को हेय दृष्टि से देखते हैं, वह उनकी बौद्धिक क्षमता और प्रगति को पर्याप्त सम्मान प्रदान नहीं करते, जिसके कारण वैमनस्य का भाव पैदा हो गया है। ऐसे में राजनीतिक दल इसका भरपूर फायदा उठाने का अवसर नहीं चूकते।

वैदिक कालीन भारत में मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा सर्वव्याप्त थी। क्योंकि वर्ण व्यवस्था का आधार कर्म पर आधारित था परन्तु समय के साथ इसको परिभाषित करने वाले तथाकथित मनीषियों ने सामाजिक संरचना पर कुठारघात करते हुए इसे प्रभावित करने का प्रयास किया परिणामस्वरूप मानवीय मूल्य के नष्ट होने की प्रक्रिया की शुरुआत हो गयी। रही सही कसर अंग्रेजी शैक्षिक प्रणाली ने इसको जिस प्रकार परिभाषित किया वह समाज में विखण्डन का कारक बना है। जिस कारण मानवीय मूल्यों की शिथिलता आती चली गयी, और आज अंततः यह बहुत हद तक देश के बड़े शहरों में निष्क्रिय प्रायः हो गयी है। व्यक्तिवादी सोच मानव को संकुचित मानसिकता का बना देती है, जिससे वह स्वयं में आत्मकेन्द्रित हो जाता है और उसकी

सारी दुनिया उसके इर्द–गिर्द तक ही सीमित हो जाती है, ऐसे में निश्चय ही उसके विकास पर असर तो पड़ता ही है, साथ ही वह निरंकुश–सा व्यवहार करने लगता है। ऐसे में मूल्य और नैतिकता और मानवीय मूल्य की बात करना बेमानी भर ही है। जीवन में विकास का बड़ा महत्व है, एक कहावत है– ''चढ़ते सूरज को सब प्रणाम करते हैं''। अर्थात जो व्यक्ति समृद्ध होता है सभी उसकी वाहवाही करते हैं, वही सभी का रोल मॉडल होता है। इसलिए देखा गया है लोग फिल्मी हीरो–हीरोइनों को अपना रोल–मॉडल मानते हैं, उसका जैसा जीवन जीना चाहते हैं, परन्तु उसके पीछे का संघर्ष किसी को दिखाई नहीं देता।

निष्कर्ष

भारत एक अति प्रचीन सनातन वैदिक देश है, जिसके कण–कण में विविधता के रंग भरे हुए हैं, बौद्धिक दृष्टि से भारत को 'विश्व–गुरु' के रूप से जाना जाता है। हमारे देश के मनीषियों 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना के अनुसार सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार माना है। इस तथ्य से समझा जा सकता है कि भारत में शिक्षा और मानवीय मूल्यों का क्या महत्व रहा है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का मत था कि–''ऐसी शिक्षा जो हमें अच्छे–बुरे के बीच भेद–भाव करना नहीं, एक के अनुकूल और दूसरे को त्यागता नहीं सिखाती बह मिथ्या है।'' महात्मा गाँधी का यह कथन शिक्षा सम्बन्धी विचारों हेतु कितना महत्वपूर्ण है। महात्मा गाँधी ने शिक्षा हेतु जो अपने विचार प्रस्तुत किये है, भारतीय समाज में मानव जीवन के मानवीय मूल्यों की भूमिका तथा शिक्षा के महत्व को परिभाषित करता है। जिसमें मानव को एवं उसकी सामजिक एवं व्यवसायिक जीवन में नैतिक मूल्यों एवं उसकी आवश्यकता को समझा जा सकता है।

वर्तमान परिदृश्य में आज जब सम्पूर्ण विश्व को एक बाजार के स्वरूप में देखा जाता है। भूमण्डलीयकरण का दौर है, आज कोई भी व्यक्ति सम्पूर्ण विश्व में किसी भी देश, राज्य, समाज, समुदाय के किसी भी व्यक्ति से किसी भी क्षण वार्तालाप कर सकते हैं। आज के समय में दूरी का महत्व नहीं रह गया है जिस प्रकार तेजी से तकनीकी विकास हो रहा है, वह समय दूर नहीं कि कोई व्यक्ति अल्प समय में ही सम्पूर्ण विश्व में कहीं जाने हेतु सम्पन्न हो जायेगा। दूसरे शब्दों में कहें तो मानव में भौतिकता के प्रति चाव बढ़ा है। जिस कारण व्यक्ति के सामाजिक, पारिवारिक एवं मानवीय मूल्य शिथिल हुए हैं, आज के सम्बन्ध में कह सकते हैं देश में सामाजिक, पारिवारिक एवं मानवीय मूल्य शिथिलता ने भौतिक दृष्टि से देश को लोगों को समृद्धि प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। कुल मिलाकर शोधार्थी का मत है कि भौतिकतावादी इस संस्कृति ने मानवीय मूल्यों एवं शिक्षा को इस प्रकार प्रभावित किया गया है, कि व्यक्ति एकल परिवार में रहने के तत्पर होने लगा है, अब उसे पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति जागरुकता निष्क्रिय प्रायः हो गयी है। पारिवारिक एवं सामाजिक मूल्यों के प्रति उदासीन होने के कारण समाज में बुराई का प्रभाव बड़ा है। मानव में प्रेमभाव, लगाव, पारिवारिक रिश्ते, आदर, सत्कार, अपनत्व, संयम, सदासश्यता, सहिष्णुता, वरदाश्त करने की क्षमता, दूसरे और अपने से बड़े और

छोटे को सम्मान देने का भाव जैसे लगभग सभी प्रकार के मानवीय मूल्य के प्रति मानवीय एवं सामजिक उदासीनता को भौतिकता ने पूर्णतः प्रभावित किया है। आज समाज में व्यक्ति 'मैं' का भाव लेकर जीता है, न कि 'हम' का भाव लेकर।

एक बड़ा असर मानवीय मूल्यों में क्षरण का कारण है प्रतिद्वंद्वता। हमें यह समझाना होगा कि जीवन में प्रतिस्पर्धा आवश्यक है न कि प्रतिद्वंद्वता। आज के समाज में लोग या मानव प्रतिस्पर्धा एवं प्रतिद्वंद्वता को समान ही समझते हैं, प्रत्येक व्यक्ति भौतिकता में इतना रच–बस गया है कि प्रतिस्पर्धा एवं प्रतिद्वंद्वता को समझना ही नहीं चाहता। शोधार्थी ने अपने अध्ययन में इस प्रभाव का अध्ययन करने का प्रयास किया है। जिसके लिए शोधार्थी द्वारा द्वितीयक स्त्रोतों का सहारा लिया गया है।

किसी भी देश के विकास में मानवीय मूल्यों की भूमिका को समझने के लिए जापान को समझा जा सकता है, वहाँ के लोग राष्ट्र के प्रति जितने समर्पित हैं शायद सम्पूर्ण विश्व में कहीं नहीं। मानवीय मूल्यों का उत्कर्ष समझने के लिए वहाँ लोगों के जीवन काल को समझ सकते हैं, वहाँ लोगों की अधिकतम आयु 80 वर्ष से अधिक है। सबसे अधिक 100 वर्ष से अधिक आयु वाले लोगों को यदि आप देखना चाहते हैं, तो आपको जापान का रुख करना चाहिए।

मानवीय मूल्य मानव को बौद्धिक–वृद्धि और मानसिक–शान्ति प्रदान करता है, जिससे लोगों में जीवन जीने की ललक बढ़ जाती हैं, परिवार का कोई भी वृद्ध व्यक्ति एक ऐसी कुँजी है जो सभी प्रकार की समस्याओं का निस्तारण करने में सक्षम है। हमें बस उसका यथोचित सम्मान और आदर प्रदान करना है। यह कोई दुष्कर बात नहीं हैं, बस हमें संयमित और सहनशील होना है, ''कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है'' परन्तु यहाँ तो पाना ही पाना है जिसका प्रभाव और लाभ आगामी जीवन पर भी व्यक्ति को होता/मिलता रहेगा। यदि कोई मानवीय मूल्यों को सहेजने का प्रयासरत है वह अवश्य ही अपने बच्चों में एक ऐसे संस्कार को जन्म दे रहा है, जो भविष्य में उसके बुढ़ापे में उसे ही लाभान्वित करेंगे। तो इसमें बुराई कहाँ है? केवल अपनी सोच का दायरा बढ़ाना है, ताकि इससे अन्य लोग भी लाभान्वित हो सके।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ जो आया इसका हो गया, चाहे वह संस्कृति हो, समाज हो, या परम्परा। सभी को इसने अपने अन्दर एकाकार कर लिया। परन्तु इसने कुछ हद तक हमारी संस्कृति और परम्परा को भी प्रभावित किया, हमने आधुनिक शिक्षा प्रणाली को ग्रहण किया, परन्तु यदि हम इस तथ्य का ध्यान रखते कि यह हमारे देश की संस्कृति, परम्परा, नैतिक और सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों को कितना प्रभावित करेंगी? तो शायद आज भारतीय समाज की स्थिति इनती अराजकता वादी नहीं होती।

सुझाव

भारत एक अति प्रचीन सनातन वैदिक देश है, जिसके कण–कण में विविधता के रंग भरे

हुए हैं, बौद्धिक दृष्टि से भारत को 'विश्व–गुरु' के रूप से जाना जाता है। हमारे देश के मनीषियों 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना को पोषित करने वाले देश में मानवीय मूल्यों और नैतिक मूल्यों और आदर्शों की परम्परा रही है। माना जा सकता है कि इस दौर में लोगों के मानवीय मूल्य प्रभावित हुए हैं परन्तु उसके दुष्परिणामों का प्रतिकार किया जा सकता है, इस सम्बन्ध में शोधार्थी के निम्नवत् सुझाव हैं–

- शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक छात्र एवं छात्राओं मानवीय मूल्यों हेतु प्रेरित करना।
- शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक छात्र एवं छात्राओं का नियमित मूल्यांकन।
- मानवीय मूल्य के प्रति लोगों को प्रेरित करना।
- जीवन में प्रत्येक व्यक्ति परिवार अभिभावक शिक्षक छात्र, छात्रा को नैतिक मूल्यों के प्रति प्रेरित करना।
- शिष्टाचारयुक्त मुलाकातों ऐसी व्यवस्था करना ताकि व्यक्ति के व्यवहार को समझा ज सके और सुधारा जा सके।
- मानवीय मूल्यों को पदोन्नति, नियुक्ति, मूल्यांकन में व्यवहारिक स्थान प्रदान करना।
- समाज में छोटी–छोटी ईकाई का गठन कर सामाजिक, नैतिक, मानवीय मूल्यों के प्रति जागरूकता पैदा करना और व्यवहारिक रूप से प्रोत्साहित करना।
- परिवार और समाज में मानवीय मूल्यों को पोषित करने के लिए प्रेरित करना।
- समाज में मानवीय, नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों को दमन करने वाले लोगों को त्वरित न्यायिक प्रक्रिया में लाभ प्रदान करना।
- जीवन में मानव को चारित्रिक, मानसिक और बौद्धिक सुचिता हेतु प्रेरित करना करना और पालन कराना ।

सन्दर्भ

1. *विविध दैनिक समाचार–पत्रों के माध्यम से संकलित*
2. *इण्टेरनेट माध्यम से संकलित*
3. *विविध सम्पर्क माध्यम व्हाट्स्अप, फेसबुक आदि*
4. *जीवन मूल्य की सैद्धान्ति विवेचना : आधुनिक युग में*

मूल्यों के विविध आयाम; ISBN: 978-93-93248-08-4

धर्म दर्शन एवं मानवीय मूल्य

मेहनाज अंजुम
बीएड द्वितीय वर्ष, 2020
गवर्नमेंट रजा पीजी कॉलेज रामपुर

प्रस्तावना

प्राचीन समय से ही शिक्षा एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से हम अपने समाज व देश को विकास के शिखर तक ले जा सकते हैं। परंतु चिंता का विषय है कि शिक्षा मात्र व्यवसायिक प्रतिष्ठा, आय एवं नौकरी प्राप्त करने का साधन मात्र बनकर रह गई है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मानव किस हद तक मानवीय मूल्यों, धर्म, सत्य, ईमानदारी आदि को पीछे छोड़ता जा रहा है। इस विषय पर विचार करने की आवश्यकता है। व्यक्ति को कभी भी इतना स्वार्थी नहीं होना चाहिए कि वह अपने हितों के लिए दूसरों का अहित करें अथवा किसी के अधिकारों का हनन करें। क्योंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः उसे अपने साथ—साथ समाज में रहने वाले न सिर्फ मनुष्य अपितु पशु, पेड़, पौधों आदि के प्रति भी संवेदनशील होना चाहिए।

मानवीय मूल्यों से आशय

हमारे समाज में मानवीय मूल्य, मूल रूप से हमारे धर्म संस्कृत एवं दर्शन में हैं। यहीं से सत्य, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, त्याग, ममता, विश्वास, आस्था, करुणा, संयम आदि हम ग्रहण करते हैं। प्रेम, सद्भावना, समता, सम्मान आदि भाव हैं जो हमारे अंदर विश्व बंधुत्व य वसुधैव कुटुंबकम जैसे मूल्यों का निर्माण करते हैं। किसी भी राष्ट्र के विकास की गाथा लिखने के लिए मानवीय मूल्य ऊर्जा का स्त्रोत हैं। इन्हीं मानवीय मूल्यों व गुणों के द्वारा ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

धर्म एवं दर्शन

भारत एक विविध सांस्कृतिक प्रवृत्तियों वाला देश है। हमारे देश में अनेक धर्मों का संगम है। प्रत्येक धर्म का अपना—अपना दर्शन होता है। भिन्न—भिन्न धर्म अपने विश्वास, मत एवं मूल्यों के आधार पर जीवन जीने का तरीका बताते हैं। सत्य, अहिंसा, पवित्रता आदि के संबंध में प्रतेक के अपने विचार हैं परंतु यह सार्वभौमिक सत्य है, की पवित्रता किसी के शरीर या वस्तु से नहीं बल्कि हमारे दृष्टिकोण में होती है, अर्थात हम किसी वस्तु अथवा प्राणी को किस दृष्टिकोण से देख रहे हैं, यह हमारे दर्शन पर निर्भर करता है। इस प्रकार हमारे दृष्टिकोण में ही पवित्रता का वास है। धर्म हमारी आत्मा के विकास एवं उन्नयन की बात करता है तथा दर्शन हमें यह शिक्षा देता है कि हमारी जीवन शैली किस प्रकार की होनी चाहिए।

शिक्षा में धर्म दर्शन एवं मानवीय मूल्य

धर्म मानवीय जीवन को प्रेम, दया, करुणा, अहिंसा, सत्य, पवित्रता आदि गुणों के मार्ग की ओर प्रशस्त करता है। दर्शन व्यक्ति के जीवन को सार्थक बनाने हेतु विधि द्वारा जीने की राह दिखाता है तथा मानवीय मूल्य व्यक्ति के चरित्र एवं संपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। इन समस्त गुणों तथा तत्वों का योग ही शिक्षा है। वही शिक्षा सार्थक शिक्षा कहलाएगी जिसमें इन समस्त गुणों का समावेश हो। व्यक्ति के जीवन की दशा एवं दिशा को शिक्षा के माध्यम से कुशलतापूर्वक परिवर्तित किया जा सकता है। शिक्षा में मानवीय मूल्यों का निर्माण करते समय इस बात का भी अवश्य ध्यान रखा जाए कि वह व्यक्ति के वास्तविक जीवन की स्थितियों में सकारात्मक परिवर्तन ला रही हो, उनका जीवन एवं रहन—सहन का स्तर उच्च कर रही हो, उनमें सामूहिक प्रेम सौहार्द की भावनाओं का विकास कर रही हो, शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति की चहुँ ओर प्रगति उसके समाज जिसमें वह निवास करता है तथा उसके राष्ट्र के कल्याण में भी सहयोग करती है। मनोविज्ञान के अनुसार मानव मस्तिष्क में दो प्रकार के गुणों का निर्माण होता है अर्थात मस्तिष्क दो भागों दाएं एवं बांय में विभाजित होता है। दाएं हिस्से में सृजनशीलता, आत्मज्ञान, कल्पना, विश्वास, प्रेम एवं सहनशीलता जैसे भावनात्मक गुण तथा बाएं हिस्से में तर्क, निर्णय एवं पड़ताल जैसे विचारों को नियंत्रित करने का गुण होता है। शिक्षण विधियों व शैलियों का निर्माण व संगठन इस प्रकार किया जाए कि वह इन दोनों भागों का विकास करें।

मानवीय मूल्यों की आवश्यकता एवं महत्व

वर्तमान युग बड़ी तीव्रता से परिवर्तित हो रहा है जिसमें परंपरागत एवं नवीन मूल्यों में टकराव संघर्ष एवं संक्रमणशीलता दिखाई देती है। मानव मशीन तो हुआ है परंतु मनुष्यता कहीं मर गई है। ऐसी स्थिति में यह मूल ही मानवीय उपलब्धियों के विविध रूप दर्शन, कला, साहित्य, आदि में व्यवहृत होते हैं, जो समाज, राष्ट्र एवं अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों तक फैले हुए हैं। शाश्वत मूल्य सभ्यता के विकास की सबसे मूल्यवान उपलब्धि है। समाज परिवर्तन के साथ—साथ मूल्यों से संबंधित मानदंड भी परिवर्तित होते रहे हैं, अतः समाज धर्म और राज्य द्वारा निर्मित नियमों के अनुकूल चलना ही नीति है।

उपसंहार

जीवन मूल्य के सह अस्तित्व के लिए जरूरी है, परंतु आधुनिकता, पाश्चात्य विचार प्रणाली का प्रभाव तथा अंधानुकरण, आत्म केंद्रित संकीर्ण मनोवृत्ति, आपसी स्वार्थ आदि ने वात्सल्य, ममता और प्रेम से संबंधित मूल्यों को प्रभावित किया है। मनुष्य मूल्य को नहीं अपनाऐगा तो उसकी स्थित उस आदिमानव जैसी होगी जो दूसरों से छीन कर खाता था और जिसके लिए स्वार्थ ही सर्वोपरि वास्तु थी। मूल्य मानव समाज को एक उदात्ता प्रदान करते हैं। मानव इसलिए मानव कहलाता है क्योंकि वह मूल्यों को अपने जीवन में महत्वपूर्ण स्थान देता है। मानव का

विवेकपूर्ण व नरम व्यवहार उसे मूल्यवान बनाता है। यदि नैतिक शिक्षा ठीक से दी जाए तो यह शिक्षा का महत्वपूर्ण पक्ष है। पर आज जब धन अर्जन की क्षमता हासिल करने को सर्वाधिक महत्व दिया जा रहा है, ऐसी परिस्थितियों में मूल्यों को कितना महत्व मिल पाएगा यह सवाल हमारे सामने हैं।

संदर्भ

1. *मूल्य शिक्षा डॉ. कुबेर सिंह गुरु पंच नागेश्वर प्रसाद साहू, प्राचार्य एमजी महाविद्यालय भिलाई*
2. *छात्र शिक्षक इ.मक एमजे महाविद्यालय भिलाई*
3. *डॉ. वीणा शर्मा अध्यापक शिक्षा और मूल्य बोध*
4. *डॉ. ओम प्रकाश शर्मा बेहद जरूरी है शिक्षा में नैतिक मूल्यों का होना।*
5. *प्रोफेसर श्रीमती पोटकुले एच टी, मन्नू भंडारी की कहानियों में मूल्य के बोध, हिंदी विभाग शिवाजीनगर कला व विज्ञान महाविद्यालय बी.एड।*
6. *ममता गुप्ता गुरु गोविंद सिंह के काव्य में जाति संघर्ष*
7. *रामधारी सिंह दिनकर संस्कृत के चार अध्याय*

मानवीय मूल्यों में योग एवं शारीरिक शिक्षा का महत्व

डॉ. नगेन्द्र पाल
असिसटेन्ट प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा
राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर (उ0प्र0)

मानवीय मूल्यों में एक अच्छी और व्यापक शिक्षा प्रणाली से आवश्यक मानव पूंजी और ज्ञान कार्यकर्ताओं का निर्माण करने की उम्मीद की जाती है जो देश को अधिक से अधिक ऊंचाई पर ले जाये। इस सम्बन्ध में एक समग्र शिक्षा कार्यक्रम की आवश्यकता है जो शिक्षार्थियों को कठिन और नवीन कौशल के साथ–साथ मानवीय मूल्यों का ज्ञान दे सके। हालांकि शिक्षा आज बड़ी मात्रा में जानकारी प्राप्त करके परीक्षा को पास करने और भविष्य में रोजगार के लिए योग्यता हासिल करने में निहित है। यह पत्र मानव मूल्यों में शिक्षा नामक एक कार्यक्रम के कार्यान्वयक पर प्रकाश डालता है। यह कार्यक्रम शिक्षण अधिगम परिवेश में सुधार करना चाहता है जो कि बुनियादी सार्वभौमिक मूल्यों के समावेश के माध्यम से चरित्र निर्माण को बढ़ावा देगा। इस प्रकार शैक्षिक उत्तकृष्टता के लिए योगदान देगा। लगातार बढ़ते काम के बोझ और सामाजिक समस्याओं के वर्चस्व वाले काम के माहौल के कारण शिक्षक का पैसा और अधिक कठिन और कम संतोषजनक होता जायेगा। बदमाशी, नशीली दवाओं के दुरूपयोग, चोरी आदि बर्बरता और आपराधिक कृत्यों के स्कोर के माध्यम से समाज में कई व्यवहार सम्बंधी समस्याएं स्पष्ट रूप से स्कूलों में दिखाई देती है। इतने सारे बाहरी प्रभावों, मांगों और बाधाओं के साथ समाज बनाने वाले मूल्यों को पकड़ना आसान हो सकता है यदि योग एवं शारीरिक शिक्षा को जीवन में निरन्तर अपनाया जाये। तभी छात्र स्कूल में, समाज में, घर में, मानवीय मूल्यों को हासिल कर सकते है।

योग का शाब्दिक अर्थ है योक (बैलों के कन्धों पर रखने वाला)। इसका अर्थ है ब्रहाम्ड की शक्ति अर्थात् ईश्वर का गठबन्धन। योग शब्द संस्कृत की धातु युज से लिया गया है जिसका अर्थ है जोड़ना, गठबन्धन करना, बांधना तथा अपना ध्यान केन्द्रित करना। इसका अर्थ है – जुड़ना। योग हमारी इच्छा और ईश्वर की इच्छा का सच्चा गठबन्धन है।

देसाई गीता की भूमिका में कहते है तथा गांधी के अनुसार, इसका अर्थ शरीर, मन, इच्छा, विचार की सभी शक्तियों ही योग की परिकल्पना है, इसका अर्थ है आत्मा का ठहराव जिसके द्वारा हम जीवन के सभी पक्षों को एक जैसा देख सके।

भारतीय संस्कृति व विचारधारा में पृथ्वी पर प्रत्येक सर्वोच्च शक्ति अर्थात् ईश्वर द्वारा नियंत्रित होता है तथा व्यक्ति उसका एक हिस्सा है। मोक्ष प्राप्त करने के लिए योग एक रास्ता है क्योंकि इसी तरीके से जीवात्मा परमात्मा से मिल सकती है।

उपनिषद के अनुसार जब इन्द्रियां शांत हो जाऐं, जब शरीर विश्राम में हो तथा बुद्धि स्थिर हो जाती है, ज्ञानी इस स्थिति को आस्था कहते है मन तथा इंद्रियों को सुरूचिपूर्ण नियंत्रण को योग कहते है। जो इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है वह सभी से मुक्ति पा लेता है।

कार्य गतिविधियों व कार्य में विवेकपूर्ण संतुलन तथा सम रहने का नाम योग है।भगवद्‌गीता में मुख्य जोर कर्म योग को दिया गया है कर्म पर केवल तुम्हारा अधिकार है तथा उसके फल पर नहीं, कर्म का फल तुम्हारा उददेश्य कदापि नहीं होना चाहिए तथा कर्म करना बन्द नहीं करना चाहिए, सभी कार्य ईश्वर को समर्पित करके तथा लालची इच्छाओं का त्याग करें, विजय या पराजय से प्रभावित न हों, यह सम स्थिति ही योग है।

प्रस्तावना

भगवद्‌गीता में श्री कृष्ण अर्जुन को योग का अर्थ बताते हुए कहते है यह दुख और सुख से परे की स्थिति है जब मनुष्य ईश्वर से मिलकर एकाकर हो जाता है, जब उसका मन विवेक और अस्तित्व उसके नियन्त्रण में आ जाता है तथा बेचैनीसे स्वतन्त्र हो जाता है तथा वे शरीर में इस तरह रहती है जिन्हे एक योगी काबू में रख सकता है जैसे एक दीया वहां नही फड़फड़ाता जहां पर हवा नही चलती, वैसे ही योगी मन बुद्धि और स्वयं को काबू में रखता है।अपने आत्मिक बल से ही योगी पूर्णता को प्राप्त करता है, जबकि मन बुद्धि और स्वयं अपनी बेचैनी को योग साधना से ही शांत कर सकता है, तब उसे उस शाश्वत आनन्द का आभास होता है, जो इन्द्रियों द्वारा नहीं हो सकता। उसे यह खजाना सबसे बढ़िया लगता है, जिसे यह मिल गया वह विषमतम दुःख में भी विचलित नहीं होता।अतः हम कह सकते है कि योग की असली सार्थकता यही है कि वह हमें दुःख और निराशा से मुक्त करता है।

योग का मुख्य उद्‌देश्य मन पर नियंत्रण पाना है सुखी व्यक्ति वही है जो वास्तविक को अवास्तविक से शाश्वत को क्षणभंगुर से तथा अच्छे को बुरे से अपने विवेक द्वारा अलग करना जानता है।भगवद्‌गीता में अर्जुन श्री कृष्ण से पूछते है कि योग ब्रह्म परमात्मा से वार्तालाप का साधन है क्योंकि मन चंचल और अस्थिर है तो यह स्थायी कैसे हो सकता है, वह कहता है कि मन अशांत है शक्तिशाली और मनमौजी है तथा उसे काबू करना वैसा ही है जैसे हवा को नियंत्रण करना, तब श्री कृष्ण उतर देते हैं, मन चंचल है तथा उसे काबू करने में कठिनाइयां हैं, इसे सतत साधना से, शिक्षण देकर तथा इच्छाओं से मुक्ति पाकर, नियंत्रित किया जा सकता है। वह व्यक्ति जो मन को नियंत्रित नहीं कर सकता, वह यह ईश्वर मिलन नहीं कर पाता, परन्तु जिसने मन को काबू किया वह कर सकता है शर्त यह है कि वह अथक प्रयास करे तथा यही साधनों द्वारा अपनी ऊर्जा को संचालित करे।

व्यक्ति के चलने के कई मार्ग हैं, आम व्यक्ति कर्म योग द्वारा सिद्धि प्राप्त करता है जिसमें व्यक्ति कर्म और कर्तव्य द्वारा प्राप्त करता है। ऐसे व्यक्ति के दिल में लोगों के लिए प्यार

होता है तथा वह दूसरो की भलाई निःस्वार्थ भाव से करता है, प्यार निःवार्थ, सेवा पवित्र होती है, जो ऐसे लोगों से मिलते है वे शांत और पवित्र हो जाते है।

मन इन्द्रियों का शासक होता है जिसने अपना मन, इन्द्रियां, उद्वेग, विचार और संशय जीत लिये हों वह मनुष्यों में राजा होता है। यह मनुष्य परमात्मा से राजसी मिलन अर्थात् राज योग के बिल्कुल उपयुक्त है, क्योंकि योग उसके अन्दर रौशनी भर देता है, जिसमे अपने मन को जीत लिया उसका स्वयं पर पूर्ण नियंत्रण हो जाएगा। केवल योग ही मन को जीतने के तरीके बताता है। योग शांति और नीरवता लाता है तथा ईश्वर के सम्मुख सम्पूर्ण समर्पण के लिए मन को तैयार करता है।

शारीरिक शिक्षा शब्द दो अलग शब्दों से मिलकर बना है शारीरिक एवं शिक्षा शरीरिक शब्द का साधाराण अर्थ शरीर संबंधी विभिन्न क्रियाओं से है। इसका एक या सभी शरीरिक विशिष्टताओं से सम्बंध हो सकता है। यह शारीरिक बल, शारीरिक क्षमता, शारीरिक फिटनेस, शारीरिक बनावट और स्वास्थ्य आदि के रूप में भी जाना जाता है। शिक्षा शब्द से अभिप्राय सुव्यवस्थित ढंग से निर्देश या प्रशिक्षण या जीवन की क्रमबद्ध से तैयार या किसी कार्य विशेष के लिए दिये जाने वाले दिशा निर्देश से है। इन दोनों शब्दों का संयुक्त अर्थ शारीरिक क्रियाशीलता या कार्यकलापों के कार्यक्रम के व्यवस्थित निर्देश या प्रशिक्षण से लिया जाना चाहिए जो कि मानव शरीर के विकास और उसे बनाये रखने अथवा शारीरिक शक्तियों या शारीरिक स्फूर्ति के संचरण के लिए नितांत आवश्यक है।

शिक्षा एक कार्यकलाप का प्रतिभास है, कोई भी व्यक्ति कार्यकलापों से ही सीखता है, शिक्षा केवल क्लासरूम तक ही सीमित नहीं है, यह खेल के मैदान, पुस्तकालय अथवा यहां तक कि घर में भी सीखी जा सकती है। हमारे दैनिक जीवन के सम्बंध में सार्थक अर्थ रखती है। शारीरिक क्रियाकलापों में और उनके द्वारा दी जाने वाली शिक्षा है। शारीरिक शिक्षा वह है जो शारीरिक विकास के साथ शुरू होती है और मानव जीवन को पूर्णता की ओर ले जाती है जिसके परिणामस्वरूप वह एक हष्ट–पुष्ट और मजबूत शरीर, अच्छे स्वास्थ्य, स्फूर्ति और सामाजिक एवं भावनात्मक संतुलन रखने वाला व्यक्ति बन जाता है। शारीरिक शिक्षा शारीरिक क्रियाकलापों के माध्यम से दी जाने वाली शिक्षा का एक तरीका है जो मानव वृद्धि, विकास और व्यवहार के मूल्यों के लिए होती है। सर्तकता विकसित करें, अपनी सुधबुध रखें, अनुशासन, सहयोग और सम्मान भावना, सहानुभूति एवं उदारता का परिचय दे जो कि एक लोकतंत्रात्मक विश्व में सुखी व अच्छा जीवन जीने के लिए परम आवश्यक है। इसीलिए शारीरिक शिक्षा हमारे राष्ट्रीय जीवन में अपना अहम योगदान देती है।

सर्वाधिक दूरवर्ती ध्येय को उददेश्य के रूप में उल्लिखित किया जाता है और यह दिशा और रास्ते की ओर संकेत करता है उददेश्य के लक्ष्य देखने में आम दिखायी देते है और

वास्ताविक से परे होते है ताकि यह निरंतर ध्येय की मदद करते है कवि ब्राउनिंग की यह पंक्तियां दर्शाती हैः

आह मनुष्य की पकड़ उसकी पहुँच से बड़ी होनी चाहिए अथवा स्वर्ग किस लिये है?

लक्ष्य को किसी भी सूरत में अव्यवहारिक नहीं होना चाहिए बल्कि उसे व्यवहारिक रूप में प्रयोजन का संकेत देना चाहिए। शारीरिक शिक्षा के लक्ष्यों के सम्बन्ध, सामाजिक हित वाले होते हैं। उन्होंने एक प्रयोजन, एक दिशा, की ओर संकेत किया है और इसके बावजूद उददेश्य की सच्चाई को नहीं जाना जा सकता है क्योंकि हमेशा बेहतर अवसर उपलब्ध होते रहते हैं। 1893 में थामस वुड ने कहा था शारीरिक शिक्षा भी उतना ही व्यापक उददेश्य लिए हुए है जितना कि शिक्षा स्वयं लिए हुए होती है और उतनी ही मानव जीवन के लिए उत्कृष्ट एवं प्रेरक है।

ऊपर दी गई परिभाषाओं में सम्पूर्ण अवधारणा पर बल दिया गया और एक संघटित एवं समायोजित व्यक्ति के विकास के लिए पर्याप्त सुविधांए उपलब्ध कराने का उल्लेख किया गया है, ताकि वह एक समृद्ध उल्लासित और परिपूर्ण जीवन जी सकें। संक्षेप में शारीरिक शिक्षा का उददेश्य व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास है जो उसके सम्पूर्ण जीवन के लिए आवश्यक है।

लक्ष्य उददेश्य को जानने का विशिष्ट एवं परिशुद्ध साधन है, लक्ष्य सीढ़िया है जो आगे बढ़ती हैं और उददेश्य की यथार्थता से अवगत कराती है, इसे अत्यंत लाभप्रद समझा जाता है क्योंकि ये उददेश्य के मानदंडो को नापती हैं। लक्ष्य वांछनीय होते हैं जिन्हें प्राप्त किया जाना संभव है और जिनके द्वारा ध्येय यथार्थ के निकट आता है।

शारीरिक शिक्षा के लक्ष्यों को विभन्न विद्वानों ने समय—समय पर अपने—अपने शब्दों में परिभाषित किया है।

1880 में डुडले ए सार्जेट ने स्वास्थ्यकर, शिक्षाप्रद, मनोरंजनात्मक व निरानात्मकता को शारीरिक शिक्षा का लक्ष्य बताया है।

1934 में कमेटी आन आब्जेक्टिब्ज आफ द अमेरिकन फिजीकल एजुकेशन एसोसिएशन ने पांच लक्ष्यों को सूचीबद्ध कियाः—

1. शारीरिक फिटनेस 2. मानसिक स्वास्थ्य एवं स्फूर्ति 3. सामाजिक नैतिक चरित्र 4. भावात्मक अभिव्यक्ति और नियंत्रण ओर 5. गुण—दोष विवेचन।

स्वास्थ्य की परिभाषा में जीवन शक्ति या ओज का उल्लेख करना आवश्यक है। जो ऊपर उल्लेख किये हुये लक्षणों के अनुसार स्वास्थ्य से युक्त व्यक्ति होगा उसके व्यवहारों में स्फूर्ति और तत्परपा एवं अथक परिश्रम की पात्रता दिखायी देगी। इन्ही गुणों को जीवन शक्ति या ओज कहा जाता है। युवा व्यक्तियों में इसकी मात्रा भरपूर पर्याप्त पायी जाती है। बढ़ती आयु के साथ वृद्ध व्यक्तियों में ओज की कमी होने लगती है यद्यपि व स्वस्थ्य रह सकते हैं।

थोंडे शब्दों में स्वास्थ्य की परिभाषा हम इस प्रकार कर सकते हैं कि स्वास्थ्य एक ऐसी अवस्था है जो विभिन्न गुणों के फलस्वरूप प्राप्त होती है जैसे शारीरिक सामर्थ्य, शरीर की सभी क्रियाओं का तथा मन का संतुलन, किसी भी व्यक्ति में ओज एवं नैतिक मूल्यों का अधिष्ठान, इनमें से किसी एक की कमी हुयी तो मनुष्य के जीवन पर तथा उनके अंतर्गत स्वास्थ्य पर अभाव डालने वाली परिस्थितियों में बाहा वातावरण का एक प्रमुख स्थान होता है। बाहा वातावरण या पर्यावरण के इस प्रभाव के प्रति हम प्रायः सजग नहीं होते हैं क्योंकि उनका हमें अलग से कोई एहसास नहीं होता। दिन और रात, सर्दी–गर्मी, वर्षाकाल आदि मौसम इनकी नियमितता के हम इतने आदी हो जाते है कि उनके संबंध में विशेष प्रकार से अलग से कुछ सोचने का मौका कम ही रहता है। जिस बाह्रय वातावरण मे हमारा जीवन चलता है वह प्राय स्वास्थ्य के लिए अनुकूल होता है, इसीलिए हमारा ध्यान उसी और विशेष प्रकार से नहीं जाता, परन्तु पृथ्वी पर सभी स्थान इस प्रकार स्वास्थ्य के लिए अनुकूल नहीं होते जैसे उत्तर या दक्षिण ध्रुव प्रदेशों में अत्यन्त सर्दी के कारण, रेगिस्तान में अत्यन्त गर्मी तथा पानी के अभाव के कारण, कोई रहना पसंद नहीं करता। ऊँचे पहाड़ों में वातावरण में प्राण वायु की मात्रा कम होने से मनुष्य का रहना असंभव होता है, इसी प्रकार दलदल के प्रदेशों में भी मनुष्य की आबादी बहुत कम होती है। बाह्रय वातावरण में प्राणवायु तथा जल की पर्याप्त मात्रा होना, वायु का दबाव अधिक या कम न होना, जीवन के लिए घातक विषैली वायु का न होना, ताप की मात्रा अनुकुल मर्यादा में होना तथा भोजन की सामग्री उपलब्ध होना ये सभी बातें महत्व रखती हैं। इनकी अनुकूलता पृथ्वी पर जहां होती है वहां मनुष्य का जीवन प्रचुर मात्रा में विकसित हुआ है। पर्यावरण में जगलों के नष्ट होने से जो प्रतिकूल परिणाम हो रहे हैं उनका एहसास मनुष्य को अभी होने लगा है। सामाजिक वानिकी के द्वारा खोये हुए संतुलन को पुनः प्रस्थापित करने के प्रयास पृथ्वी पर अनेक देशों में होने लगे हैं, इन्हीं से पर्यावरण के स्वास्थ्य तथा जीवन पर प्रभाव स्पष्ट रूप से सामने आते हैं।

पर्यावरण के ही समान स्वास्थ्य पर प्रभाव डालने वाली और एक बात है आनुवंशिकता, मनुष्य अपने शारीरिक तथा मानसिक गुणधर्मो मे से बहुत से गुण धर्म अपने माता–पिता से तथा पूर्व की पीढ़ियो से प्राप्त करता है जैसे त्वचा का और बालों का रंग, गंजापन, आंखो का रंग, शरीर की लंबाई तथा दमा, मधुमेह आदि रोग, परन्तुं सभी गुणधर्म आनुवंशिक नहीं होते जैसे माँ बाप निरक्षर हों तब भी उनकी संतान बुद्धिमान हो सकती है तथा बुद्धिमान माता–पिता की संतान भी निबुर्द्धि हो सकती है।

अनुवांशिकता तथा बाह्रय वातावरण इन दोनो का एक दूसरे पर भी बहुत गहरा प्रभाव होता है, अर्थात मनुष्य का स्वास्थ्य, पर्यावरण एवं आनुवांशिकता के एक दूसरे पर होने वाले प्रभाव का ही परिणाम है। इन दोनों की यदि अनुकूलता रहे तो वह बात स्वास्थ्य के लिए बहुत ही उपयुक्त होगी। परन्तु क्या पर्यावरण तथा अनुवांशिकता की अनुकूलता से मनुष्य का स्वास्थ्य अपने आप बरकरार रहेगा इन प्रश्न के उत्तर में यह कहना पड़ेगा कि स्वास्थ्य की रक्षा के लिए

केवल इतना काफी नहीं है क्योंकि अपने कर्मो से गलत व्यवहार से मनुष्य सवास्थ्य को खो सकता है। इन व्यवहारों के प्रति सतर्क रहना आवश्यक होता है क्योंकि पर्यावरण तथा अनुवांशिकता के अलावा वे भी स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं। ये बाते हैं अचार और व्यवहार में तालमेल, भोजन की आदतें, काम और आराम में संतुलन, स्वच्छता तथा व्यायाम ये सभी स्वास्थ्य रक्षा के आवश्यक पहलू है इनकी और पर्याप्त ध्यान न देना, उनके महत्व का एहसास न होना, यह अस्वास्थ्य का एक प्रमुख कारण बन जाता है। इस कारण को खत्म करने के लिए योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा बहुत ही लाभ दायक सिद्ध होते है।

संदर्भ

1. *आनन्द, श्री, द कम्पलीट बुक ऑफ योग, हारमानी ऑफ बॉडी एण्ड माईड, ओरियन्ट पेपरबैक, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली 1999।*
2. *निरजनांनद, परमहंस, योगा दर्शन विजन आनॅ योग उपनिषद, श्री पंचदशनम परमांहंस, अलाशबाडा, दियोगर, बिहार, भारत, 1993।*
3. *फिजीकल एजुकेशन प्लेटफार्म, अमेरिकन एसोसिएशन फार हेल्थ, फिजीकल एजुकेशन, रीक्रिएशन।*
4. *1934 में कमेटी आन आब्जेक्टिव आफ द अमेरिकन फिजीकल एजुकेशन एसोसिएशन।*

शिक्षा में मानव मूल्य और व्यावसायिक नैतिकता की भूमिका

डॉ. नीता गुप्ता[1], कीर्ति सिंह[2]
[1]एसोसिएट प्रोफेसर एण्ड हेड, शिक्षा शास्त्र विभाग
[2]शोधार्थिनी, शिक्षा शास्त्र विभाग
आईएफटीएम विश्वविद्यालय, मुरादाबाद।

किसी भी मनुष्य के जीवन में मूल्यों का अहम योगदान रहता है क्योंकि इन्हीं के आधार पर अच्छा—बुरा य सही गलत की परख की जाती है। मनुष्य के जीवन की सबसे पहली पाठशाला उसका अपना परिवार ही होता है और परिवार समाज का एक अंग है, उसके बाद उसका विद्यालय जहाँ से उसे शिक्षा हासिल होती है। परिवार समाज और विद्यालय के अनुरूप ही एक व्यक्ति में सामाजिक गुणों और मानव मूल्यों का विकास होता है। प्राचीनकाल से भारत में पाठशालाओं में धार्मिक शिक्षा के साथ मूल्य आधारित शिक्षा भी जरूरी होती थी। शिक्षा लोगों के ज्ञान और कौशल को विकसित करने की एक प्रक्रिया है। यह ज्ञान और कौशल उसके जीवन में लागू होते है। इस बात पर भी ध्यान देना जरूरी है कि शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति और तकनीकी दक्षता नहीं हो, हालांकि आज के समय में यह सब चीजें भी बहुत ही महत्वपूर्ण हैं, लेकिन असल में शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो छात्रों में ऐसी समझ और तार्किक शक्ति विकसित करें जो उन्हें एक जिम्मेदार नागरिक बना सकें एवं छात्रों में मानव मूल्य की समझ विकसित करें। एक अच्छा छात्र न केवल कक्षा में नैतिक मूल्यों का प्रतीक वरन् अन्य छात्रों को भी नैतिक मूल्यों का ज्ञान कराता है। शिक्षक भी छात्रों को नैतिक एवं शिष्टाचारी बनाने में अहम भूमिका निभाते है। शिक्षाविदों के पास रोचक ढंग से छात्रों तक अध्ययन सामग्री व प्रेरक संदेश पहुँचाने के ढेरों तौर तरीके होते हैं, पर मूल बात यही है कि क्या मौजूदा शिक्षा व्यवस्था में इन नैतिक मूल्यों को समुचित महत्व देने को तैयार हैं। तर्कसंगत बात तो यह है कि यदि नैतिक शिक्षा ठीक से दी जाए तो यह शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है। पर आज धन अर्जन की क्षमता हासिल करने को सर्वाधिक महत्व दिया जा रहा है, इन नैतिक मूल्यों को शिक्षा में कितना महत्व मिल पाएगा यह सवाल हमारे सामने है। मानव मूल्यों के समावेश होने से छात्रों में शिक्षा का स्तर बढ़ता है वह छात्र आगे जाकर एक अच्छा शिक्षक एवं एक अच्छा व्यवसायिक बनता है।

प्रस्तावना

किसी भी इंसान के जीवन में मूल्यों का अहम योगदान रहता है, क्योंकि इन्हीं के आधार पर अच्छा बुरा या सही गलत की परख की जाती है इंसान के जीवन की सबसे पहली पाठशाला

उसका अपना परिवार ही होता है और परिवार समाज का एक अंग है उसके बाद उसका विद्यालय जहाँ से उसे शिक्षा हासिल होती है। परिवार समाज और विद्यालय के अनुरूप ही एक व्यक्ति में सामाजिक गुणों और मानव मूल्यों का विकास होता है। प्राचीनकाल के भारत में पाठशालाओं में धार्मिक शिक्षा के साथ मूल्य आधारित शिक्षा भी जरूरी होती थी, लेकिन वक्त के साथ यह कम होता चला गया और आज वैश्वीकरण के इस योग में मूल आधारित शिक्षा की भागीदारी लगातार घटती जा रही है। संप्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा, असंहिष्णुता और चोरी डकैती आदि की बढ़ती प्रवृत्ति समाज में मूल्यों के विघटन के ही उदाहरण है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मनुष्य के लिए शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। यह मनुष्य को सत्य, सुसंगत तथा नियमित बनाती है। मनुष्य की बौद्धिक शक्तियों का विकास शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है। मनुष्य में इन गुणों का विकास मूल्य आधारित शिक्षा द्वारा ही सम्भव होता है। इस प्रकार की शिक्षा से व्यक्ति एवं समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति भी की जाती है। ''मूल्य आधारित शिक्षा का सम्बन्ध व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास से होता है। इस प्रकार के विकास में जानकारी (ज्ञान) के साथ नैतिक और सौन्दर्यानुभूति गुणों की संवदेनशीलता सम्मिलित होती है। मूल्य आधारित शिक्षा के बिना मानव के नैतिक व्यवहार की गिरावट को नहीं रोका जा सकता है और भावात्मक अभिवृत्तियों में परिवर्तन भी सम्भव नहीं हो सकता है। वर्तमान में व्यक्ति अधिक स्वार्थी है। बिना व्यक्तिगत लाभ के मूल्यों को महत्व नहीं देगा। इसलिए मूल्य आधारित शिक्षा की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त आज समाज में वैज्ञानिक तथा आर्थिक मूल्यों को अधिक महत्व दिया जाने लगा है। आर0एस0 कालरा का अनुभव है कि नैतिक संस्कृति को वैज्ञानिक चिन्तन प्रभावित कर रहा है। पाश्चात्य वैज्ञानिक संस्कृति एवं तकनीकी विकास समान रूप से नैतिक संस्कृति को प्रभावित कर रहा है। अतीत के ऐतिहासिक आलेखों में महान सभ्यता के समय संस्कृति, आदर्श तथा तकनीकी का समान अस्तित्व था इसलिए शिक्षा को मूल्य–आधारित बनाया जाए। मूल्य शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोग एक दूसरे को नैतिक मूल्य देते है। यह एक ऐसी गतिविधि है जो किसी भी मानवीय संगठन में हो सकती है जिसके दौरान लोगों को दूसरों के द्वारा सहायता प्रदान की जाती है जो अधिक उम्र के हो सकते हैं। इन मूल्यों और सम्बन्धित व्यवहार की प्रभावशीलता का आंकलन करने के लिए, हमारी नैतिकता को स्पष्ट करने के लिए, अनुभवी स्थिति में अपने स्वयं के और दूसरो के दीर्घकालिक कल्याण के लिए, और अन्य मूल्यों और व्यवहार को वे स्वयं और दूसरों के कल्याण के लिए अधिक प्रभावी होने के रूप में पहचानते है।

शिक्षा का मूल्य

एक विशिष्ट रूप में मूल्य की परिभाषा करते हुए भारतीय समाजशास्त्री राधाकमल मुकर्जी ने लिखा है कि– जिनका अन्तरीकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है और जो व्यक्तिनिष्ठ अभिमान तथा अभिलाषायें बन जाती है। मनुष्य को अपने परिस्थितिगण

पर्यावरण से एक संतुलन बनाये रखने की आवश्यकता होती है। अपने जीवन निर्वाह एवं भरण–पोषण सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है और अपने व्यक्तित्व तथा संस्कृति के मध्य एक आदान–प्रदान की प्रक्रिया में भी सम्मिलित होना पड़ता है। ऐसी स्थिति में यदि समाज के सदस्यों के लिए, समाज द्वारा कुछ अधिमानों, मानदण्डों तथा सामूहिक अभिलाषाओं को व्यवहार के आधार के रूप में प्रस्तुत न किया जायें तो समाज में अव्यवस्था, असुरक्षा और अशान्ति का अधिकार हो जायेगा। इस स्थिति को टालने के लिए ही भारतीय समाज में कुछ मानदण्ड इच्छायें एवं लक्ष्य विकसित किये गये है जो कि समाज में प्रचलित है जिन्हें व्यक्ति सीखने की प्रक्रिया की अवधि में अपने व्यक्तित्व में सम्मिलित कर लेता है। यह सत्य है कि मनुष्य को मूल्य अपने जीवन से, अपने पर्यावरण से, अपने आप से, समाज और संस्कृति से, ही नहीं अपितु मानव अस्तित्व एवं अनुभव से भी प्राप्त होते हैं। अब बात आती है संस्कृति की, संस्कृति जीवन का एक अंग है, परन्तु इसके विशाल रूप के विषय में मानव अनभिज्ञ रहता है। यद्यपि भारतीय संस्कृति का प्रारम्भिक इतिहास उपलब्ध नहीं है, तथापि जनश्रुतियों के अनुसार इसका शुभारम्भ सृष्टि के प्रारम्भ से ही हुआ है।

अतः निष्कर्ष रूप से शिक्षा नीति निर्माताओं को शिक्षा पर अधिक जोर देने की आवश्यकता है ताकि मानवीय मूल्यो और संपादन पर जोर दिया जा सके। इसके लिए महज शिक्षा से ही बेहतर परिणाम होंगे। मूल्य आधारित शिक्षा प्रदान करना समय की आवश्यकता है। तनाव, धैर्य, ईमानदारी, सहिष्णुता, सहानुभूति और साथी, भईयों और बहनों के लिए प्यार, जैसे मूल्यों पर होना चाहिए। छात्रों को सर्वोच्च प्राथमिकता के रूप में मूल्यों को रखने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। युवाओं को न केवल यह सिखाया जाना चाहिए कि उनके कौशल, प्रतिभा और क्षमताओं को कैसे विकसित किया जाए, उन्हें यह भी सिखाया जाना चाहिए कि कैसे इन कौशल प्रतिभाओं और क्षमताओं का उपयोग सभी के कल्याण और बेहतरी के लिए किया जाए। एक बार जीवन में मूल्य सभी की प्राथमिकता बन जाते हैं। जीवन के सभी नकारात्मक पहलू अपने आप कम हो जायेंगे। दुनिया को उच्च मूल्यों वाले लोगों की सख्त जरूरत है, ताकि वह इसमें रहने के लिए बेहतर जगह बना सकें। छात्रों को न केवल मूल्य को समझना है, बल्कि उन्हे उनके दृष्टिकोण और व्यवहार में प्रतिबिंबित करना है और अच्छी नागरिकता और नैतिकता के माध्यम से योगदान करना है।

मूल्यों के विविध आयाम; ISBN: 978-93-93248-08-4

योग, शारीरिक शिक्षा एवं मानवीय मूल्य

ममता रानी[1], डॉ. नीता गुप्ता[2],
[1]शोधार्थिनी (शिक्षा शास्त्र)
आईएफटीएम विश्वविद्यालय, मुरादाबाद (उ0 प्र0)
[2]ऐसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्षा शिक्षा शास्त्र विभाग

प्रस्तावना

किसी भी कार्य को करने के लिए उसका ज्ञान तथा जानकारी होना बहुत महत्वपूर्ण है, तथा इसके साथ साथ उसके किए जाने के तरीको का बोध होना भी परम आवश्यक है। ज्ञान के पश्चात उसके सुपरिणाम एवं दुष्परिणाम की भी जानकारी होनी चाहिए। योग, शारीरिक शिक्षा एवं मानवीय मूल्यों की व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में अहम भूमिका होती है। शिक्षा में व्यक्ति, समाज तथा राज्य के अनिवार्य तत्वों को शामिल किये जाने की आवश्यकता रहती है। तब वह समग्र तथा पूर्ण शिक्षा हो पाती है।

वास्तव में शिक्षा, योग एवं मानवीय मूल्य व्यक्तित्व तथा चरित्र निर्माण का सर्वाधिक सशक्त साधन है। योग और शिक्षा व्यक्ति के सर्वागीण विकास, समाज की चर्तुमुखी उन्नति और सभ्यता की बहुमुखी प्रगति की आधार शिला है। शिक्षित तथा स्वस्थ व्यक्ति समाज के प्रतिनिधि परिमार्जक के रूप में कार्य करता हैं। योग एवं शारीरिक शिक्षा कोई वस्तु न होकर जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया हैं

योग

योग भारतीय प्राचीन संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। भारत ही विश्व का एकमात्र ऐसा देश है जहॉ पर योग का जन्म हुआ। भारत की इस पावन धरती पर ही योग ने विभिन्न ऊॅचाइयों को छुआ है, एवं योग के क्षेत्र में पूरे विश्व में नये आयामों को स्थापित कर भारत का गौरव बढ़ाया है। जब भारत में वैदिक काल (Vedic Period) का प्रादुर्भाव हुआ, तभी से योग का भी इस भारत धरा पर अवतरण हुआ।

विभिन्न प्राचीन ग्रन्थों, महाकाव्यों, वेदों में योग की महिमा का गुणगान किया गया है। वैदिक काल की मानवजाति को सबसे बड़ी देन योग ही है।

योग भारत में एक आध्यात्मिक प्रक्रिया को कहते है। शरीर, मन और आत्मा के एक साथ लाने का काम योग है। योग शब्द 'युज समाधौ' आत्म ने पदी दिवादिगणीय धातु में 'ध– प्रत्यय लगाने से निष्पन्न होता है। इस प्रकार योग शब्द का अर्थ समाधि अर्थात भिन्न वृत्तियों का निरोध।

प्रत्येक वर्ष 21 जून को विश्व योग दिवस के रूप में मान्यता दी है। योग भारतीय दर्शन की पाँच हजार वर्ष पुरानी शैली है। स्वस्थ तन एवं मन की प्राप्ति हेतु भारतीय साधना पद्धति योग है।

साख्य दर्शन के अनुसार–''पुरूष एवं प्रकृति के पार्थव्य को स्थापित कर पुरूष का एक स्वरूप में अवस्थित होना ही योग है।

बौद्ध धर्म – ''कुशल चित्त की एकाग्रता योग है''

श्रीमद्भागवत गीता में श्री कृष्ण जी ने एक स्थल पर कहा है कि ''योगः कर्मसु कौशलम् (कर्मो में कुशलता ही योग है।)''

पंतजालि योग दर्शन के अनुसार – ''चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।''

- **मन्त्र योग** – मंत्र का सामान्य अर्थ है मन को पार करने वाला। मंत्र योग का संबधं मन से है जो मनन चिंतन करता है वही मन की चंचलता का निरोध मंत्र के द्वारा करना मंत्र योग है।
- **हठ योग** – हठ का शाब्दिक अर्थ हठपूर्वक किसी कार्य करने से लिया जाता है।
- **लय योग** – चित्त का अपने स्वरूप में विलीन होना या चित्त की निरूद्ध अवस्था लय योग के अन्तर्गत आता है।
- **राज योग** – राजयोग सभी योगों का राजा कहलाता जाता है क्योंकि इसमें प्रत्येक प्रकार के योग की कुछ न कुछ सामग्री अवश्य मिल जाती है।

योग के उद्देश्य

योग का उददेश्य व्यक्ति का सर्वागीण विकास कर उसे परम तत्व के साथ जोड़ना या मिलाना है –

कम संख्या	योग के उददे्श्य	AMIS OF YOGA
1	शारीरिक उददे्श्य	PHYSICAL AIM
2	चारित्रिक उददे्श्य	CHARACTERIC AIM
3	आध्यात्मिक उददे्श्य	SPIRITUAL AIM
4	अनुशासनात्कम उददे्श्य	DISCIPLINARY AIM
5	राष्ट्रीय उददे्श्य	NATIONAL AIM
6	अन्तर्राष्ट्रीय उददे्श्य	INTERNATIONAL AIM

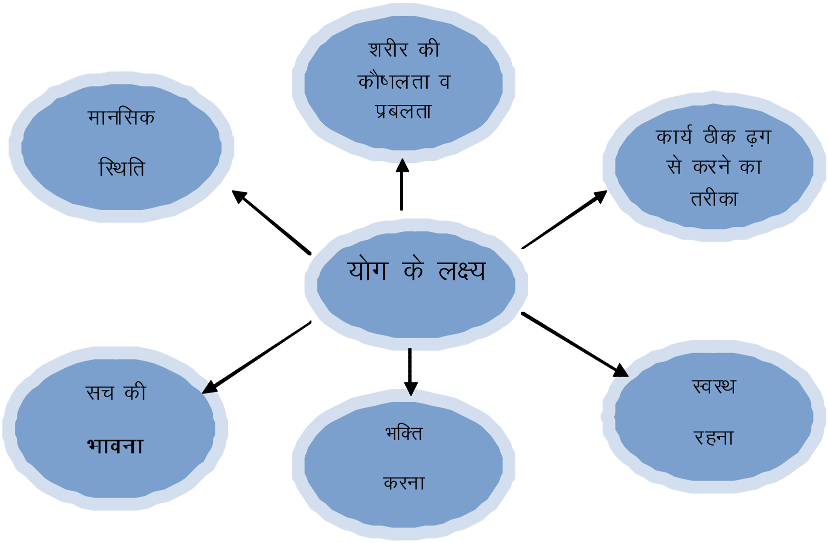

शारीरिक शिक्षा

यह कहावत सही है कि ''एक सुविकसित निरोग शरीर में एक स्वस्थ निरोग मस्तिष्क का निवास होता है।'' शारीरिक विकास बालको के सोचने, समझने – समझाने तथा कार्य करने के तरीकों को प्रभावित करता है शारीरिक विकास पर ही बालक के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास की नींव आधारित होती है।

शारीरिक शिक्षा वह शिक्षा है जो स्वस्थ शारीरिक विकास हेतु विविध आंगिक क्रियाओ द्वारा दी जाती है जो न केवल बालक के शारीरिक पक्ष को ही शक्तिशाली व पुष्ट बनाती है वरन इसके द्वारा व्यक्तित्व के विबिध पक्ष यथा–मानसिक, संवेगात्मक, समाजिक एवं नैतिक भी सुविकसित होते है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शारीरिक शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है ''शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य कार्यक्रमों का एक अति अनिवार्य अंग है, शारीरिक शिक्षा मात्र शारीरिक

डील या व्यायाम नहीं है अपितु इसमें वे सभी खेल एवं शारीरिक क्रियाओं सम्मिलित है जिसमें शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक विकास होता है।

भारतीय शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में शारीरिक शिक्षा के महत्व के बारे में लिखा है कि ''शारीरिक शिक्षा केवल शारीरिक क्षमता में वृद्धि करने वाला विषय मात्र नहीं है अपितु इसके नेतृत्व, आज्ञाकारिता, सन्तुलन आदि के साथ शारीरिक सक्षमता पैदा होती है।

आवश्यकता एवं महत्व

शारीरिक शिक्षा के महत्व का निम्न विन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है–

- सामाजिकता क्षमता का विकास
- मानसिक विकास में वृद्धि
- शिक्षण संस्था के प्रति प्रेम
- अवकाश के समय का सदुपयोग
- शारीरिक क्षमताओं (कौशल का विकास)
- आर्थिक क्षमता एवं राजनितिक क्षमता में वृद्धि

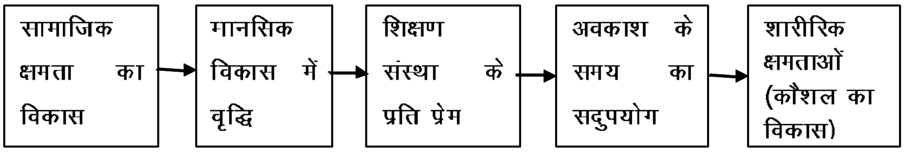

उददे्श्य

शारीरिक शिक्षा के उददे्श्य राष्ट्र की तथा नागरिकों की आवश्यकताओ को ध्यान में रखकर निर्धारित होने चाहिये। इसी धारणा को आधार मानकर शारीरिक शिक्षा के उददे्श्यो का निर्माण किया गया है–

- स्वस्थ आदतों का विकास करना
- नैतिक तथा शारीरिक गुणों का विकास करना
- सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना
- जीविकोपार्जन का उददे्श्य
- स्वस्थ मनोवृत्ति विकसित करना

मानवीय मूल्य (Human Values)

मूल्य शब्द से तात्पर्य किसी भौतिक वस्तु अथवा मानसिक अवस्था के उस गुण से है जिसके द्वारा मनुष्य के किसी उददे्श्य अथवा लक्ष्य की पूर्ति होती है। मूल्यों का व्यक्ति के आचरण, व्यक्तित्व तथा कार्यो पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

पाँच सार्वभौम मूल्य है – सत्य, सदाचार, शान्ति, प्रेम, अहिंसा।

मानवीय मूल्य में हमारे सामने एक प्रश्न उठता है कि युग्मूल्य 'आखिर बनें कैसे' अर्थात एक काल विशेष में एक समाज के अन्तर्गत वे कौन से कारक है जो मूल्यों को बनाने मे सहायक है? इस प्रकार का उत्तर देने के लिए हमें व्यक्ति, समाज तथा शिक्षा तीनों की सम्पूर्ण गतिविधियों का अवलोकन करना होगा। छात्र वह बीज है जो अपने अन्दर समस्त मूल्यों के विकास को समेटे हूए है। शिक्षा वह परिवेश है जो इस बीज को खाद–पानी देकर उसे विकसित होने का अवसर प्रदान करती है। इस दोनो के योगदान से ही मूल्यों का उद्भव होता है। शिक्षा समाज की वह सीढ़ी है जिस पर पांव रखकर व्यक्ति अपने संस्कारों को सँवारता है और शिक्षा को दिशा प्रदान करता है।

- मूल्य के दो पहलू होते है प्रथम विषय वस्तु तथा दूसरा तीव्रता
- मूल्य अमूर्त होते है
- मूल्य कुछ अंश तक आंतरिक भाव होते है जो व्यक्तित्व मे प्रतिबिम्बित होते है।

दृष्टि कोण के आधार पर मूल्य

- सकारात्मक मूल्य – अहिंसा, शान्ति, धैर्य, आदि।
- नकारात्मक मूल्य – हिंसा, अन्याय, कायरता, आदि।

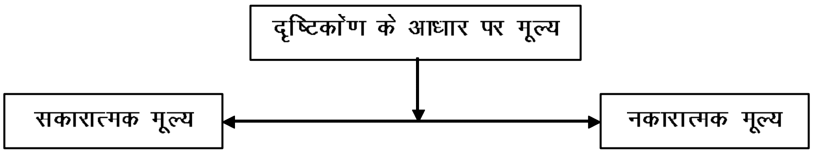

उददे्श्य के आधार पर मूल्य

- साध्य मूल्य – वे सभी वस्तुये या अवस्थाएँ जो स्वयं मे शुभ होती है।
- साधन मूल्य – जो अपने आप मे शुभ न होकर किसी अन्य वस्तु के साधन के रूप में शुभ होता है।

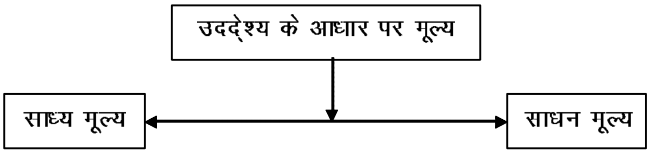

विषय क्षेत्र के आधार पर मूल्य

- सामाजिक मूल्य – अधिकार, कर्तव्य, न्याय, आदि।
- मानव मूल्य – नैतिक मूल्य, आध्यात्मिक मूल्य, आदि।
- आध्यात्मिक मूल्य – शान्ति, प्रेम, अहिंसा, आदि।
- भौतिक मूल्य – भोजन, मकान, वस्तु, आदि।
- मनोवैज्ञानिक मूल्य – प्रेम, दया, आदि।

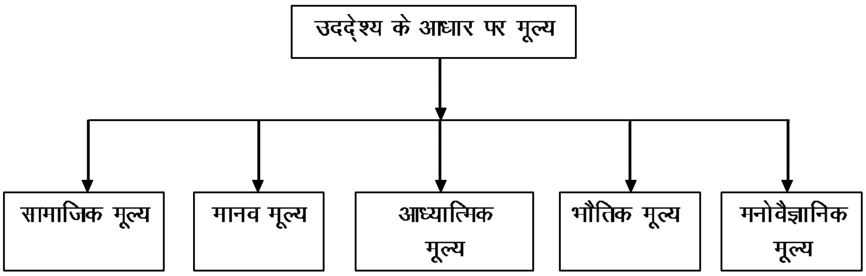

कार्य क्षेत्र के आधार पर मूल्य

- न्यायिक मूल्य – सत्यनिष्ठता, निष्पक्षता, आदि।
- राजनीतिक मूल्य – सेवा, ईमानदारी, आदि।
- व्यावसायिक मूल्य – जबाव देही, जिम्मेदारी, सत्यनिष्ठा, आदि।

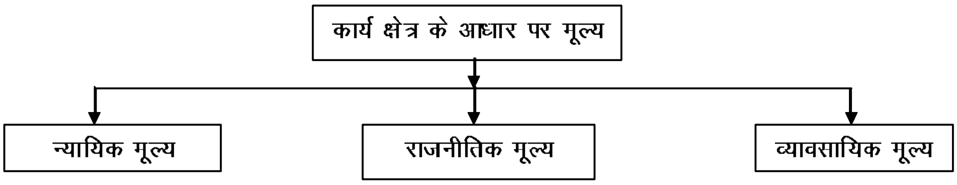

भगवान बुद्ध ने वताया है – ''मानवीय मूल्य है कि आप बेशक हीरा हो पर सामने वाला आपकी कीमत अपनी जानकारी व अपनी हैसियत के अनुसार लगाएगा।''

निष्कर्ष एवं सुझाव

वर्तमान समय में अपनी व्यस्त शैली के कारण लोग संतोष पाने के लिये योग करते है योग से न केवल व्यक्ति का तनाव दूर होता है बल्कि मन और मस्तिष्क को भी शांति मिलती है। शिक्षा प्रक्रिया में ज्ञान और शिक्षक का स्थान महत्वपूर्ण है। बालक के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास करना शिक्षा का उददेश्य बन गया है। शारीरिक शिक्षा का महत्व व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन के साथ–साथ राष्ट्रीय जीवन में भी अधिक है।

भारत एक प्रजातान्त्रिक राष्ट्र है, जनतन्त्र में व्यक्ति को जीवन जीने के स्वतन्त्र एवं खुले अवसर प्राप्त होते है यह स्थिति प्रतियोगिता को जन्म देती है। प्रतियोगिता में भाग लेने तथा सफल होने के लिये सही आदतों का निर्माण आवश्यक है। यह कार्य शारीरिक शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

दुनिया का प्रत्येक मानव सुखी होकर जीना चाहता है। यही मानव की मूल चाहत है। हर कोई इस चाहत को पूरा करना ही चाहता है। जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन, ज्ञान और मानवीयता, पूर्ण आचरण, ज्ञान, समझ में आने पर ही खुशी देने का रास्ता बनता है। इसमें ही सर्वसुख का आधार है। मानवीय मूल्य सार्वभौमिक पाँच मूल्य माने है जैसे – सत्य, सदाचार, शान्ति, प्रेम और अहिंसा महत्वपूर्ण है। मानवीयता पूर्ण आचरण में विश्वास होने से मानव मूल्य चरितार्थ होता है। हमारे देश में योग गुरू के नाम से प्रख्यात बाबा रामदेव जी ने योग के बारे में टीवी के माध्यम से बहुत प्रचार किया है जिसमें कई तरह के आसन और प्राणायाम का समावेश किया है, इसलिये बच्चों के लिये शारीरिक शिक्षा बहुत ही महत्वपूर्ण विषय होना चाहिये। योग, शारीरिक शिक्षा एवं मानवीय मूल्य से सम्बंधित किताबें खरीदकर भी व्यक्ति ज्ञान ग्रहण कर सकता है।

सन्दर्भ

1. *कोहेन जे0 – इमोशनल एजूकेशन ऑफ यंग चिल्ड्रेन, न्यूयार्क*
2. *शैरी जी0 पी0 – स्वास्थ्य शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा*
3. *मित्तल आर0 ए0 – शिक्षा के दार्शनिक एंव सामाजिक आधार*
4. *शर्मा बी0 एल0 – शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार।*

भारतीय संस्कृति एवं मानवीय मूल्य

पूनम रावत
बी.एड.द्वितीय वर्ष
राजकीय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय रामपुर उत्तर प्रदेश

प्रस्तावना

संपूर्ण विश्व में हमारा भारत देश संस्कृति और परंपरा के लिए प्रसिद्ध देश है। भारत संस्कृति और परंपरा की भूमि माना जाता है। भारत की भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण तत्व अच्छा शिष्टाचार, मान्यताएं, मूल्य एवं धार्मिक संस्कार हैं। आज के समय में लोग आधुनिकता की ओर आगे बढ़ रहे हैं, लेकिन फिर भी अपनी परंपरा एवं मूल्यों को बनाए रखते हैं। भारत की संस्कृत संपूर्ण विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति है जो आज से लगभग 5000 वर्ष पुरानी है। हमारी भारतीय संस्कृति में विविधता में एकता है। हमारे भारत देश में विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं जिनकी भाषा अलग–अलग हैं, खान–पान अलग हैं, रीति रिवाज आदि अलग हैं, फिर भी भारत के लोग एकता के साथ रहते हैं।

भारत के लोग अपने पूर्वजों की संस्कृति और परवरिश के अनुकरण हैं इसीलिए यहां के बच्चे सभी के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं क्योंकि यहां के बच्चों को अच्छे गुण एवं व्यवहार अपने माता–पिता और दादा–दादी से मिले हैं। भारत में यह संस्कारी संस्कृति है। भारत में तमाम लोग रहते हैं जो अलग–अलग धर्मों के हैं, लेकिन अपनी संस्कृत के साथ एक साथ मिलकर रहते हैं।

भारत देश के कुछ मुख्य धर्मः हिंदू मुस्लिम सिख ईसाई जैन आदि।

आमतौर पर भारत के लोग सामाजिक मान्यताओं, प्रथा और खाने की आदतों में भिन्न–भिन्न होते हैं।

संस्कृति का अर्थः सामान अर्थ में संस्कृति अपने पूर्वजों से सीखे गए गुण, व्यवहारों की संपूर्णता है, लेकिन संस्कृत की अवधारणा इतनी विस्तार में है कि उसे वाक्य में परिभाषित करना असंभव है।

भारतीय संस्कृति का अर्थः भारतीय संस्कृति का वातावरण ऐसा है कि इसके अंतर्गत रहकर मनुष्य सामाजिक प्राणी बनता है और अपने आसपास के पर्यावरण को अपने अनुकूल बनाने की क्षमता अर्जित करता है।

होबेल का मत हैः वह संस्कृति है जो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्तियों, से एक समूह को दूसरे समूहों से, और एक समाज को दूसरे समाजों से, अलग करती है।

भारतीय संस्कृति का स्वरूपः आश्रम व्यवस्था का पालन करते हुए धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की प्राप्ति भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र रहा है। प्राचीन भारत के धर्म, दर्शन, शास्त्र

विद्या, कला, साहित्य, राजनीति, समाजशास्त्र इत्यादि में भारतीय संस्कृत के सच्चे स्वरूप को देखा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति की विशेषता तथा बचाने के उपाय: भारतीय संस्कृति अपने आप में अनोखी और विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। इसमें अनेक विशेषताएं विद्यमान हैं जो कि निम्नवत हैं—

- **प्राचीनता**: प्राचीनता से तात्पर्य है कि हमारी संस्कृति के साथ—साथ रामायण और महाभारत कालीन संस्कृत की विशेषताएं मौजूद हैं।
- **निरंतरता**: भारतीय संस्कृत का स्वरूप शतक और निरंतर गतिशील प्रकृतिक का रहा है। यह एक पीढ़ी में प्रतिस्थापित होती रही है जो कि निरंतर गतिमान है।
- **ग्रहणशीलता**: भारतीय संस्कृति में मूल तत्व की प्रधानता तो है ही, इसके साथ ही यह दूसरी संस्कृत से भी कुछ न कुछ ग्रहण करती रही है, जैसे मुगल संस्कृति का ग्रहण।
- **वर्ण व्यवस्था**: वर्ण व्यवस्था भारतीय संस्कृत की मूलभूत विशेषता और केंद्रीय धुरी है। इस व्यवस्थाओं के अंतर्गत समाज को 4 वर्णों में बांटा गया है—ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्र। दूसरे शब्दों में वर्ण व्यवस्था श्रम विभाजन की सामाजिक व्यवस्था का ही दूसरा नाम है।
- **आश्रम व्यवस्था**: कर्म को सर्वोपरि स्थान प्रदान करते हुए भारतीय समाज में आश्रम व्यवस्था का विधान किया गया है। यह वह व्यवस्था है जिसमें सामाजिक क्रियाकलापों और निर्धारित कर्तव्यों को प्राकृतिक प्रभाव और गुणों के आधार पर विभिन्न समूहों में विभाजित किया जाता है।
- **संयुक्त परिवार प्रणाली**: संयुक्त परिवार प्रणाली हमारे पूर्वजों द्वारा दी गई एक अनूठी प्रणाली है, जो परिवार के समस्त सदस्यों को एक सूत्र में बांधे रखती है। इस प्रणाली में बच्चों का मूलभूत विकास श्रेष्ठ रूप से होता है, जो कि जरूरी भी है।
- **संस्कार**: संस्कार का अर्थ है, परिशुद्धि। भारतीय हिंदू संस्कृति में 16 संस्कारों को बताया गया है।
- **विविधता में एकता**: विविधता में एकता भारतीय संस्कृत की मूलभूत विशेषता है। भारतीय भूमि पर अनेक प्रकार की भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता में विद्यमान होने के बावजूद भी संस्कृति में मूलभूत एकता पाई जाती है।
- **आध्यात्मिकता और भौतिकता का समन्वय**: भारतीय संस्कृत में मूलतः आध्यात्मिकता और भौतिकता का समन्वय पाया जाता है, जो कि मानवता के लिए श्रेष्ठ है।

भारतीय संस्कृत को बचाने के उपाय

क्योंकि वर्तमान में कुछ असामाजिक तत्वों के कारण भारतीय संस्कृति पर प्रहार हो रहा है जैसे घुसपैठ, भ्रष्टाचार, घोटाले, बलात्कार, अपहरण, आतंकवाद, असहिष्णुता, चोरी, डकैती, आदि। अतः भारतीय संस्कृत के स्वरूप वासुदेव कुटुंबकम की पुर्नस्थापना के लिए कुछ प्रयास करने अति आवश्यक हैं, जो इस प्रकार हैं–

- संयुक्त परिवारों को प्राथमिकता देना।
- वैदिक शिक्षा और नैतिक शिक्षा को बढ़ावा देना।
- संस्कारों की पुर्नस्थापना।
- नारी शिक्षा को बढ़ावा देना।
- निर्धनता का उन्मूलन।
- पर संस्कृति ग्रहण के नकारात्मक प्रभाव से दूर रहना।
- भौतिक और अभौतिक संस्कृति में सामंजस्य स्थापित करना।
- बेरोजगारी उन्मूलन।
- आध्यात्मिकता को बढ़ावा देना।
- साहित्य द्वारा संस्कृत का संरक्षण और प्रसारण।
- भ्रष्टाचार उन्मूलन।
- अपराधों की रोकथाम।
- प्रकृति, संस्कृति, मानव की प्रगाढ़ता को बढ़ावा देना।
- जातिवाद भेदभाव का उन्मूलन।
- भारतीय संस्कृतिक परिवेश की वर्तमान में पुर्नस्थापना करना।
- पुरातन और नूतन का संगम।
- सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देना।
- सांस्कृतिक आयोजनों को बढ़ावा देना।
- संस्कृति संरक्षण हेतु सरकारी प्रयास करना।

हमारे जीवन में शिष्टाचार व नैतिकता का होना अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक मनुष्य को अपने संस्कार, संस्कृति एवं नैतिकता को कभी भूलना नहीं चाहिए। प्रत्येक मनुष्य की पहचान उसके संस्कारों से होती है। प्रत्येक माता–पिता को अपने बच्चों में नैतिक मूल्यों, शिष्टाचार व संस्कारों की शिक्षा देकर उन्हें अच्छे गुण सिखाए जाने चाहिए।

संदर्भ

1. *भारतीय संस्कृति की विशेषताएं एवं उपाय, डॉ. प्रदीप कुमार दीपू जी के लेख से ली गई है।*

शिक्षा में व्यावसायिक प्रतिबद्धता और आचार संहिता

प्रदीप कुमार
सहायक प्रोफेसर, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय संभल
मौलाना आजाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय।

शिक्षक छात्रों को शैक्षिक बातें सीखने में मदद करते हैं, और सकारात्मक उदाहरण देकर जीवन की महत्वपूर्ण चीजों को सिखाते हैं। अच्छे शिक्षक अपने छात्रों के रोल मॉडल होते हैं, इसलिए शिक्षकों को रोल मॉडल के रूप में नैतिकता और व्यावसायिक प्रतिबद्धता की एक आचार संहिता का पालन करना चाहिए। शिक्षकों की व्यावसायिक आचार संहिता यह सुनिश्चित करती है कि छात्रों को एक उचित, ईमानदारी वाली और समझौताविहीन सर्वोत्तम शिक्षा मिले। नैतिकता एवं आचार संहिता, अपने छात्रों के प्रति शिक्षकों की जिम्मेदारियों की रूपरेखा तैयार करती है और छात्रों के जीवन में उनकी भूमिका को परिभाषित करती है।

परिचय

शिक्षक छात्रों को शैक्षिक बातें सीखने में मदद करते हैं, और सकारात्मक उदाहरण देकर जीवन की महत्वपूर्ण चीजों को सिखाते हैं। अछे शिक्षक अपने छात्रों के रोल मॉडल होते हैं, इसलिए शिक्षकों को रोल मॉडल के रूप में नैतिकता और व्यावसायिक प्रतिबद्धता की एक आचार संहिता का पालन करना चाहिए। शिक्षकों की व्यावसायिक आचार संहिता यह सुनिश्चित करती है कि छात्रों को एक उचित, ईमानदारी वाली और समझौताविहीन सर्वोत्तम शिक्षा मिले। नैतिकता एवं आचार संहिता अपने छात्रों के प्रति शिक्षकों की जिम्मेदारियों की रूपरेखा तैयार करती है और छात्रों के जीवन में उनकी भूमिका को परिभाषित करती है। व्यावसायिक प्रतिबद्धता शिक्षकों को अपने व्यवसाय को ह्रदय से पूरा करने की प्रेरणा देती है और कक्षा में, अभिभावकों के प्रति, तथा सहकर्मियों के साथ अपने आचरण में ईमानदारी, निष्पक्षता और नैतिक व्यवहार करने हेतु प्रेरित करती है।

वर्तमान समय में अन्य व्यवसायों की भांति शिक्षण व्यवसाय में भी एक व्यावसायिक प्रतिबद्धता और आचार संहिता की बात की जाने लगी है। "Professional code of Ethics for Teachers" की एक 'Google Search' .71 सेकंड में लगभग 9,97,00,000 परिणाम देती है, जो यह दर्शाती है की आजकल शिक्षण व्यवसाय में व्यावसायिक प्रतिबद्धता और आचार संहिता, एक महत्वपूर्ण विषय है (Google. 2019)। शिक्षकों की व्यावसायिक प्रतिबद्धता हेतु कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांत निम्नवत हैं (Ministry of Education Guyana, 2019)।

1. छात्र सर्वोपरि हैं

शिक्षक के लिए छात्र सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। शिक्षकों को स्वयं के व्यक्तित्व में दृढ़ता, ईमानदारी, सम्मान, नियमों की समझ, धैर्य, निष्पक्षता, जिम्मेदारी और एकता जैसे मजबूत चारित्रिक लक्षणों को विकसित करना चाहिए। एक शिक्षक को हमेशा पक्षपात किये या पक्षपात दिखाए बिना प्रत्येक छात्र के साथ दया, समानता और सम्मान का व्यवहार करना चाहिए। एक शिक्षक को चाहिए कि व्यक्तिगत लाभ के लिए छात्रों के साथ संबंधों का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

2. व्यवसाय के प्रति समर्पण

अध्यापकों को अध्यापन व्यवसाय के प्रति पूर्ण रूप से प्रतिबद्ध होना चाहिए। उन्हें कक्षा में सुरक्षा और स्वीकृति को बढ़ावा देना चाहिए और शत्रुता, बेईमानी, उपेक्षा या अपमानजनक आचरण से दूर रहना चाहिए। शिक्षकों को अपनी व्यावसायिक योग्यता एवं तथ्यों का सही–सही विवरण स्कूल प्रबंधन या नियोक्ता से करना चाहिए। एक प्रतिबद्ध शिक्षक सभी व्यावसायिक दायित्व पूरे करता है, स्कूल की नीतियों का पालन करता है, और अपने कार्य को पूरी तल्लीनता से करता है। वह संस्था के उद्देश्यों को पूरा करने और एक अच्छी शिक्षा योजना को क्रियान्वित करने की आपकी जिम्मेदारी लेने के लिए हमेशा तैयार रहता है।

3. निरंतर सीखते रहना

एक प्रतिबद्ध शिक्षक सभी व्यावसायिक दायित्वों के साथ–साथ प्रगतिशील शिक्षा की आवश्यकताओं और कैरियर के विकास को जारी रखने के लिए सदैव प्रयासरत रहता है। अच्छे शिक्षक नई शिक्षण विधियों पर शोध करते रहते हैं, अपने ज्ञान की निरंतरता बनाए रखने के लिए संगोष्ठी, चर्चासत्रों, कार्यशालाओं आदि में भाग लेते हैं, पेशेवर निर्देशन के लिए सहयोगियों से परामर्श करते हैं, पाठ्यक्रम सुधार की गतिविधियों में योगदान देते हैं और कक्षा की तकनीकी प्रगति के लिए लगातार काम करते हैं। प्रतिबद्ध शिक्षक यह सुनिश्चित करते हैं कि उनके शिक्षण की विधियाँ नई, प्रासंगिक और व्यापक हों। प्रतिबद्ध शिक्षकों को अपनी शिक्षण रणनीतियों में लगातार सुधार करने के लिए शैक्षिक अनुसंधान में संलग्न रहते हैं।

4. स्वस्थ संबंधों को प्राथमिकता देना

अच्छे प्रतिबद्ध शिक्षक छात्रों के साथ स्वस्थ संबंधों को बढ़ावा देने के साथ–साथ, अभिभावकों, संस्था के कर्मचारियों, समुदाय के सहयोगियों, मार्गदर्शकों, परामर्शदाताओं एवं प्रशासकों के साथ अच्छे संबंध बनाने पर कार्य करते हैं। वे अपने सहकर्मियों के बारे में निजी जानकारी पर कभी भी चर्चा नहीं करते तथा उनके विषय में गलत टिप्पणियों और अनावश्यक गपशप से हमेशा बचते हैं। आचार संहिता के अंतर्गत उनको सीखने के लिए अच्छा वातावरण बनाने का दायित्व होता है जिसे वे पूरा करने का हमेशा प्रयास करते हैं। वे एक सकारात्मक दृष्टिकोण और एक समूह–केंद्रित मानसिकता के साथ कार्य करते हैं।

एसोसिएशन ऑफ अमेरिकन एजुकेटर्स, कैलिफोर्निया के Code of Ethics for Educators (Association of American Educators, 2019) के अनुसार शिक्षकों के लिए आचार संहिता (कोड ऑफ एथिक्स) में कुछ जरुरी सिद्धान्तों पर हमेशा कायम रहना चाहिए जो महत्वपूर्ण हैं। पेशेवर शिक्षक एक बेहतर सीखने का माहौल बनाने का प्रयास करते हैं जो सभी छात्रों की क्षमता को पूर्ण विकसित करता है। पेशेवर शिक्षक उच्चतम नैतिक मानकों को समझने के लिए ईमानदार प्रयास के साथ काम करते हैं। पेशेवर शिक्षक अपनी जिम्मेदारी स्वीकार करते हैं कि हर बच्चे को किसी भी अवांछित काम से रोकना आवश्यक है। ऐसे जरुरी सिद्धान्त हैं–

क. छात्रों के प्रति नैतिक आचरण

पेशेवर शिक्षक छात्रों के चरित्र गुणों को सिखाने के लिए व्यक्तिगत जिम्मेदारी स्वीकार करते हैं जो उनके परिणामों का मूल्यांकन करने में मदद करेंगे और उनके कार्यों और विकल्पों के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करेंगे। सभी शिक्षकों को ईमानदारी, परिश्रम, जिम्मेदारी, सहयोग, निष्ठा, कानून और मनुष्य जाति के लिए सम्मान, सभी के लिए समान व्यवहार जैसे नागरिक गुणों को बढ़ावा देने के लिए कार्य करने की आशा की जाती है। पेशेवर शिक्षक एक सीखने का माहौल बनाने का प्रयास करते हैं जो सभी छात्रों की क्षमताओं को पूर्ण रूप से विकसित करने के लिए आवश्यक होता है। पेशेवर शिक्षक, सार्वजनिक न्यास की अपनी स्थिति को स्वीकार करते हुए, न केवल प्रत्येक छात्र की प्रगति से, बल्कि गणतंत्र के बड़े समुदाय के नागरिक के रूप में भी सफलता को मापते हैं। इसके अतिरिक्त–

- पेशेवर शिक्षक प्रत्येक छात्र के साथ उचित व्यवहार करते हैं और नियमों के अनुसार, समस्याओं को हल करते हैं।
- अच्छे पेशेवर शिक्षक जानबूझकर छात्रों के बीच असमानता को प्रकट नहीं करते हैं।
- पेशेवर शिक्षक छात्र को सीखने, स्वास्थ्य या सुरक्षा के लिए हानिकारक स्थितियों से बचाने के लिए रचनात्मक प्रयास करते हैं।
- पेशेवर शिक्षक बिना किसी विकृति, पूर्वाग्रह या व्यक्तिगत पूर्वाग्रह के तथ्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं।

ख. सार्वजनिक आचरण एवं कार्यों में नैतिकता का प्रदर्शन

पेशेवर शिक्षक अपने प्रदर्शन के लिए स्वयं जिम्मेदारी लेते हैं और लगातार उत्कृष्ट प्रदर्शन करने का प्रयास करते हैं। वह नियमों का सम्मान व पालन करके तथा व्यक्तिगत ईमानदारी का प्रदर्शन करके अपने व्यवसाय की गरिमा को बनाए रखते हैं। पेशेवर शिक्षक–

- अपनी व्यवसायिक योग्यता के आधार पर किसी पद या जिम्मेदारी को स्वीकार करते हैं।

- पेशेवर शिक्षक अपने उत्तम शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सहनशक्ति और कर्तव्यों को निभाने के लिए आवश्यक सामाजिक विवेक को बनाए रखते हैं।
- पेशेवर शिक्षक लगातार अपना शैक्षिक और व्यक्तित्व विकास जारी रखते हैं।
- पेशेवर शिक्षक जानबूझकर संगठन की आधिकारिक नीतियों को गलत तरीके से पेश नहीं करते हैं।
- पेशेवर शिक्षक समकालीन नीतियों और और विनियमों का अनुपालन करते हैं।
- वे व्यक्तिगत लाभ के लिए संस्थागत या पेशेवर विशेषाधिकारों का उपयोग नहीं करते हैं।

ग. सहकर्मियों के प्रति नैतिक आचरण

पेशेवर शिक्षक अपने सभी व्यवसायिक सहकर्मियों व सदस्यों के प्रति न्यायसंगत और सम्मानजनक व्यवहार करते हैं। पेशेवर शिक्षक सहयोगियों से संबंधित गोपनीय जानकारी प्रकट नहीं करते जब तक की कानूनन आवश्यक न हो। ऐसे अच्छे शिक्षक जानबूझकर किसी सहकर्मी या संस्थान के बारे में कभी गलत बयान नहीं देते तथा सहकर्मियों की व्यक्तिगत पसंद की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं करते। वे सदैव साथियों की भावनाओं का सम्मान करते हैं।

ड़. अभिभावकों एवं समुदाय के प्रति नैतिक आचरण

पेशेवर शिक्षक सार्वजनिक शिक्षा और निजी नियंत्रण पर सार्वजनिक संप्रभुता को संरक्षित करने का वचन देते हैं। पेशेवर शिक्षक मानते हैं कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा जनता का सामान्य अधिकार और, शिक्षा बोर्ड व शिक्षकों का लक्ष्य है और इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए इन सभी के बीच एक संयुक्त प्रयास आवश्यक है। एक पेशेवर शिक्षक हमेशा विद्यालय एवं सामुदायिक संबंधों में सकारात्मक और सक्रिय भूमिका निभाता है। पेशेवर शिक्षक समुदायों और संस्थान की विविधता एवं सांस्कृतिक मूल्यों तथा परंपराओं को समझने, संरक्षित करने और उनका सम्मान करने का प्रयास करते हैं।

निष्कर्ष

एक समर्पित प्रतिबद्ध और पेशेवर शिक्षक को शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर सबको गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने पर अपना प्रयास और ध्यान केंद्रित करना चाहिए। छात्रों का सर्वांगीण विकास करना शिक्षक का प्रमुख कर्तव्य है। समर्पित एवं प्रतिबद्ध शिक्षकों को अपने व्यवसाय, छात्रों, संस्था, सहकर्मियों और अभिभावकों के प्रति सम्मान दिखाना चाहिए। शिक्षकों को अपने भीतर पेशेवर नैतिकता के विकास पर विशेष रूप से प्रयास करना चाहिए। इसीलिए ये अपेक्षा की जाती है कि शिक्षकों को दायित्व स्वीकार करना और अपने कर्तव्यों को कुशलता से निभाना

आना चाहिए (Sherpa, 2018)। अतः आज के समय में सफल शिक्षकों के लिए अच्छे शिक्षण के अतिरिक्त पेशेवर नैतिकता का ज्ञान और उसका क्रियान्वयन आना अति आवश्यक गुण है।

संदर्भ

1. *Google, (2019). Retrieved from https://www.google.com/search?q=kProfessional+code+of+Ethics+for+Teachers& oq=kProfessional+code+of+Ethics+for+Teachers&aqs=kchrome..69i57j69i60l2. 11250602j1j4&sourceid=kchrome&ie=kUTF-8 on 10.02.2020*
2. *Ministry of Education Guyana, (2019). Retrieved from https://www.education.gov.gy/web/index.php/teachers/tips-for-teaching/item/2738-professional-code-of-ethics-for-teachers on 10.02.2020*
3. *Association of American Educators, California (2019). Retrieved from https://www.aaeteachers.org/index.php/about-us/aae-code-of-ethics on 10.02.2020*
4. *Sherpa, (2018). IMPORTANCEOFPROFESSIONALETHICSFORTEACHERS, International Education & Research Journal. Vol. 4 | Issue 3, P16-18.*

वर्तमान समय में मानव मूल्यों की स्थिति

लैफि्टनेन्ट (डा.) प्रवेश कुमार[1], रिंकू सिंह[2]

[1]विभाग अध्यक्ष बी.एड.,

[2]बी.एड. प्रथम वर्ष (छात्र)

राजकीय रज़ा पीजी कॉलेज, रामपुर

वर्तमान समय मे हमारा समाज आधुनिकीकरण की तरफ तेजी से बढ़ता जा रहा है। आज समाज में ज्यादातर शिक्षित लोग हैं, परंतु हमारे समाज मे शिक्षित लोगों के होते हुये भी एक कुंठित जीवन जीने को मजबरू है इस समय व्यक्ति अपने जीवन की व्यस्ता में अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिये दिन रात इधर से उधर भागता फिरता है लेकिन फिर भी आत्मसंतोष प्राप्त नहीं कर पाता है। क्योंकि इस समाज में ज्यादातर लोग मानवीय या नैतिक मूल्यों को भूल चुके हैं य उनको याद रखते हुये भी उनको अपने व्यवहार में नहीं ला सके हैं। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से तो मानवीय मूल्यों की अपेक्षा करता है परंतु स्वम् के व्यवहार में इनको नहीं ला पाता है।

वर्तमान समय में मानवीय मूल्यों या नैतिक मूल्यों से ज्यादा धन दौलत एवं ऐशो आराम को महत्व दिया जाता है, इस समाज में ज्यादातर व्यक्ति धन को एकत्रित करने में लगे हुये हैं चाहे इस धन को एकत्रित करते हुये न जाने कितने ही मजबूर, बेसहारा एंव गरीब लोगो को क्यों न कुचलना पड़े। आज ही किसी प्रशासन के अधिकारी को यह सूचना मिले की अमुक नेता या मंत्री उनके शहर में दौरे पर आने वाले हैं, तब वह अधिकारी इतना सख्त हो जायेगाकि शहर में उतने समय बिजली, पानी, सफाई एवं संचार आदि की व्यवस्था उच्च चरम पर होगी यदि उस मंत्री का दौरा न होता तो शायद वही अधिकारी इन सभी बातों पर अपना ध्यान इतना नहीं केन्द्रित करता, इससे यह बात सीधे तौर पर समझी जा सकती है कि वह अधिकारी अपने मानवीय मूल्यों को अपने व्यवहार में पूंर्ण तरीके से नहीं उतार पाये हैं।

आज एक धनवान व्यक्ति को चाहे वह कितना भी निर्दयी क्यों न हो उसको सम्मान दिया जाता है परंतु एक धनहीन व्यक्ति को वही सम्मान नहीं मिलता है। क्योंकि आज गरीब व्यक्ति को ज्यादातर धनी लोगों की सेवा मात्र के रूप में देखा जाता है। चाहें वह व्यक्ति नैतिक मूल्यों का धनी ही क्यों न हो? आज सरकार के किसी नेता की यात्रा हेतु जितने अधिकारी व धन आदि को खर्च किया जाता है, परंतु वही धन किसी आम परेशान व्यक्ति की तकलीफ हेतु खर्च नहीं किया जा सकता है।

एक व्यक्ति जिसने अपराध किया है वह धन के बल पर एक योग्य वकील को चुन सकता है। ऐसा करने से शायद वह कानून की नजर से बच भी जाये, परंतु एक निर्दोष व्यक्ति धन के

अभाव में अपने बचाव हेतु एक योग्य वकील को न चुन सके और अपने आप को निर्दोष साबित न कर पायें, तब ऐसी स्थिति मे भले ही अपराधी छूट जायें पर एक निर्दोष व्यक्ति को सजा मिलना भी तो मानवीय मूल्यों का शोषण है।

किसी अमूक व्यक्ति ने कहा था कि ये राजनीति एक खेल है इनको खेला जायेगा, नेता आयेगे जायेगें परतुं यह देश यहीं रहेगा, यह देश नहीं जाना चाहिए।

कवि की कुछ पंक्तियां हैं—

सब कातिल है भारत मां के, मैं किस—किस को नादान कहूं
बेटी मरती है सड़कों पर, कैसा हिन्दुस्तान कहूं
जहां नंगे बदन किसान मरें, कचरा खाकर इंसान मरें
बेटी मर जाये सड़को पर, जहां ममता का फरमान मरे
जहां झुक जाये हिमालय की चोटी, बिटिया की कीमत दो रोटी
जहां नोच नोच कर खाई जाये, भारत माता की हर बोटी
जहां मात्र कलंक झलकता हो, उसको कैसे वरदान लिखूं
बेटी मरती है सड़को पर, कैसा हिन्दुस्तान कहूं।

परंतु इस राष्ट्र को एवं इसकी संस्कृति को हम तभी बचा सकते हैं जब हम सभी व्यक्ति अपने मानवीय मूल्यों को अपने व्यवहार मे ले आयें।

मनवीय मूल्यों की आवश्यकता और महत्व

मानवीय मूल्य किसी भी बच्चे के जीवन को नया आकार देते हैं एवं एक मंच पर अपने आप को प्रर्दशित करने में सहायक होत हैं। माता पिता का अपने बच्चों, छात्रों एव अध्यापकों में संबंध स्थापित करने हेतु मानवीय मूल्यों की आवश्यकता महसूस की गयी है। क्योंकि समाज में आपसी मतभेदों के कारण एकता प्रभावित हो रही है। मानवीय मूल्यों की शिक्षा का लक्ष्य सभी को अपनी आवश्यकताओं को समझने के योग्य बनाती है। यह हमारी कमी, मतभेद एवं असफलताओं के बारे मे बताते हैं। मानव मूल्य हमको समाज में सभी नवीन तरीकों का सही प्रयोग करना सिखाते हैं। हमारे इस समाज में कई ऐसे मूल्य हैं जो पारम्परिक तरीके से चले आये हैं परतुं इस संघर्षमय जीवन में कई मानवीय मूल्यों को जगह देने की आवश्यकता है।

मानवीय मूल्य दो तरीके के हो सकते हैं।

(1) सकारात्मक (2) नकारात्मक

आज के समय मे देखा जाये तो नकारात्मक मूल्य सकारात्मक मूल्यों पर भारी दिख रहे हैं। हमको इन नकारात्मक मूल्यों को अपने जीवन से निकाल कर उनके स्थान पर सकारात्मक मूल्यों को अपने व्यवहार मे लाने की आवश्यकता है।

मानवीय मूल्यों में शिक्षा परिवार स्कूल एवं समाज की भूमिका

शिक्षा मानवीय मूल्यों में बदलाव लाने के लिये एक महत्वपूर्ण माध्यम है। शिक्षा किसी भी बच्चे के विकास में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

परिवारः किसी भी बच्चे के मानवीय मूल्यो में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जो बच्चे के व्यक्तित्व के विकास का आधार होता है, सभी नैतिक मूल्यों जैसे सत्य, अहिंसा एवं ईमानदारी आदि सभी आदर्शो के रूप में कार्य करते हैं जिनसे व्यक्ति का जीवन एक नियत्रित सीमा में रहता है। इसी जगह से बच्चे का मानसिक दृष्टिकोण समाज के प्रति जागरूक होता है। परिवार में ही स्नेह, प्रेम, आनन्द एवं दया का भाव विकसित होता है।

समाजः में सामाजिक रीतिरिवाजो एवं कलाओ को वैसे तो बच्चा परिवार से भी सीखता है परतुं बच्चा इन सभी में निपूर्ण सामाज में रहकर ही होता है। परिवार व शिक्षा के द्वारा सिखाये गये गुंणों द्वारा ही वह समाज में एक आदर्शवादी व मानकरूपी व्यक्ति बन पाता है। समाज के विरोधी प्रयास के वातावरण में भी बच्चा परिवार य शिक्षक द्वारा सिखाये गये मूल्यों के साथ मजबूती से खड़ा रहेगा।

शैक्षिक संस्थानः बच्चों को उसके मूल्यों को समझाने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यदि एक बार छात्र अपने मूल्यों को जगा पाया, तो समझ लेना चाहिए कि वह अपने जीवन के सभी क्रिया कलापों को नियंत्रित कर लेगा। शैक्षिक संस्थान बच्चों को समाज का एक छोटा सा नमूना पेश कराने में महत्वपूर्ण भूमिका में रहे हैं जो उसके मानवीय नैतिक मूल्यों पर अच्छी छाप छोड़ते हैं। अतः स्कूल, समाज एवं परिवार एक दूसरे से व्यवहारिक रूप से जुड़े हुये हैं। ये व्यक्ति के समग्र विकास में सहायक होते हैं। कुछ महत्वपूंर्ण मानव/नैतिक मूल्यों को अपने व्यवहार में लाने की आवश्यकता है– जो निम्न प्रकार हैं–

सत्यताः प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आत्म शक्ति को पहिचानना है। सत्य को ही आत्म शक्ति की अभिव्यक्ति कह सकते है। सत्य ही हमारा अस्तित्व है। सत्य को जानने के लिये हमको मस्तिष्क के द्वारा अपने आत्मीय ज्ञान को खोजने की आवश्यकता है। क्योंकि सत्य भविष्य में भी अपरिवर्तनीय हैं। सत्य हो हम पीढ़ी दर पीढ़ी पारम्परिक तरीके से अतीत से आज में स्थानतंरण कर सकते हैं।

आचरणः आचरण से आशय किसी भी व्यक्ति की सोच, व्यवहार एवं धर्म के प्रति लगाव आदि से है। बच्चों में इन आचरणों का लगाव बचपन में सीखने से शुरू होकर बाद से कर्तव्य में बदल जाता है। यही आचरण एवं जिम्मेदारी जीवन के किसी भी मोड़ पर बदल नहीं सकते हैं।

शांतिः प्रत्येक व्यक्ति शांति चाहता है, परंतु यहां वह इस शांति को भौतिक वस्तुओं मे ढूंढता है। परतुं वह शांति हमारी आत्मा में छिपी होती है। यही शक्ति हमको अपने

विचारो, कर्मो एवं व्यवहारों के प्रति सक्षम बनाती है। हमको अपने अंदर एक संतुलन पैदा करने की आवश्यकता है, जो हमको लाभ–हानि, सुख–दुख की परवाह किये बिना एक सच्ची शांति प्रदान करे।

विश्वासः किसी वस्तु में पूर्ण विश्वास रखने को आस्था कहते हैं। इसमें किसी भी व्यक्ति में विश्वास के योग्य समझ पैदा होती है। विश्वास पर ही दुनिया टिकी है।

प्रेम एवं सम्मानः प्रेम को भावनाओं की जननी कहा है। इससे भाव उत्पन्न होता है सभी ध र्म पंडित प्रेम के महत्व को सर्वोपरि बताते है। प्रेम के द्वारा ही व्यक्ति दयालु स्वभाव का होता है।

अहिंसाः अंहिसा का अर्थ केवल हिंसा न करने से नहीं है, बल्कि अंहिसा के द्वारा नैतिक मूल्यों को अपने व्यवहारिक जीवन में उतारने से है। अहिंसा वह है जो हमको कानून एवं प्रकृति के विरूद्ध जाने से रोकती है, यह हमको उनका सम्मान करना सिखाती है। अहिंसा एक सेवा माध्यम है जिसको हम विश्व शांति के रूप में अपना सकते हैं। अगर हम ऐसा करते है तो हम विश्व में अधिक सम्मान पा लेंगे।

सहकारिताः कुछ विद्वान इसे मानवीय मूल्य न मानकर विलासिता मानते हैं, परतुं इसके महत्व के कारण इसको मानवीय मूल्यों में जोड़ा गया है। क्योंकि किसी भी सपने को सकार करने में सहकारिता का बहुत ही महत्व होता है।

देखभालः इस प्रकार के मानव मूल्य को किसी भी व्यक्ति के लिये चितां दया परोपकार दिखाने के लिये कहा जा सकता है, इस मानवीय मूल्य का महत्व अनुभव के द्वारा ही महसूस किया जा सकता है ऐसे व्यक्तियों की देख रेख जो शारीरिक रूप से असमर्थ हों, पर भरोसा करने से है।

सुन्दरताः यहां सुन्दरता का अर्थ बाहरी साज धज्जा से न होकर मन एवं आत्मा की सुन्दरता से है। क्योंकि मनुष्य द्वारा सुन्दरता शब्द की व्यवस्था बदल दी है। यहां सुन्दर प्रकृति की वस्तु के बारे में विचार करने पर जीवन सही अर्थ में लाती है।

बौद्धिक क्षमताः यहां पर बुद्धि एवं ज्ञान दो अलग–अलग शब्द हैं, क्योंकि बुद्धि के द्वारा व्यक्ति को भ्रम में रखा जा सकता है, परंतु ज्ञान अनुभव द्वारा प्राप्त होता है। हालांकि बुद्धि कई रूपों में नैतिक मूल्य हैं, क्योकि इसके अभाव में व्यक्ति मानवीय मूल्यों को अपने व्यवहार में नहीं ला सकते हैं।

निष्ठा एवं लगनः यह वह है जो किसी भी कार्य हेतु पूर्ण आत्म विश्वास पैदा करते हैं। जिससे कार्य समयाविधि के अंदर सरल व सुव्यवस्थित ढंग से हो जाता है। यह हमको जिम्मेदारी निभाने पर मजबूर करती है।

निष्कर्ष

आज मानव अपने भौतिक स्वार्थो के लिये जिस तरह नैतिक मूल्यों की अनदेखी कर रहा है। ऐसा करने से शायद वह वर्तमान में तो भौतिक आराम पा लेगा परतुं इसके दूरगामी परिणाम घातक सिद्ध हो सकते हैं।आज हमको अपने राष्ट्र एंव संस्कृति को बचाने के लिये नैतिक मूल्यों को अपने व्यवहार में लाना ही पड़ेगा। ये मूल्य ही हमको वैश्विक स्तर पर अपनी परंगता को साबित करने में सहायक होंगे।

सन्दर्भ

1- *https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&url=https://www.esse-institute.org/en/philosophy/human_values&ved=2ahUKEwi9ofyn6sbnAhVOzTgGHXswCfsQFjAaegQIBBAB&usg=AOvVaw1iG5peGHX0JiZjK5ssjjUF&cshid=1581333659917*

2- *https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&url=https://www.civilserviceindia.com/subject/General-Studies/notes/human- values.html&ved=2ahUKEwiI6ufVnsLnAhWOaCsKHarIAToQFjAJegQIAhAB&usg=AOvVaw0vuTzCS6sicyg7RorW223c&cshid=1581181275658*

3- *https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&url=http://proutglobe.org/201 1/10/the-present-age-and-human- values/&ved=2ahUKEwiI6ufVnsLnAhWOaCsKHarIAToQFjAMegQICRAB&usg= AOvVaw3u4jFyw3l1w0OH4PJbIhp-&cshid=1581181275658*

व्यावसायिक शिक्षा एवं मानवीय मूल्य

किशन सैनी
बी.एड. प्रथम वर्ष (छात्र)
राजकीय रजा पी.जी. कॉलेज, रामपुर

व्यवसायिक शिक्षा वह शिक्षा है जो लोगों को एक तकनीकी एवं कुशल व्यापारी या एक कारीगर के रूप में काम करने के लिए तैयार करती है। व्यावसायिक शिक्षा को कभी–कभी कैरियर और तकनीकी शिक्षा भी कहा जाता है। हर शिक्षा का अपना एक महत्व होता है। जिस प्रकार शारीरिक शिक्षा के अन्तर्गत शरीर और मस्तिष्क को स्वस्थ रखने का शिक्षण दिया जाता है। इसमें व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर बल दिया जाता है। उसी प्रकार व्यावसायिक शिक्षा का भी अपना महत्व है जिसमें व्यक्ति को व्यवसाय में कुशल एवं दक्ष बनाने पर बल दिया जाता है। इसमें विद्यार्थियों को व्यवसाय हेतु उपयुक्त कौशलों का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसमें विद्यार्थी अपनी रुचि के अनुसार व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करता है और उसमें दक्ष होता है।

12वीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार हमारे देश के कामकाजी लोगों के 19 से 24 वर्ष आयु वर्ग में 5 प्रतिशत से भी कम लोगों ने व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त की है। इसकी तुलना में USA में यह 52 प्रतिशत, जर्मनी में 75 प्रतिशत, कोरिया में 96 प्रतिशत है। यह आँकड़े भारत में व्यवसायिक शिक्षा की स्थिति को दर्शाते हैं और शायद इसीलिए हमारा देश इन देशों से पिछड़ा हुआ है। भारत में सैद्धान्तिक ज्ञान पर आधिक बल दिया जाता है, जबकि USA और जर्मनी जैसे देशों में सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ प्रायोगिक एवं तकनीकी ज्ञान पर अधिक जोर दिया जाता है।

भारत में हाईस्कूल का गणित अमेरिका का स्नातक छात्र भी मुश्किल से हल कर पाता है, लेकिन वह इतना दक्ष हो जाता है कि वह ज्यादातर इलेक्ट्रॉनिक सामान को खुद ही ठीक कर सकता है।

विश्व बैंक की 2019 की विश्व विकास रिपोर्ट बताती है कि विशेष रूप से उच्च शिक्षा में सामान्य और व्यावसायिक शिक्षा के बीच लचीलापन, श्रमिकों को बदलते श्रम बाजारों में प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक हैं जहाँ प्रौद्योगिकी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। व्यावसायिक शिक्षा की ओर भारतीयों का रुझान कम देखने को मिलता है। विभिन्न कारणों से भारतीय व्यावसायिक शिक्षा की ओर जाने से कतराते हैं। कुछ कारण निम्न हैं–

- व्यवसायों की सामाजिक प्रतिष्ठा ने भी भारतीय व्यावसायिक शिक्षा को काफी प्रभावित किया है। जैसे कि होटलों में वेटर, कुक आदि व्यवसाय को समाज में उपेक्षित नजरों

प्रेरणास्रोत डॉ. प्रवेश कुमार, विभागाध्यक्ष शिक्षक–शिक्षा विभाग, राजकीय रजा पी.जी. कॉलेज, रामपुर

से देखा जाता है। इस कारण ही युवा होटल मैनेजमेंट में जाने से कतराते हैं। लेकिन वास्तव में होटल मैनेजमेंट कोर्स द्वारा बड़े–बड़े होटलों में वेटर, कुक, मैनेजर आदि बेहतर रोजगार उपलब्ध हैं, जहाँ लाखों में सैलरी है।

- व्यावसायिक शिक्षा में भारतीयों की भागीदारी में कमी का एक मुख्य कारण अपर्याप्त शिक्षण/प्रशिक्षण संस्थानों का होना भी है। ग्रामीण परिवेश में ऐसे संस्थानों का अभाव होने के कारण बहुत से ग्रामीण व्यावसायिक शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।
- कम संस्थानों के चलते व्यावसायिक शिक्षा महंगी होती है। जिस कारण भी छात्र इस शिक्षा को ग्रहण नहीं कर पाते हैं। संस्थानों में पर्याप्त प्रशिक्षण हेतु संसाधनों को उपलब्ध कराने के लिए भी व्यावसायिक शिक्षा महंगी हो जाती है।
- लोगों में व्यावसायिक शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव है जिस कारण भी छात्र व्यावसायिक शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।
- व्यावसायिक शिक्षा में भारतीयों की भागीदारी कम होने की जिम्मेदार भारतीय शिक्षा प्रणाली भी है, क्योंकि भारतीय शिक्षा प्रणाली में सैद्धान्तिक ज्ञान बल दिया जाता है, जिस कारण छात्रों में प्रायोगिक एवं तकनीकी ज्ञान के प्रति रूचि उत्पन्न नहीं हो पाती है।

व्यक्ति अपने जीवन के लक्ष्यों को निर्धारित करके समाज द्वारा स्वीकृत जो क्रियाकलाप करता है, मानवीय मूल्य कहते हैं। इसमें मानव के आचरण, व्यवहार एवं समस्त क्रियाकलाप सम्मिलित होते हैं। आज के समय में बढ़ती बेरोजगारी मानवीय मूल्यों का ह्रास कर रही है। पढ़े–लिखे युवाओं को जब रोजगार नहीं मिलता है तो बहुत से युवा अनैतिक कार्यों जैसे चोरी, डकैती, किडनैपिंग,मर्डर आदि में सम्मिलित हो जाते हैं और अपने मानवीय मूल्यों का हनन कर बैठते हैं। व्यावसायिक शिक्षा बेरोजगारी की समस्या को कम कर सकती है। इसके द्वारा शिक्षित लोग बेरोजगार नहीं होंगे और अपना कोई कारोबार या कारीगर के रूप में व्यवसाय में सम्मिलित हो सकेंगे। व्यावसायिक शिक्षा से बेरोजगारी की स्थिति सुधरने के साथ–साथ मानवीय मूल्यों में वृद्धि होगी, क्योंकि इससे लोग अपने रोजगार के साथ–साथ दूसरों को भी रोजगार देने में सक्षम हो जाते हैं। जब लोगों के पास रोजगार होगा, तो वे अनैतिक कार्यों की ओर जाना तो दूर बल्कि इन सबके बारे में सोचेंगे भी नहीं। व्यावसायिक शिक्षा मानवीय मूल्य विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसमें व्यक्ति अपने व्यवसाय के कौशलों को देखकर व उसके महत्व को जानकर व्यवसाय में कुशल अर्थात दक्ष हो सकता है।अपने व्यवसाय में संलग्न होकर अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता है, जिससे समाज में आदर्श नागरिकों का निर्माण होता है।अतः व्यावसायिक शिक्षा से समाज में उत्तम मानवीय मूल्यों का विकास होगा और समाज एक उन्नत राह में अग्रसर होगा।

भारत में व्यावसायिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए छात्रों में प्रायोगिक ज्ञान द्वारा तकनीकी शिक्षा के प्रति रूचि एवं जिज्ञासा उत्पन्न करने की आवश्यकता है। छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा के महत्व, लाभ एवं उपयोग को समझाना होगा। भारत में व्यावसायिक शिक्षा को बढ़ाने के लिए कुछ सुझाव हैं–

- छात्रों के पाठ्यक्रम में सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ प्रायोगिक एवं तकनीकी ज्ञान को सुनिश्चित करना होगा, ताकि छात्रों में रूचि एवं जिज्ञासा उत्पन्न हो।
- माध्यमिक स्तर पर कई विभिन्न प्रकार के कोर्सो को शामिल करना चाहिए, ताकि एक बड़ी संख्या में छात्र कृषि, तकनीकी, वाणिज्य एवं अन्य व्यावसायिक कोर्स ले सकें, जिससे उनकी अभिरूचियाँ विकसित हों और वे तकनीकी संस्थानों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने को प्रेरित हों।
- सभी राज्यों को ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि की शिक्षा संबंधी और अधिक सुविधा प्रदान करनी चाहिए। इसमें केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि छात्रों को यथार्थ परिस्थितियों में कार्य करने के अवसर प्रदान करने चाहिए।
- स्नातक शिक्षा के साथ–साथ विद्यार्थी को उसकी रूचि के अनुसार चयन की गई व्यावसायिक शिक्षा के प्रशिक्षण को सम्मिलित करना चाहिए। इससे विद्यार्थी ग्रेजुएट होने के साथ–साथ किसी व्यवसाय में निपुण हो सकता है।

साधारणतः 25 से 30 प्रतिशत तक विद्यार्थी ही उच्च शिक्षा हेतु विश्वविद्यालयों या महाविद्यालयों में प्रवेश लेते हैं। शेष विद्यार्थी आजीविका कमाने के लिए प्रयत्न करते हैं। इसलिए शिक्षा प्रणाली को व्यावसायिक रूप देकर कोई प्रशिक्षण अवश्य दिया जाना चाहिए ताकि छात्रों में आत्मनिर्भरता विकसित हो। एक तरफ तो शिक्षित लोगों के लिए काम नहीं है और दूसरी तरफ काम करने के लिए उपयुक्त प्रशिक्षित लोग उपलब्ध नहीं हैं। यदि हम शिक्षा व्यावसायीकरण पर बल देगें तो शिक्षित वर्ग में बेरोजगारी की समस्या में कमी आयेगी और शिक्षित, प्रशिक्षित लोगों के काम करने से देश उन्नति की ओर प्रगतिशील होगा।

संदर्भ

1. *wikipedia, "Career and Technical Education". edglossary.org. Retrieved 2019-08-07*
2. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2019*
3. *Lecture of DR. PRADEEP KUMAR (B.Ed. Department), Govt. .Raza P.G. College Rampur U.P.*
4. *World Bank Development Report 2019*
5. *Bhatnagar,S. Ans Kumar, M., "Contemporary India and Education", Page No. 584,585,588, Publisher- R. Lall book Depot, Meerut.*

शिक्षा का नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्य

डॉ. राजेश कुमार पाल
आर.एस.एस.पी.जी. कॉलेज, सिन्गरामऊ, जौनपुर।

शिक्षक मुख्य रूप से समाज के प्रति उत्तरदायी होता है। वह अपने सभी कार्यो का विवरण जनता के सामने रखता है ताकि जनता शिक्षक के कार्यो को परख सके। जनता उसके कार्यो की आलोचना भी कर सकती है और शिक्षक का कर्तव्य है कि वह आलोचना को सहर्ष स्वीकार करे। परम्परागत प्रणाली में शिक्षक की स्थिति उपेक्षणीय रहती है, लोकतांत्रीय शिक्षा प्रणाली में छात्र का स्थान भी महत्वपूर्ण होता है। उसमें छात्र और शिक्षक सहयोगी के रूप में कार्य करते हैं और दोनों एक दूसरे का उचित सम्मान करते हैं। आदर्शवाद छात्र के सामाजिक पक्ष की उपेक्षा नहीं करता। हार्न के अनुसार ''शिक्षार्थी ऐसा परिमित व्यक्ति है, जो शिक्षित होने पर अनन्त पुरूष के रूप में विकसित होता है, उसका वास्तविक उद्भव देवत्व है। उसकी प्रकृति स्वतंत्र है तथा उसकी नियत अमरत्व है। अध्यापक दायित्व के संबंध में आदर्शवादी दार्शनिक फ्रोबेल तथा पेस्टालॉजी द्वारा वर्णित रूपक को उद्धृत करते हैं। इस रूपक में विद्यालय को उद्यान, शिक्षक को माली तथा बालकों को पौधा माना गया है। बालक के विकास की शक्तियां तो उसमें उसी प्रकार अन्तर्निहित होती हैं जैसे कि बीज में वृक्ष के सभी लक्षण अन्तर्निहित होते हैं। बिना माली के वृक्ष तो बढ़ेगा ही परन्तु चतुर माली की देखरेख में उसका विकास वांछनीय दिशा में होगा। प्रकृति के सहारे छोड़ देने पर वृक्ष नष्ट भी हो सकता है। परन्तु माली का कार्य यथासम्भव उसे सिंचित करना, प्राकृतिक प्रकोप से उसकी रक्षा करना यथा समय उसे खाद देना तथा उसके सर्वागीण विकास की दिशा निर्धारित करना होता है। इसी प्रकार शिक्षक के बिना बालक की शिक्षा तो हो जायेगी किन्तु विकास तो उन्हीं शक्तियों का होगा जो अन्तर्निहित हैं। अध्यापक अपनी ओर से कोई शक्तियां जोड़ नहीं सकता परन्तु इन शक्तियों के उचित विकास के लिए जो वातावरण, अध्ययन तथा अध्यापन परिस्थितियां चाहिए उन्हें आवश्यकतानुसार छात्र के लिए संजोता है, इसके अभाव में कदाचित सुषुप्त शक्तियां सोई ही रह सकती हैं। आवश्यकतानुसार अध्यापक छात्र की सहायता भी करता है, उनकी ज्ञान क्षुधा तृप्त करने के लिए ज्ञान भी देता है और सौन्दर्य पिपासा शान्त करने के लिए भावात्मक सामग्री भी प्रस्तुत करता है।

आज के नव युवकों का पथ प्रदर्शक आधुनिक शिक्षक द्वारा ही हो सकता है, इसलिए आवश्यक है कि उसे अपने विषयों की जानकारी के अतिरिक्त विस्तृत ज्ञान हो, इस संबंध में टैगोर का कथन है कि– ''एक दीपक दूसरे दीपक को अपनी लौ से तब तक नहीं जला सकता जब तक वह स्वयं स्नेह सिंचित होकर जल न रहा हो''। के0जी0 सैयदीन ने कहा है कि ''किसी

भी पात्र से तब तक कोई वस्तु बाहर नहीं आ सकती जब तक कि वह वस्तु उसमें डाली न गयी हो। इसी तरह खाली पात्र की भांति शिक्षक भी अपनी संकीर्णता के कारण छात्रों में स्फूर्तिदायिनी प्रेरणा नहीं भर सकता और न ही उनके भावों को जाग्रत कर सकता है। यदि उसका दीपक ज्ञान की लौ से नहीं जगमगा रहा हो तो वह कभी भी किसी दूसरे को प्रकाश प्रदान नहीं कर सकता है।

शिक्षक ही वह शक्ति है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आने वाली संततियों पर अपना प्रभाव डालती है। शिक्षक ही राष्ट्रीय भौगोलिक सीमाओं को लांघकर विश्व व्यवस्था तथा मानव जाति को उन्नति के पथ पर अग्रसर करता है।अतः यह कहा जा सकता है कि मानव समाज एवं देश की उन्नति उत्तम शिक्षकों पर निर्भर है, जैसा कि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में लिखा है "अपेक्षित शिक्षा के पुनर्निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण तत्व शिक्षक, उसके व्यक्तिगत गुण, उसकी शैक्षिक योग्यताएँ, व्यावसायिक प्रशिक्षण और उसकी स्थिति जो वह विद्यालय तथा समाज में ग्रहण करता है। विद्यालय की प्रतिष्ठा तथा सम्मान उसके जीवन पर निःसंदेह रूप से प्रभाव डालते हैं।

शिक्षा जो व्यक्ति को विकसित करती है, व्यावसायिक रूप से सुदृण बनाती है उसकी ज्ञान पिपासा की पूर्ति करती है एवं उसे पूर्ण मनुष्य बनाने का कार्य करती है वह औपचारिक ढंग से कुशल शिक्षकों के मार्गदर्शन एवं शिक्षण से ही संभव है। एक कुशल शिक्षक बनने के लिए व्यक्ति ने शिक्षण अभिक्षमता का होना अति आवश्यक है। शिक्षण अभिक्षमता के अभाव में कुशल मार्गदर्शन संभव नहीं है। इस तरह शिक्षक राष्ट्र के भावी कर्णधार हैं, क्योंकि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास, पूर्णरूपेण शिक्षकों पर ही निर्भर होता है। टैगोर ने शिक्षक को अति महत्वपूर्ण दायित्व सौंपा है। उन्होंने बालक को एक दैवीय प्रकाशयुक्त माना है जिसकी देखभाल करना शिक्षक का दायित्व है। दूसरी ओर टैगोर का यह भी कथन है कि शिक्षक को आचरण तथा व्यवहार में अच्छा होना चाहिए, ताकि विद्यार्थी उसका अनुसरण कर सकें। शिक्षक ही विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाता है। यह उसके ऊपर निर्भर करता है कि उसके द्वारा शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थी चरित्रवान बनें। छात्र के व्यक्तित्व विकास के लिए शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेदनात्मक और आध्यात्मिक रूप से प्रयास करना पड़ता है। शिक्षकों को अपने अध्यापन व्यवसाय का सूक्ष्म से सूक्ष्म ज्ञान होना चाहिए। व्यक्ति के व्यावसायिक जीवन की सफलता में अभिक्षमता का विशेष महत्व होता है। व्यवसाय से संबंधित अभिक्षमता के अभाव में कोई भी व्यक्ति अपने व्यवसाय में सफलता नहीं प्राप्त कर सकता, जैसे एक डॉक्टर में यदि चिकित्सकीय अभिक्षमता है तो वह चिकित्सा के क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता है। इंजीनियर में इंजीनियरिंग की अभिक्षमता है तो वह सफल एवं दक्ष इंजीनियर होगा। गृहणी में घर का कार्य करने की अभिक्षमता है तो वह घर के कार्य को दक्षता पूर्वक कर सकेगी। इसी प्रकार एक अच्छे अध्यापक में शिक्षण कार्य को भलीभांति सम्पन्न करने के लिए शिक्षण अभिक्षमता का होना नितांत आवश्यक है, जिससे वह शिक्षण कार्य करते समय अपने उच्चतम शिक्षण दक्षता का परिचय दे सके।

शोधकर्ता ने प्रस्तुत विषय में सेवापूर्व एव सेवायोजनकाल की समस्याओं पर विचार करते हुए उनकी शैक्षिक अभिक्षमता के स्वरूप का विस्तृत अध्ययन के लिए तथा उनकी सेवाकालीन दक्षता पर पड़ने वाले प्रभाव के स्वरूप को विस्तृत रूप से परिभाषित करने के लिए प्रस्तुत विषय को चुना। प्रस्तुत विषय में प्रमुख रूप से सेवापूर्व कला एवं विज्ञान विषय के अध्यापक एव अध्यापिकाओं को उनके सेवाकालीन दक्षता पर पड़ने वाले प्रभाव तथा स्वरूप का अध्ययन किया तथा इस कार्य के लिए सर्वेक्षण विधि को प्रयोग में लिया है जिससे शिक्षणरत अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की शिक्षणदक्षता में आने वाली समस्याओं का निवारण किया जा सके। प्रायः देखने को मिलता है कि ऐसे अध्यापक एवं अध्यापिकायें विद्यालय में शिक्षणरत हैं जिनमें न तो शिक्षण अभिक्षमता है और न ही शिक्षण दक्षता है। शोधकर्ता ने शिक्षा के प्रस्तुत आयामों में अध्यापक एवं अध्यापिकाओं को मुख्य भूमिका देते हुए प्रस्तुत विषय को चुना जो शिक्षा प्रशासकों, शिक्षाविदों तथा शिक्षकों को दिशा निर्देश देने में सहायक होंगे जिसका प्रभाव हमारे देश की शिक्षा प्रणाली पर सकारात्मक रूप से पड़ता है।

प्रस्तुत शोध में सेवापूर्व अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता तथा उनकी सेवाकालीन शिक्षणदक्षता का वर्तमान परिस्थितियों में अध्ययन किया गया है तथा अध्ययन हेतु शोध की सर्वेक्षण विधि चयनित की गयी है। न्यादर्श के रूप में असम्भाव्यता न्यादर्श की सोद्देश्य प्रतिदर्श चयन तकनीकी का प्रयोग किया गया है। इसके लिए शोधकर्ता ने वाराणसी एवं फैजाबाद मण्डल के सेवापूर्व अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की संख्या को तालिका द्वारा प्रदर्शित किया है।

पुरूष अध्यापक	कला	74
	विज्ञान	58
महिला अध्यापिका	कला	37
	विज्ञान	30

प्रस्तुत शोधकारी में शिक्षण अभिक्षमता को स्वतंत्र कर तथा शिक्षणदक्षता को आश्रित चर के रूप में रखा गया है। प्रस्तुत परीक्षण के निर्माण डॉक्टर एस.एन. शर्मा एवं डॉक्टर आर.पी0 सिंह (पटना विश्वविद्यालय, पटना) द्वारा निर्मित शिक्षण अभिक्षमता परीक्षण बैटरी तथा शिक्षणदक्षता के लिए वी.के0 पासी तथा एम.एस. ललिता (मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर) के शिक्षणदक्षता मापनी का प्रयोग किया गया।

प्रस्तुत शोध कार्य में आकड़ों के संकलन के पश्चात उनकी व्याख्या एवं विश्लेषण हेतु क्रान्तिक अनुपात, मध्यमान, मानक त्रुटि एवं कारकीय प्रसरण विश्लेषण को प्रयोग किया गया। एफ–अनुपात तालिका से इनकी सार्थकता का स्तर 0.05 अथवा 0.01 के स्तर पर सार्थक की जांच की गई तथा प्रमाणित विचलन ज्ञात किया गया तथा गुणनफल आघूर्ण सह सम्बन्ध विधि का प्रयोग किया। प्रस्तुत अध्याय में आकड़ों का विश्लेषण और व्याख्या क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत

किया गया। शोध उपकरण के प्रशासन के फलस्वरूप उत्तर पत्रों की अंकीकरण करने के पश्चात प्राप्त आकड़ों का आवृत्ति वितरण तालिका बनाकर मध्यमान मानक विचलन क्रान्तिक अनुपात एवं 2x2x2 एफ0 कारकीय विश्लेषण किया गया तथा चरों के मुख्य प्रभाव द्विविधि अन्तक्रियात्मक प्रभाव त्रिविधि अन्तःक्रियात्मक प्रभाव की सार्थकता की जांच 0.05 जांच स्तर पर किया गया।

उपरोक्त समस्त सेवापूर्व कला अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता तथा सेवाकालीन विज्ञान अध्यापकों की शिक्षण दक्षता के प्राप्तांकों का मध्यमान 88.78 तथा मानक विचलन 9.45 है जबकि विज्ञान अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता का मध्यमान 91.57 तथा मानक विचलन 9.2 पाया गया और इनका क्रान्तिक अनुपात (CR) का कलित मान 3.03 है। जबकि सांख्यिकी सारणी में 408 स्वतन्त्रता के अंशों पर और .05 सार्थक स्तर पर क्रान्तिक अनुपात का मान 1.97 दिया गया है। जो कि क्रान्तिक अनुपात के कलिक मान से बहुत कम है, विज्ञान वर्ग के अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता के प्राप्ताकों का मध्यमान कला वर्ग के शिक्षकों के शिक्षण अभिक्षमता के प्राप्तांकों के मध्यमान से अधिक है अर्थात कला एवं विज्ञान वर्ग के अध्यापकों के मध्य शिक्षण अभिक्षमता में सार्थक अन्तर है।

उपरोक्त समस्त सेवापूर्ण अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता तथा सेवाकालीन अध्यापकों की शिक्षण दक्षता के प्राप्तांको के मध्य गुणनफल आघूर्ण विधि द्वारा सह सम्बन्ध की गणना की गई जिसका मान 0.94 प्राप्त हुआ अर्थात सेवापूर्ण अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता तथा उनकी सेवाकालीन शिक्षण दक्षता में अत्यन्त उच्च कोटि का सह सम्बन्ध प्राप्त हुआ। सांख्यिकीय सारणी से स्पष्ट है कि सह सम्बन्ध गुणांक 0.94 की प्रकृति अत्यन्त उच्च धनात्मक सह सम्बन्ध की है। अर्थात सेवापूर्ण अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता में वृद्धि के साथ सेवारत अध्यापकों की शिक्षण दक्षता में भी वृद्धि पाई गयी। स्पष्ट है कि सेवापूर्ण अध्यापकों की शिक्षण अभिक्षमता का प्रारूप जिस ढंग से विकसित होगा, शिक्षण दक्षता भी सेवाकाल में उसी प्रारूप के अनुसार विकसित होगी।

सेवापूर्व पुरूष अध्यापकों एवं महिला अध्यापकों के प्राप्तांको के मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर नहीं पाया गया अर्थात दोनों वर्ग शिक्षण अभिक्षमता में सक्रिय पाये गये इससे यह पता चलता है कि शिक्षण व्यवसाय में दोनों वर्गों की समान रूप से भागीदारी सुनिश्चित की जाये जिससे शिक्षा को एक नया आयाम दिया जा सके। सरकार के विधालयों में शिक्षकों की भर्ती के लिये अब अधिक अभिक्षमता से युक्त अध्यापकों का चयन करना चाहिये तथा उनकी शिक्षण प्रतिभा को और अधिक निखारने के लिए प्रत्येक जिलों में उच्च अभिक्षमता से युक्त प्रशिक्षण देना चाहिये।

मुक्तिबोध के साहित्य में मानवीय मूल्य

डॉ. राजेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी)
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सम्भल, उत्तर प्रदेश

बहुमुखी प्रतिभा के धनी मुक्तिबोध का जन्म 13 नवम्बर सन् 1917 को ग्वालियर के श्योपुर नामक स्थान पर हुआ था, इनकी प्रारम्भिक शिक्षा उज्जैन में हुई। इनके पिता इन्हें वकील बनाना चाहते थे ताकि धन के साथ–साथ मान–सम्मान और प्रतिष्ठा भी मिल सके किन्तु मुक्तिबोध के मन में धन की लालसा नहीं थी। अतः वे वकील न बनकर अध्यापक बन गये। कवि शमशेर बहादुर सिंह इस विषय में लिखते हैं कि–

''वह कमाना चाहता था ज्ञान–धन नहीं, खोज रहा–सम्मानों की रूढ़ियाँ नहीं, नयी दृष्टि और अनुभव, नये युग के अनुभव और काव्य की विलक्षण अनुभूतियाँ।"

गजानन माधव मुक्तिबोध ऋग्वेदी कुलकर्णी ब्रह्मण परिवार के थे, उनके परदादा वासुदेव जलगाँव (खान्देश) से नौकरी के लिये ग्वालियर राज्य आये और वहीं बस गये। परदादा और पिता के संस्कार मुक्तिबोध में आये। उन्होंने अपने जीवनकाल में बहुत संघर्ष किया किन्तु कभी भी अपने सिद्धान्तों और संस्कारों से समझौता नहीं किया। मुक्तिबोध के व्यक्तित्व निर्धारण में भी पारिवारिक संस्कारों का विशेष महत्व रहा। स्वयं मुक्तिबोध के शब्दों में–

''जो परिवार के मूल्य होंगे वे जीवन में होंगे ही और वे साहित्य में भी उतरेंगे। हाँ यह सही है कि साहित्य में आकर उनकी रूपरेखा बदल जायेगी।किन्तु उनके तत्व कैसे बदलेंगे जिन्दगी के जो रूख हैं, रवैये हैं, जो एटीट्यूट्ज हैं वे साहित्य में अवश्य प्रकट होंगे।''

20वीं शताब्दी में निराला के बाद अकेले गजानन माधव मुक्तिबोध ही हैं जो एक समर्थ और संजीदा रचनाकार के रूप में समकालीन हिन्दी कविता और काव्यालोचना को गंभीर अर्थों में प्रभावित करते हैं। वे निराला की ही भाँति अपने आप में तटस्थ, एकनिष्ठ, संघर्षशील एवं जुझारू प्रवृत्ति के रचनाकार रहे। वाकई में महाकवि निराला के बाद मुक्तिबोध का ही व्यक्तित्व सबसे अधिक प्रभावशाली रहा। अवलोकन करने पर उसके ऐतिहासिक कारण दृष्टव्य होते हैं। जैसा कि शमशेर ने कहा है कि– ''राहुल और निराला के अन्तिम चित्र चुनौती बनकर एक प्रश्नचिन्ह से हमारे सामने खड़े हो गये मुक्तिबोध ने छायावाद की सीमाएँ लांघकर प्रगतिवाद से मार्क्सी दर्शन ले, प्रयोगवाद के अधिकांश अधिकार संभाल और उसकी स्वतंत्रता महसूस कर, स्वतंत्र कवि रूप से, सब वादों और पार्टियों से ऊपर उठकर, निराला की सुथरी और खुली मानवतावादी परम्परा को आगे बढ़ाया।'' इसके बाद भी सबसे आश्चर्य जनक बात यह है कि

हिन्दी संसार में उनके जीवन काल में उनकी नहीं के बराबर रचनायें प्रकाशित होने के बाद भी उनका जैसा प्रभावशाली व्यक्तित्व किसी रचनाकार का नहीं रहा। उन्होने कहा है कि–

"हार गये–
सच है परन्तु ज्वाला अन्तर की
हारी नही
और भी धधकी।
धधकी अधिकाधिक ज्यों–ज्यों तुम
अपने से भी पार गये।"[4]

मुक्तिबोध जीवनपर्यन्त संघर्ष करते हुए भी अपनी रचना के प्रति ईमानदार बने रहे। रूपया कमाने के लिए सम्पादक के हाथ का खिलौना बनना उन्हें अभीष्ट न था। मुक्तिबोध ने अपने मित्र श्री जगदीश को पत्र में लिखा था– ''मेरी चीजें अब भी नही छपती हैं और मैं उनके (सम्पादकों के) अनुकूल चीजें लिखकर रूपया कमाना नही चाहता।''[5]

मुक्तिबोध ने अपनी जिंदगी का ज्यादातर हिस्सा कस्बों या छोटे शहरों में गुजारा। उनकी कविता में भी यह विचारधारा बराबर दिखाई देती है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे उनकी कविताएं सोचती विचारती सी चलती हैं। अशोक बाजपेयी इस विषय में कहते हैं कि ''इधर हिंदी में मुक्तिबोध की कविता से ही हमने पहली बार यह पहचाना है कि महायुद्ध रणक्षेत्र या महानगर के शक्ति–केन्द्रों में ही नही लड़ा जाता। उसकी व्याप्ति हमारे निजी जीवन की सुरक्षित लगती सीमाओं के अंदर तक है।''[6]

स्वयं मुक्तिबोध के शब्दों में–

"आदर्शों–लक्ष्यों के स्वर्ण–कांति शिखर लिए
विचार के भव्य भवन
मान सरोवर–तट पर प्रतिबिंबित शोषित हैं।"[7]

विचार और अनुभव–सत्य के सरलीकरण के वे सदैव विरोधी रहे क्योंकि वे जानते थे कि कठिनता के बिना कविता संभव नहीं। उनकी कविता प्रायः प्रक्रिया और प्रतिफल दोनो ही है और इसीलिए ये कविता गहरे नैतिक बोध से ओत–प्रोत हैं। 'अन्तःकरण का आयतन' नामक कविता में उन्होने अपने अग्निगर्भा विचारों को अभिव्यक्त किया–

"स्वयं की चेतनाओं को मिलाती है
उनसे भभककर सहसा निकलती आग,
या निष्कर्ष

जिनको देखकर, अनुभूत दोनों चमत्कृत हैं

अंधेरे औ" उजाले के भयानक द्वंद्व

की सारी व्यथा जीकर।"[8]

'जलना' नामक एक कहानी के माध्यम से मुक्तिबोध एक ऐसे साधारण हिन्दुस्तानी आदमी के जीवन संघर्षों को अभिव्यक्त करते हैं जो अपने बच्चों के बारे में सोचता है कि मैं इन्हें अपने अर्थाभाव के कारण बहुत अच्छी शिक्षा तो नहीं दिला सकता लेकिन अपने सारे विचार, धारणाएं उन्हें दे दूगाँ जिससे वह गरीबों में ही रहें, उन्हें पढ़ायें–लिखायें और नये–नये विचार दें।

उनकी कविता और व्यक्तित्व दोनों ही साधारण शोषित वर्ग के प्रति प्रतिबद्ध रहे। उनके सामान्य आचार–विचार को स्पष्ट करते हुए लक्ष्मणदत्त गौतम ने लिखा है– ''राह चलते बीड़ी सुलगाते भी उनके चर्चा के विषय रहते थे–समाज, सरकार, वर्ग–संघर्ष और हथकण्डे, साम्यवाद के विरोध में मार्मिक प्रचार, हमारी व्यवस्था आरोग्य मिलावट, मित्रों के समाचार, विज्ञान आदि।"[9]

मुक्तिबोध का लेखन 1935 से आरम्भ होता है। यह हिन्दी साहित्य के इतिहास का महत्वपूर्ण समय था। यह मुक्तिबोध की रचना का संधिस्थल था। यहाँ छायावाद के अवसान और प्रगतिवाद के उदय के द्वन्द्व से मुक्तिबोध की कविता बनती है। ये दोनों काव्य प्रवृत्तियाँ ही उनके व्यक्तित्व को गढ़ती हैं स्वयं मुक्तिबोध के शब्दो में–

''चलने वाला पहले से नहीं जानता

कि क्या उद्‌घाटित होगा। उसे अपनी पीली

मद्धिम लालटेन ही का सहारा है इस पथ

पर चलने का अर्थ ही पथ का उद्‌घाटन

होना है और वह भी धीरे धीरे क्रमशः।''[10]

अपने 47 वर्षों के जीवन में मुक्तिबोध ने अथक संघर्ष किया इसीलिए उनकी तुलना महाकवि निराला से की जाती है निराला में अपने अर्थाभाव की ग्लानि थी और वह कहते हैं–

"जाना तो अर्थागमोपाय,

पर सदा रहा संकुचित काय

लखकर अनर्थ आर्थिक पथ पर

हारता रहा मैं स्वार्थ समर।"[11]

तो वहीं मुक्तिबोध में अपनी गरीबी में भी गर्व का भाव झलकता है और वह उससे भी अपनी कविता के लिये गंभीर तथ्य खोज लाते हैं–

"जिंदगी में जो कुछ है, जो भी है

सहर्ष स्वीकारा है,
इसलिए कि जो कुछ भी मेरा है
वह तुम्हे प्यारा है।
गरबीली गरीबी यह ये गंभीर अनुभव सब
यह विचार वैभव सब
दृढ़ता यह, भीतर की सरिता यह अभिनव सब
मौलिक है, मौलिक है।"[12]

उनका व्यक्तिगत जीवन और कविता दोनों ही संसार हमारे जाने पहचाने रोजमर्रा के संसार में जिसमें मनुष्यता का गहरा संघर्ष अनेक स्तरों पर बराबर चलता है। लेकिन बँधे बँधाये समाज में उनकी अपनी मान्यतायें और मूल्य सर्वथा भिन्न हैं—

"मैं तुम लोगों से दूर हूँ।
तुम्हारी प्रेरणाओं से मेरी प्रेरणा इतनी भिन्न हैं
कि जो तुम्हारे लिये विष है, मेरे लिये अन्न है।"[13]

सामाजिक व्यवस्था की विकृतियाँ उन्हें सदैव कचोटती थीं, तमाम कुरीतियाँ और भ्रष्ट शासन तंत्र की गंदगी को साफ करके वे नवीन स्वच्छ व्यवस्था चाहते थे—

''निज से अप्रसन्न हूँ
इसलिए कि जो है उससे बेहतर चाहिए
पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए।"[14]

श्रीकान्त वर्मा जी ने अपने लेख 'मुक्तिबोध की सार्थकता' में मुक्तिबोध के विषय में लिखा हैं— ''अपने जीवन काल में या मृत्यु के बाद बुत की तरह स्थापित हो जाना नहीं बल्कि आने वाले युगों के लिए चुनौती के रूप में बना रहना अमरता है। अनिर्णीत साहित्य ही इतिहास की कड़ियों में बार बार जुड़ने वाला साहित्य है मुक्तिबोध का साहित्य अब भी अनिर्णीत है और आगे भी रहेगा—एक चुनौती के रूप में बना रहना ही उनकी नियति है।"[15] स्वयं मुक्तिबोध के शब्दों में—

''कविता में कहने की आदत नहीं पर कह दूँ
वर्तमान समाज चल नही सकता
पूँजी से जुड़ा हुआ हृदय बदल नहीं सकता
स्वातंत्र्य व्यक्ति का वादी
छल नहीं सकता मुक्ति के मन के,
जन को।"[16]

मुक्तिबोध की कविता मार्क्सवादी विचारधारा से अनुप्राणित है, इसीलिए उनके विचार समाज के गतिशील यथार्थ की पहचान कराने में समर्थ रहे हैं। वे आज की तमाम अमनुष्यता के विरूद्ध अन्ततः मानव की विजय की ओर आशान्वित करते हैं। "कहते हैं–

आदमी की दर्द भरी गहरी पुकार सुन
जो दौड़ पड़ता है आदमी है वह भी
जैसे तुम भी आदमी, वैसे मैं भी आदमी।"[19]

अशोक बाजपेयी कहते हैं– "मुक्तिबोध आरम्भ में स्वस्थ वैयक्तिक अनुभवों की भूमिका पर सन्तुलित प्रकार की कविता लिखा करते थे, लेकिन जीवन के कटु अनुभवों ने उनके इस संतुलन को भंग कर दिया और वे निरन्तर आततायित्व से पीड़ित भावनाओं को अभिव्यक्ति देने लगे।"[18] वास्तव में वे अभिव्यक्ति के लिये अन्य कवियों की तरह विशिष्ट शब्द की नही, बल्कि विशिष्ट व्यंग्य, विशिष्ट प्रतीक की खोज करते हैं।

"जीवन में आज के
लेखक की कठिनाई यह नही कि
कमी है विषयों की
वरन् यह कि आधिक्य उनका ही
उसको सताता हैं
और, वह ठीक चुनाव कर नही पाता है।" [19]

हरिनारायण व्यास का विचार है कि "उनकी कविता छायावाद की रूमानियत, रहस्यवाद की गूढ़ता और प्रगतिवाद की यथार्थता तीनों ही है। उनकी कविताएँ नागर कविताएँ नहीं हैं, बल्कि भारतीय जीवन के खुले हुए आँगन में पलने वाले सांस्कृतिक व्यक्तित्व की अभिव्यक्तियाँ हैं।"[20] उनकी कतिवाओं में अज्ञेय ने जिसे 'बन्धुत्व का भाव' कहा है उसी को व्यास जी ने 'आत्मीय के आलिंगन की ऊष्मा' कहा है, लेकिन यह पूर्णतः सत्य है कि उनकी रचनाएँ पूरे समाज का या निम्न–मध्य वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनका व्यक्तित्व और विचारधारा इतनी उत्तेजक है कि अनेकों दार्शनिक चिन्तनाओं को सामंजस्य दे सकी है। समीक्षकों ने उनके काव्य की तुलना 'जलते हुए अंगारों पर चलने वाले व्यक्ति की मनःस्थिति' से की है।

संदर्भ

1. *'चाँद का मुँह टेढ़ा है'–भूमिका से–शमशेर बहादुर सिंह*
2. *एक साहित्यिक की डायरी–मुक्तिबोध, पृ0–88*
3. *नया ज्ञानोदय–सितम्बर 2014, पृ0–05*
4. *नया ज्ञानोदय–सितम्बर 2014, पृ0–23*

5. राष्ट्रवाणी—जनवरी फरवरी 1965, पृ0—282
6. गजानन माधव मुक्तिबोध प्रतिनिधि कविताएँ—भूमिका, अशोक बाजपेयी
7. वही—पृ0 25
8. वही—पृ0 68
9. नयी कविता का आत्म संघर्ष, मुक्तिबोध, पृ0 26—27
10. वही—पृ0—27
11. सरोज स्मृति, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', उद्धृत—निराला की दो लम्बी कविताएँ, डॉ0 जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, —पृ0—81
12. प्रतिनिधि कविताएँ, गजानन माधव मुक्तिबोध —पृ0—20—21
13. वही, पृ0—84
14. वही, पृ0—84
15. मुक्तिबोध—कवि छवि सम्पादक नंदकिशोर नवल (मुक्तिबोध की सार्थकता)—लेख श्रीकान्त वर्मा, पृ0 93—94
16. प्रतिनिधि कविताएँ, गजानन माधव मुक्तिबोध —पृ0 164—165
17. वही, पृ0 110—111
18. मुक्तिबोध—कवि छवि, भूमिका, सम्पादक—नंदकिशोर नवल—पृ0 8
19. प्रतिनिधि कविताएँ, गजानन माधव मुक्तिबोध —पृ0 79
20. मुक्तिबोध—कवि छवि, भूमिका, सम्पादक—नंदकिशोर नवल—पृ0—11

सहशिक्षा महाविद्यालय और महिला महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. श्रीमती रजनी दुबे
प्राचार्या, सर्वधर्म महाविद्यालय, ग्वालियर

प्रस्तावना

शिक्षा द्वारा व्यक्तित्व के तीन पक्षों ज्ञान, भावना व कर्म का इस तरह विकास किया जाना चाहिये कि एक संतुलित व्यक्तित्व का निर्माण हो सके। ज्ञानात्मक अथवा कर्मपक्ष का एकल विकास बुद्धिजीवी व श्रमजीवी का भेद उत्पन्न करता है। ज्ञानी कर्म को हेय मानने लगता है जबकि कर्मशील व्यक्ति ज्ञान पक्ष से दूर हो जाता है। एक पक्षीय विकास भावपक्ष के सम्यक विकास में अवरोध उत्पन्न करता है। अतः गांधी जी ने इन सभी पक्षों के विकास हेतु कलात्मक विषयों के साथ–साथ पाठ्यक्रम में हस्तशिल्प को केन्द्रीय स्थान प्रदान किया। शिक्षा पुरूष और महिला की गरिमा बनाये रखते हुये बुनियादी मानवाधिकारों के प्रति वचनबद्धता और विश्वास को फिर से कायम करती है।

शिक्षा महिलाओं तथा बालिकाओं के सामाजिक स्तर को उन्नत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है और शिक्षा ही एक मात्र तथा प्रबल साधन है जो महिलाओं तथा बालिकाओं के सामाजिक स्तर को उन्नत करते हुये महिला सशक्तिकरण में मील का पत्थर साबित हो सकती है। महिलाओं की शिक्षा एक बहुआयामी असाधारण वस्तु है। महिलाओं के उद्वार तथा सशक्तिकरण के लिये शिक्षा एक प्रभावशाली उपकरण है। सबसे महत्वपूर्ण घटक जो किसी भी समाज में महिलाओं की प्रतिष्ठा को अविश्वसनीय रूप से उन्नत कर सकता है वह है शिक्षा। यह अपरिहार्य है कि शिक्षा महिलाओं को घर से बाहर की दुनिया के बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त करने में न केवल समर्थ बनाती है बल्कि उन्हें प्रतिष्ठा पाने, सकारात्मक, आत्मसम्मान एवं आत्मविश्वास, जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिये आवश्यक साहस और आन्तरिक बल प्राप्त करने में सहायता करती है, इसके अलावा यह महिलाओं को ज्ञान पर आधारित निर्णय लेने के योग्य बनाती है। शिक्षित महिलाएँ राष्ट्र के निर्माण में पुरूषों के समान महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

भारतीय संस्कृति जहां कुछ समय पहले महान विचारकों, उपदेशकों, महापुरूशों, मूल्यप्रतिपादकों की जन्मदात्री थी, वही आज बदलते परिवेश में मूल्य–क्षरण, आपसी वैमनस्यता, लोगों में व्याप्त असंतुष्टियों, बेईमानी, भ्रष्टाचार, इत्यादि दुर्गुणों का घर बन गया है।

इसलिये आज के वर्तमान दृश्य पटल पर बच्चों में जीवनोपयोगी सद्गुणों का होना आवश्यक हैं। क्योंकि अनवरत मूल्य ह्रास होने से कदाचार और हिंसात्मक प्रवृत्ति को प्रश्रय मिलता है तथा लोग एक दूसरे के प्रति राग–द्वेष एवं ईर्ष्यालु व्यवहारों को अधिग्रहण करते हैं। आज इस तरह की स्थिति इसलिये पैदा हो गई है क्योंकि बच्चों को मूल्य शिक्षा की जानकारी नहीं दी जाती है। बच्चों में आवश्यक सद्गुणों का होना नितान्त आवश्यक है और अगर इस मूल्य शिक्षा को विद्यालयीन पाठ्यचर्या में शामिल किया जाये तो और भी बेहतर होगा। मूल्य शिक्षा का होना अनिवार्य इसलिये है कि आज का बालक कल का राष्ट्रनायक है जो एक स्वस्थ्य समाज, देश एवं महान राष्ट्र का निर्माण कर सकता है।

बच्चों में मानवीय सद्गुणों को संस्कारित करने का सबसे गंभीर एवं सुनियोजित काल है प्राथमिक अवस्था के इस काल में जिस तरह का बीजारोपण बच्चों में किया जायेगा। तत्सदृश ही पौधे तैयार होंगे तथा जब इस पौधे को सही संरक्षण मिलेगा तो एक अखण्ड संसाधन के द्वारा मानसिकता पूर्णरूपेण, भावुकतापूर्ण, बुद्धिमतापूर्ण, मानवतापूर्ण, आध्यात्मिकतापूर्ण, व्यक्तित्व का निर्माण तथा विकास किया जा सकता है। छात्रों को मूल्य संस्कारित करने में स्त्री की अहम भूमिका प्रतीकात्मक एवं उपयुक्त होनी चाहिये।

बालक की प्रथम पाठशाला उसका परिवार है और प्रथम शिक्षक उसकी माँ। यदि स्त्रियों में मूल्यों का उचित संरक्षण होगा तो वे इन मूल्यों को बालकों में संचारित करेंगी। संस्कृति संस्कारों से बनती है और संस्कार माता की गोद से जन्म लेते हैं। जैसी माता होती है वैसे ही संस्कार बालक के बना करते हैं। अच्छे संस्कार के व्यक्ति को यदि वातावरण अच्छा मिल जाता है तो वह सुसंस्कृत हो जाता है अन्यथा उसके विकृत होने में कोई संदेह नहीं रहता।

भारतीय संस्कृति के पोषक तो सह–शिक्षा के पक्ष में हैं ही नहीं, परन्तु कुछ पाश्चात्य संस्कृति के पोशक भी इसे उपयुक्त नहीं मानते। उनका मानना है कि सह–शिक्षा से छात्राओं में लज्जा तथा स्त्रीत्व के मूल्यों का अभाव होने लगता है। क्या वास्तव में सहशिक्षा एवं महिला महाविद्यालय की छात्राओं के मूल्यों में अन्तर है?

अध्ययन के उद्देश्य

1. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सैद्धांतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
2. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के आर्थिक मूल्यों का अध्ययन करना।
3. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्यों का अध्ययन करना।
4. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सामाजिक मूल्यों का अध्ययन करना।

5. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के राजनैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
6. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के धार्मिक मूल्यों का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पनाएँ निम्नानुसार है :–

1. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सैद्धांतिक मूल्यों के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के आर्थिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सामाजिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के राजनैतिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
6. सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के धार्मिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन के चर

प्रस्तुत अध्ययन में स्वतंत्र एवं आश्रित चर इस प्रकार हैं –

(अ) स्वतंत्र चर – (1) सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राएँ
(2) महिला महाविद्यालय की छात्राएँ

(ब) आश्रित चर – (1) स्वबोध (सम्प्रत्यय)
(2) समायोजन
(3) मूल्य

अध्ययन की परिसीमाएँ

प्रस्तुत अध्ययन की परिसीमाएँ इस प्रकार हैं –

1. प्रस्तुत अध्ययन केवल भोपाल शहर के सहशिक्षा महाविद्यालयों एवं महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के अध्ययन तक सीमित रखा गया।

2. प्रस्तुत अध्ययन कला एवं विज्ञान संकाय की छात्राओं के अध्ययन तक सीमित रखा गया।
3. प्रस्तुत अध्ययन केवल स्नातक तृतीय वर्ष में अध्ययनरत छात्राओं के अध्ययन तक सीमित रखा गया।
4. प्रस्तुत अध्ययन में सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के मूल्यों की तुलना करने का प्रयास किया गया।

अध्ययन विधि

प्रस्तुत अध्ययन में शोध विधि के रूप में सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया है।

शोध उपकरण

शोध के निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति हेतु डॉ0 आर0 के0 ओझा द्वारा निर्मित मूल्य परीक्षण उपकरण का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय प्रविधियां

प्रस्तुत अध्ययन में आंकड़ों के संकलन तथा संख्यात्मक तथ्यों का विश्लेषण करने के लिये मध्यमान, मानक विचलन तथा ''टी'' परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

व्याख्या एवं निष्कर्ष

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक 1: सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य का टी–परीक्षण

महाविद्यालय का प्रकार	छात्राओं की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता की कोटि	टी–मान	सार्थकता स्तर
राहशिक्षा महाविद्यालय	200	42.98	5.16	398	0.85	सार्थक नहीं
महिला महाविद्यालय	200	43.43	5.44			

0.05 = 1.96

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्राप्त ''टी'' मान = 0.85 सार्थकता स्तर 0.05 पर आवश्यक न्यूनतम टी–मान 1.96 से कम है अतः दोनों मध्यमानों के मध्य अवलोकित 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है।

अतः शून्य परिकल्पना सत्य एवं स्वीकृत की जाती है। कह सकते हैं कि सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रतिभा दादू (1992) ने सामाजिक आर्थिक स्तर के परिप्रेक्ष्य में शहरी तथा ग्रामीण महिला एवं पुरुषों के सैद्धान्तिक मूल्यों में सार्थक अन्तर पाया। जिसका कारण शहरी एवं ग्रामीण परिवेश हो सकता है।

परिकल्पना 2

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के आर्थिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक 2: सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के आर्थिक मूल्य का टी–परीक्षण

महाविद्यालय का प्रकार	छात्राओं की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता की कोटि	टी–मान	सार्थकता स्तर
सहशिक्षा महाविद्यालय	200	41.78	6.01	398	2.24	सार्थक है
महिला महाविद्यालय	200	40.40				

0.05 = 1.96

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्राप्त टी मान= 2.24 सार्थकता स्तर 0.05 पर आवश्यक न्यूनतम टी–मान 1.96 से अधिक है। अतः दोनों मध्यमानों के मध्य अवलोकित 0.05 स्तर पर सार्थक है।

अतः शून्य परिकल्पना 0.05 स्तर पर असत्य एवं अस्वीकृत की जाती है कहा जा सकता है कि सहषिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के आर्थिक मूल्य के मध्य 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक अंतर है। सहशिक्षा महाविद्यालयों की छात्राओं में महिला महाविद्यालयों की छात्राओं की अपेक्षा आर्थिक मूल्य उच्च होते है।

ओ.पी. शर्मा (1993) एवं विजय एल कुमारी (1996) के शोधाध्ययन में भी पाया गया कि दो पेशेवर समूहों के आवश्यकता मूल्य वरीयता दृष्टिकोण में अन्तर पाया जाता है तथा शिक्षकों में व्यावसायिक एवं प्रगतिशील मूल्य सर्वाधिक पाये जाते हैं।

परिकल्पना 3

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालय की स्नातक छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक 3: सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य का टी–परीक्षण

महाविद्यालय का प्रकार	छात्राओं की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता की कोटि	टी–मान	सार्थकता स्तर
सहशिक्षा महाविद्यालय	200	34.5	7.24	398	0.65	सार्थक है
महिला महाविद्यालय	200	34.98	7.33			

0.05 = 1.96

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्राप्त टी मान = 0.65 सार्थकता स्तर 0.05 पर आवश्यक न्यूनतम टी–मान 1.96 से कम है। अतः दोनों मध्यमानों के मध्य अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है।

अतः शून्य परिकल्पना सत्य एवं स्वीकृत की जाती है। अतः कहा जा सकता है कि सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

राम कल्प तिवारी एवं रेणु तिवारी (1993) ने अपने शोधाध्ययन में पाया कि महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में जाति अन्तर के संदर्भ में सैद्धान्तिक, सौन्दर्यात्मक तथा धार्मिक मूल्यों में अन्तर पाया जाता है। इसका कारण जाति अंतर हो सकता है।

परिकल्पना 4

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सामाजिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक 4: सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सामाजिक मूल्य का टी–परीक्षण

महाविद्यालय का प्रकार	छात्राओं की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता की कोटि	टी–मान	सार्थकता स्तर
सहशिक्षा महाविद्यालय	200	41.4	6.01	398	0.09	सार्थक नहीं
महिला महाविद्यालय	200	41.45	5.33			

0.05 = 1.96

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्राप्त टी मान = 0.09 सार्थकता स्तर 0.05 पर आवश्यक न्यूनतम टी–मान 1.96 से कम है। अतः दोनों मध्यमानों के मध्य अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है।

अतः शून्य परिकल्पना सत्य एवं स्वीकृत की जाती है। कहा जा सकता है कि सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सामाजिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

इस कथन की पुष्टि सुनील बाजपेयी (1997) के शोधाध्ययन से होती है। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि शहरी तथा ग्रामीण लड़कों एवं लड़कियों के सामाजिक तथा राजनैतिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है। इस कथन की पुष्टि शैलजा शर्मा एवं वीना बंसल (2007) के शोधाध्ययन द्वारा भी होती है जिन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि महाविद्यालय के विभिन्न शैक्षिक समूहों के विद्यार्थियों के सैद्धान्तिक, सौन्दर्यात्मक तथा राजनैतिक मूल्यों में भिन्नता पायी जाती है परन्तु आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक मूल्यों में कोई अन्तर नहीं होता है।

परिकल्पना 5

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के राजनैतिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक 5: सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के राजनैतिक मूल्य का टी–परीक्षण

महाविद्यालय का प्रकार	छात्राओं की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता की कोटि	टी–मान	सार्थकता स्तर
सहशिक्षा महाविद्यालय	200	41.3	5.03	398	0.52	सार्थक नहीं
महिला महाविद्यालय	200	41.05	4.70			

0.05 = 1.96

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्राप्त टी मान = 0.52 सार्थकता स्तर 0.05 पर आवश्यक न्यूनतम टी–मान 1.96 से कम है। अतः दोनों मध्यमानों के मध्य अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है।

अतः शून्य परिकल्पना सत्य एवं स्वीकृत की जाती है। अर्थात् सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के राजनैतिक मूल्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परिकल्पना 6

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालय की स्नातक छात्राओं के धार्मिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक 6: सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के धार्मिक मूल्यों का टी–परीक्षण

महाविद्यालय का प्रकार	छात्राओं की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतन्त्रता की कोटि	टी–मान	सार्थकता स्तर
सहशिक्षा महाविद्यालय	200	37.88	6.64	398	1.59	सार्थक
महिला महाविद्यालय	200	38.85	5.55			नहीं

0.05 = 1.96

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्राप्त टी मान = 1.59 सार्थकता स्तर 0.05 पर आवश्यक न्यूनतम टी–मान 1.96 से कम है। अतः दोनों मध्यमानों के मध्य अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है।

अतः शून्य परिकल्पना सत्य एवं स्वीकृत की जाती है। अर्थात् सहशिक्षा और महिला महाविद्यालय की स्नातक छात्राओं के धार्मिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अली सैयद फिरोज एवं एस करुणानिधि (1995) का शोधाध्ययन के अनुसार धार्मिकता एवं मूल्यों का विद्यार्थियों के लिंग तथा आयु पर सार्थक प्रभाव नहीं है।

निष्कर्ष

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया है। महिला महाविद्यालय की छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य का मध्यमान सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य के मध्यमान से अधिक है। अतः महिला महाविद्यालय की छात्राओं के सैद्धान्तिक मूल्य सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं से उच्च पाये गये।

सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के आर्थिक मूल्य महिला महाविद्यालय की छात्राओं से उच्च पाये गये तथा यह अंतर सार्थक है।

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं है। हालांकि महिला महाविद्यालय की छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य से उच्च है परन्तु यह अन्तर सार्थक नहीं है।

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के सामाजिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं है। महिला महाविद्यालय की छात्राओं के सामाजिक मूल्यों और सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के सामाजिक मूल्यों में अंतर नहीं पाया गया।

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के राजनैतिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं है। हालांकि सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के राजनैतिक मूल्य महिला महाविद्यालय की छात्राओं से उच्च है परंन्तु यह अन्तर सार्थक नहीं है।

सहशिक्षा और महिला महाविद्यालयों की स्नातक छात्राओं के धार्मिक मूल्य के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

हालांकि महिला महाविद्यालय की छात्राओं के धार्मिक मूल्यों का मध्यमान सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के धार्मिक मूल्यों के मध्यमान से उच्च पाया गया परन्तु यह अंतर सार्थक नहीं है।

उपरोक्त परिकल्पनाओं (परिकल्पना क्रमांक 1 से 6 तक) के विश्लेषण के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सहशिक्षा महाविद्यालय की छात्राओं के आर्थिक मूल्य, राजनैतिक मूल्य महिला महाविद्यालयों की छात्राओं से उच्च पाये गये जबकि सैद्धान्तिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य, सामाजिक मूल्य एवं धार्मिक मूल्य महिला महाविद्यालय की छात्राओं में उच्च पाये गये।

सन्दर्भ

1. *श्रीवास्तव एवं भारद्वाज ''किशोर छात्राओं के मूल्य टकराव के विकास पर शिक्षण संस्थान के प्रभाव का अध्ययन'', भारतीय आधुनिक शिक्षा, जनवरी 2011, पेज 89*
2. *गोडियाल सुनीता ''बी.एड. विद्यार्थियों के व्यावसायिक मूल्यों का अध्ययन'', इण्डियन जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एजूकेशन, वोल्यम 42 भाग 2, जुलाई, 2011*
3. *अत्री अजय कुमार, ''भावी शिक्षकों के बीच पसंदीदा मूल्य पैटर्न का अध्ययन'', इण्डियन जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एजूकेशन, जनवरी 2011, पेज 16*
4. *राय पारसनाथ, अनुसंधान परिचय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल शिक्षा सम्बंधी प्रकाशन, आगरा, पेज 287–288*
5. *कपिल एच.के., 2004, अनुसंधान विधियाँ, ए.पी. भार्गव बुक हाऊस, आगरा, पेज 51*
6. *शर्मा आर.ए., शिक्षा अनुसंधान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पेज 524*
7. *श्रीवास्तव डी.एन., सांख्यिकी एवं मापन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, पेज 97*
8. *गुप्ता एस.पी., सांख्यिकीय विधियाँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पेज 276*

मानवीय मूल्यों पर आधुनिकता का प्रभाव और वर्तमान शिक्षा

डॉ. राकेश कुमार शर्मा[1], शक्ति सिंह[2]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ टीचर एजुकेशन
[2]शोध छात्र, शिक्षा
राधे हरी राजकीय महाविद्यालय काशीपुर उधम सिंह नगर उत्तराखंड भारत।

मूल्यों का स्वरूप अथवा अर्थ

साधारणतः मूल्य शब्द कहने से पैसे का विचार आ जाता है। यह एक अर्थशास्त्रीय प्रत्यय माना जाता है। पर मूल्य का अर्थ इतना संकुचित नहीं है। यदि हमारे पास किसी का भेंट किया हुआ एक रूमाल हो तो उसे भी हम मूल्यवान मानते हैं, हालांकि उसका दाम बहुत कम है। बात यह है कि मानव जीवन एक चयनात्मक क्रिया है। हम अमुक काम करते हैं, दूसरा नहीं। हम वैसे ही कर्म करते हैं जो हमें अच्छे लगते हैं। खराब कर्मो को भी कत्तार्त अच्छा ही समझकर करता है। जिसे हम अच्छा या अशुभ समझते हैं, उसी को मूल्यवानध भी मानते हैं। जो हमारे लिए शुभ है वही हमारे लिए मूल्यवानध है। अतः जिस प्रकार अच्छा या शुभ नीतिशास्त्र का मौलिक प्रत्यय है, उसी प्रकार मूल्य भी है। जो हमें अच्छा लगे, वही आपको भी अच्छा लगे यह आवश्यक नहीं है। जो हमारे लिए मूल्यवान है, वह आपके लिए नहीं भी हो सकता है। इसलिए साधारणतः मूल्य का अर्थ है वह, जो हमारी इच्छा को तृप्त करें। मानवीय इच्छा य आवश्यकताओं को तृप्त करने वाली सभी वस्तुएं मूल्यवान हैं या शुभ हैं। अन्न मूल्यवान है इसलिए कि उससे हमारी क्षुधा की तृप्ति होती है।

नीति शास्त्र संबंधी अर्थ के अनुसार वे वस्तुएं अथवा क्रियाएं मूल्यवान होती हैं जो हमारी आत्मा को पूर्णता प्रदान करने में सहायक होती हैं। शाब्दिक रूप से देखा जाए तो मूल्य को अंग्रेजी में वैल्यू कहते हैं और वैल्यू लेटिन भाषा के वेलियर (Valere) शब्द से बना है वेलियर का अंग्रेजी में अर्थ है एबिलिटी यूटिलिटी तथा इंपोर्टेंस हिंदी में अर्थ है –योग्यता, उपयोगिता व महत्व। कनिंघम के विचार अनुसार शिक्षा– मूल्य शिक्षा के उद्देश्य बन जाते हैं। इन्हीं के अनुसार व्यक्ति के उन गुणों, योग्यताओं तथा क्षमताओं को विकसित किया जाता है जो वस्तुतः जीवन मूल्यों में निहित होते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीत (1986) में बुनियादी मानवीय मूल्यों जैसे प्रेम सत्यता, अहिंसा, सह– अस्तित्व सहयोग आलोचनात्मक चिंतन, एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि के विकास पर बल दिया गया है। दार्शनिक अर्थ में मूल्य किसी वस्तु या व्यक्ति से संबंधित नहीं होते बल्कि किसी विचार या दृष्टिकोण से संबंधित होते हैं। जो चीज किसी व्यक्ति के लिए उपयोगी होती है वही उसके लिए मूल्यवान बन जाती है।

मूल्य शिक्षा के उद्देश्य

सन (1985) में शिक्षा– सुधार के लिए एक दस्तावेज प्रकाशित किया गया जो के नाम से विख्यात है।इस दस्तावेज में मूल्य शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य बताए गए हैं– व्यक्तित्व का शारीरिक, बौद्धिक एवं सौंदर्यात्मक विकास, वैज्ञानिक स्वभाव एवं लोकतंत्रात्मक नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का निर्माण, अपरिचित स्थितियों का सामना करने के लिए आत्मविश्वास का विकास, भौतिक, सामाजिक, तकनीकी, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रति जागरूकता, धर्मनिरपेक्षता एवं सामाजिक न्याय के लिए प्रतिबद्धता, देश की एकता एवं प्रतिष्ठा के लिए समर्पण की भावना का विकास, देश के विकास को सुदृढ़ बनाना, अंतर्राष्ट्रीय विवेक का विकास आदि। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य एवं कार्य विद्यार्थियों के सर्वांगीण और अच्छी तरह से संतुलित व्यक्तित्व का विकास करने से है। ताकि विद्यार्थी अपने राष्ट्र को अधिक लोकतांत्रिक, सामंजस्य पूर्ण, सामाजिक रूप से जिम्मेदार बनने में सहायता कर सके। सांस्कृतिक रूप में समृद्ध और बौद्धिक रूप मैं प्रतिस्पर्धी बन सकें। समाज में प्रत्येक मनुष्य का उद्देश्य होना चाहिए कि वे सत्य, अहिंसा और शाश्वत मूल्यों का पालन करें। समाज में कल्याणकारी सामंजस्य की स्थिति कायम रखने के उद्देश्य से ही मूल्यों का उद्भव होता है। लेकिन मूलतः उन्ही शाश्वत मूल्यों का वर्तमान में संरक्षण होता है जो संपूर्ण मानव समाज के आधार स्तंभ है। वर्तमान समाज में सर्वमान्य मूल्य समानता, अस्पृश्यता निवारण, धर्मनिरपेक्षता आदि के अंतर्गत उन्ही शाश्वत मूल्यों की रक्षा की जा रही है जिसके अनुसार मनुष्य को ईश्वर की संतान मान कर उसे किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं दिया जा सकता।

वर्तमान समय में अत्यधिक स्वार्थपरता के कारण मूल्यों का ह्रास हो रहा है, इसके लिए हमारा समाज और हमारी शिक्षा भी किसी हद तक जिम्मेदार हैं, क्योंकि कोई भी मनुष्य जन्मजात खराब नहीं होता बातों से खराब होता है, कल तक हम जिन मूल्यों को निम्न कोटि का समझते थे आज उन्हीं के पीछे भाग रहे हैं, अधिकारी, नेता भी मूल्यों की बात करते हैं। आज राष्ट्रीय, सामाजिक, राजनीतिक, पारिवारिक तथा वैयक्तिक जीवन में अनेक समस्याएं आ गई है। प्राचीन मूल्य शनैः शनै विलुप्त रहे हैं।

मूल्य शिक्षा की आवश्यकता

आज सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का खंडन हो रहा है। धर्म कमजोर हो रहा है। शक्ति एवं ज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है। राष्ट्र का एक दूसरे के प्रति विश्वास नहीं है। तस्करी, बेईमानी, भ्रष्टाचार, क्रूरता, अनुशासनहीनता, अहिंसा का बोलबाला है। ऐसी विकट स्थिति में शिक्षा को मूल्य उन्मुख बनाना अत्यंत आवश्यक है। केवल मूल्य –उन्मुख शिक्षा ही वैयक्तिक हित, सामाजिक हित, प्रेम, शांति, सद्भावना तथा विवेक को विकसित कर सकती है।

मूल शिक्षा की आवश्यकता तो सदैव से ही रही है। आज भी है और कल भी रहेगी। यदि हम भारत के शैक्षिक इतिहास पर दृष्टिपात करें तो यह ज्ञात होता है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में देश ने प्रगति की है। आज हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि भारत ने यातायात, संचार व चिकित्सा के क्षेत्र में संतोषजनक उपलब्धियां की हैं। परंतु इसके साथ ही दूसरी और जब हम अपनी संस्कृति व मूल्यों पर विचार करते हैं तो हमें अत्यंत शर्मा अनुभव होती हैं क्योंकि मूल्यों की दृष्टि से हमारा दिन प्रतिदिन पतन होता जा रहा है। आज हमारे सामने विषम परिस्थितियां हैं, एक ओर हम अपने भारतीय मूल्यों से अनभिज्ञ है और उसी अनभिज्ञता में व्यवहार करते जा रहे हैं। दूसरी ओर हमें भारतीय मूल्यों का ज्ञान तो है परंतु हम उनके प्रति आस्था नहीं रखते और मूल्य विहीन व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं।

वर्तमान युग में व्याप्त राजनीतिक तनाव का मुख्य कारण यही है कि ज्ञान की वृद्धि हो रही है, परंतु नैतिकता पिछड़ रही है। सत्य, न्याय एवं अहिंसा ही ऐसे नैतिक मूल्य हैं जो मानवता के घावों पर मरहम का काम कर सकते हैं। मूल्य शिक्षा ही मनुष्य को प्रेरित कर सकती है कि वह अणु शक्ति का प्रयोग मानवता के विनाश के लिए नहीं बल्कि मानवता की भलाई के लिए करें। सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का विकास एवं प्रचार शिक्षा का ही काम है। इन्हीं मूल्यों में जीवन को संगठित करने की शक्ति निहित है।

मूल्य उन्मुख शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व में निम्न बातों को जोड़ा जा सकता है—नैतिक विकास, सांस्कृतिक विकास, उदार दृष्टिकोण का विकास, लोकतांत्रिक गुणों का विकास, मूल प्रवृत्तियों का का परिष्कार, विवादों को शांत करना, सहयोग पूर्ण जीवन, मानवतावाद की बुनियाद, आत्मा का श्रंगार, समरसता की स्थापना आदि।

आज शिक्षा में मूल्य आधारित शिक्षा की आवश्यकता है —अच्छे शिष्टाचार और जिम्मेदार सहकारी नागरिकता का प्रचार हेतु, व्यक्ति और समाज की गरिमा के लिए सम्मान विकसित करने हेतु, देशभक्ति और राष्ट्रीय एकता की भावना का प्रसार करने हेतु, सोच और जीने का लोकतांत्रिक तरीका विकसित करने हेतु, विभिन्न धार्मिक आस्थाओं के प्रति सहिष्णुता समझ विकसित करने हेतु, तथा सामाजिक राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भाईचारा सौहार्द की भावना के विकास करने हेतु। शिक्षात्मक मूल्य वे क्रियाएं हैं जो शिक्षा के दृष्टिकोण से अच्छी, उपयोगी एवं मूल्यवान हों। शिक्षात्मक मूल्यों से व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को कई लाभ हो सकते हैं। जैसे रोजी कमाने और भौतिक उन्नति की क्षमता व्यवसाय कुशलता का विकास, चरित्र का विकास स्वस्थ और संतुलित व्यक्तित्व विकास, अनुभव का पुनर्गठन एवं पुनर्निर्माण, अच्छी नागरिकता का विकास, पर्यावरण के साथ अनुकूलन और उसका परिष्कार, व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति, अवकाश काल का सदुपयोग, सामाजिक कुशलता का विकास, राष्ट्रीय एकता एवं विकास, नेताओं तथा प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के आदर्श।

मूल्यों के आधार पर ही मनुष्य अपने जीवन दृष्टिकोण बनाता है। मूल्य ही मानव जीवन को अर्थ उच्चता तथा श्रेष्ठता प्रदान करते हैं। शिक्षा उसे विभिन्न विकल्पों में से यह विकल्प चुनना सिखाती है जो मानव तथा समाज दोनों के लिए एक उचित है। वह विद्यार्थी को उचित –अनुचित उत्तम तथा निम्न अथवा अच्छा और बुरे का अंतर सिखाती है।

मूल्यों का निर्धारण

मूल्यों के निर्धारण के लिए शिक्षाविदों ने निम्नलिखित सिद्धांतों का उल्लेख किया है– जिनमें सुखवादी सिद्धांत, उपयोगवादी सिद्धांत, आर्थिक सिद्धांत, नियमन सिद्धांत, प्रयोगवादी सिद्धांत भावात्मक सिद्धांत, अंश एवं पूर्ण सिद्धांत, वस्तुपरक एवं व्यक्तिपरक सिद्धांत एवं परिपूर्णता का सिद्धांत ।

उपयुक्त सिद्धांतों से मूल्यों के अर्थ तथा उसकी प्रकृति के संबंध में निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं, जैसे मूल्य मानव जीवन के लक्ष्यों के साथ संबंधित होते हैं, मूल्य मानव जीवन के बच्चों के साथ संबंधित हैं। हमारा आचरण हमारे मूल्यों द्वारा प्रेरित होता है। मूल्य हमारे प्रयासों को निर्देशित करते हैं। जो ठीक न्यायोचित और वांछित है उसके संबंध में मूल्य भावनाओं, रुचियों, दृष्टिकोणों, विचारों तथा प्राथमिकताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। किसी चीज के पोषण की क्रिया मूल्य है। जो व्यक्ति न्याय को मूल्य देता है, वह उसकी तलाश में पर्याप्त शक्ति लगाएगा। वैयक्तिक तथा अवैयक्तिक तत्वों की अंतरक्रिया का सहयोगात्मक परिणाम मूल्य है। मूल्य का अपना महत्व है। एक अच्छा व्यक्ति ही अच्छी वस्तु को देखकर पहचान सकता है। मूल्यों का निर्माण एवं संरक्षण मनुष्य का महत्वपूर्ण प्रयोजन है। मूल्यों का जितना अधिक महत्व होगा और उनका जितना अधिक ध्यान रखा जाएगा, उतना बेहतर समाज बनेगा। मूल्यों में व्यक्ति निष्ठता वस्तुनिष्ठता मूर्त एवं अमूर्त लचीलापन आदि विशेषताएं होती हैं। परिपूर्णता आत्मानुभूति संतुष्टि विकास सत्यनिष्ठा आदि 'मूल्यों के लक्ष्य हैं। मूल्यों की श्रेष्ठता निर्धारित करने में तथा उन्हें आत्मसात करने में शिक्षा का बहुत बड़ा योगदान है। क्योंकि छात्र वह बीज है जो अपने अंदर समस्त मूल्यों के विकास को समेटे हुए है, और शिक्षा वह परिवेश है जो इस बीज को खाद –पानी देकर उसे विकसित करने का अवसर प्रदान करती है। इन दोनों के योगदान से ही मूल्यों का उद्‌भव हो सकता है। शिक्षा समाज की वह सीढ़ी है जिस पर पांव रखकर व्यक्ति अपने संस्कारों को संवारता है और शिक्षा को दिशा प्रदान करता है।

मूल्य के नियम या आदर्श

मनुष्य अपने लिए वैसा ही आचरण करता है जिसको वह शुभ समझता है। नैतिक बाध्यता मनुष्य के स्वभाव से ही निकलती है। शुभ कर्म को किया जाए और अशुभ को त्याग दिया जाए, यह स्वयंसिद्ध है। इनके लिए प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। वैसे लोग जो बुरा कर्म करते हैं वह भी उसे भला ही समझ कर करते हैं। इसलिए हमें यह जानना चाहिए कि वास्तव में कौन

सा आचरण शुभ है। यह मूल्य के सिद्धांत से स्पष्ट हो जाता है। शुभ और मूल्य एक है। वह आचरण, जिससे मूल्यवान पदार्थ की प्राप्ति होती है, शुभ है। पर अनेक पदार्थो में एक का मूल्य कम हो सकता है और दूसरे का अधिक। इसलिए पदार्थों का मूल्य कैसे आँका जाए? उसके लिए इसमें तीन सिद्धांत बतलाए गए हैं। उन्हीं नियमों के लागू करने से महत्वपूर्ण और गौण मूल्यों का पता चल जाता है।

गांधी जी कहते हैं: ''मैं पूर्ण सत्य को पहिचानता नहीं हूँ, इसलिए उसका आग्रह करता हूँ। इसी से पुरुषार्थ की गुंजाइश है। जीवन में प्रतिक्षण ईश्वर का बोध होना ही ईश्वर का जीवंत प्रमाण है। हमारे मूल्यों की मूल्यता निश्चित करने वाली सत्ता सर्वोच्च मूल्य है, जिसे धर्मशास्त्र ईश्वर की संज्ञा से अभिहित करते हैं। उसे राम कहो या रहीम अथवा केशव कहो या करीम। नास्तिक भी सर्वोच्च मूल्य से बँधा, है भले वह उसे ईश्वर न कहे।

शिक्षात्मक मूल्यों का योगदान

शिक्षात्मक मूल्य वे क्रियाएं हैं जो शिक्षा के दृष्टिकोण से अच्छी, उपयोगी एवं मूल्यवान हों। शिक्षात्मक मूल्यों से व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को निम्नलिखित लाभ हो सकते हैं— रोजी कमाने और भौतिक उन्नति की क्षमता, व्यवसाय कुशलता का विकास, चरित्र का विकास, स्वस्थ एवं संतुलित व्यक्तित्व का विकास, अनुभव का पुनर्गठन एवम पुनः निर्माण, अच्छी नागरिकता का विकास, पर्यावरण के अनुकूल और उसका परिष्कार, व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति, अवकाश का सदुपयोग, सामाजिक कुशलता का विकास, राष्ट्रीय एकता एवं विकास, नेताओं तथा प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के आदर्श। अतः शिक्षात्मक मूल्य मानव जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इन्हीं के द्वारा व्यक्ति अपना व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन सफलता पूर्वक गुजारता है।

मूल्यों का वर्गीकरण

मूल्यों का वर्गीकरण करने से पहले उनकी सूची बनाना उचित होगा। कुछ मूल्य इस प्रकार हैं— सत्य, सुंदरता, अच्छाई, दूसरों का ध्यान रखना, सहयोग, करुणा, पर— चिंता, स्वच्छता, साहस, नागरिकता, शिष्टता, लगन, अनुशासन, कर्तव्य, व्यक्ति की भव्यता, श्रम की भव्यता, सहनशीलता, समानता, सहकर्मी भावना, मित्रता, वफादारी, स्वतंत्रता, कृतज्ञता, शराफत, अच्छा व्यवहार, ईमानदारी, मानवता, स्वच्छ जीवन, सहायता, उपक्रम, सत्य, निष्ठा, न्याय, दया, नेतृत्व, राष्ट्रीय चेतनता, अहिंसा, राष्ट्रीय एकता, आज्ञा पालन, देशभक्ति, समय —पाबंदी, शांति, पवित्रता, अवकाश काल का उपयोग, ज्ञान— पिपासा, नियमितता, साधन —संपन्नता, दूसरों का आदर , निष्कपटता, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, स्वःकर्तव्य, आत्म सहायता, आत्मविश्वास, आत्म नियंत्रण, आत्मसम्मान, समाज सेवा, उत्तरदायित्व की भावना, अच्छे बुरे का विवेक, सादा जीवन, जिज्ञासा, मानव जाति की परिपक्वता, सहानुभूति, संगठित कार्य, सहिष्णुता और विश्व प्रेम।

अफलातून ने अंतिम सत्यों के आधार पर मूल्यों का वर्गीकरण किया है। वह इस प्रकार है– सत्य, सुंदरता, अच्छाई। भारतीय विचारकों ने भी जीवन की बुनियादी मूल्यों का उल्लेख इसी प्रकार किया है– सत्यम शिवम एवं सुंदरम।

क. साधक मूल्य और सात्विक मूल्य

कुछ पदार्थ ऐसे होते हैं जिनका कोई मूल्य नहीं होता है। उनका मूल इसलिए होता है कि उनसे किसी मूल्यवान लक्ष्य की प्राप्ति होती है। संपत्ति मूल्यवान स्वताः नहीं है। इसका मूल्य इसलिए है कि इससे सुख की प्राप्ति होती है। कपड़ा स्वताः मूल्यवान नहीं है। इसका मूल्य इसलिए है कि इससे जाड़ा, धूप आदि से हम बचते हैं। यह साधन रूप में इष्ट होते हैं। इनकी इच्छा हम स्वयं इसके लिए नहीं करते अपितु किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए करते हैं। वे स्वतः मूल्यवान है। सुखवादियों के अनुसार सुख का तात्विक मूल्य है। कांट ने शुभ संकल्प का तात्विक मूल्य बतलाया है। सत्य, सौंदर्य, विवेक आदि का भी तात्विक मूल्य बतलाया जाता है।

ख. भावनात्मक और अभावात्मक मूल्य

हमारे जीवन का चरम आदर्श एक अभावात्मक आदर्श नहीं हो सकता। हमें क्या नहीं करना चाहिए या करना चाहिए के विचार से निश्चित होता है। अतः क्या करना चाहिए (आदर्श) एक भावात्मक प्रत्यय है। इस प्रकार वह जो आदर्श की प्राप्ति में सहायक हो, उसका भावात्मक मूल्य है। जो आदर्श– प्राप्ति की बाधक वस्तु है, उसका अभावात्मक मूल्य है । उच्चतम शुभ (highest good) का उच्चतम भावात्मक मूल्य होता है।

ग. स्थाई और अस्थाई मूल्य

कुछ पदार्थों से हमें क्षणिक सुख मिलता है। उनका अस्थाई मूल्य है। इंद्रिय सुखों का अस्थाई मूल्य है। पर बुद्धि के द्वारा प्राप्त आनंद अपेक्षाकृत स्थाई होता है। उसका स्थाई मूल्य है।

घ. उत्पादन और अनुत्पादक मूल्य

बहुत से पदार्थ हैं जिनका प्रयोग में ही शेष हो जाता है। जितना उनका प्रयोग हो उतना ही वे घटते जाते हैं, जैसे संपत्ति आदि भौतिक पदार्थ। इनका अनुत्पादक मूल्य है। पर कुछ ऐसी वस्तुएं हैं, जिनका वितरण होने से वृद्धि होती है, जैसे –ज्ञानय इनका उत्पादक मूल्य है।

मानवीय मूल्यों की सूची और उनका क्रम

शारीरिक मूल्य– जिसमें शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, अन्न भोजन आदि।

आर्थिक मूल्य– धन, संपत्ति आदि।

मनोरंजन का मूल्य– खेल आदि, मन लगाने की सभी वस्तुएं।

साहचर्य का मूल्य– मित्रता आदि।

चारित्रिक मूल्य– सच्चाई, ईमानदारी आदि।

सौंदर्य संबंधी मूल्य– कला, सुंदरता, चित्रकारी आदि।

बौद्धिक मूल्य– ज्ञान आदि।

धार्मिक मूल्य– ईश्वर, आत्मा आदि।

शिक्षात्मक मूल्यों से संबंधित विचार

मूल आंतरिक एवं व्यक्तिपरक–उच्च शिक्षा शास्त्रियों का विचार है कि 'मूल्य' व्यक्ति के अपने विचारों एवं अनुभवों पर निर्भर करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति मनुष्य की कल्पना की उपज हैं।

मूल्य बाहरी एवं वस्तुपरक– कुछ शिक्षा शास्त्रीयों का विचार है कि मूल्य वस्तुओं तथा क्रियाओं में निहित होते हैं। यह सामाजिक वातावरण हैं, जो वस्तु के मूल्य को प्रभावित करता है। दूसरे शब्दों में सामाजिक वातावरण ही किसी वस्तु का मूल्य प्रदान करता है। अतः मूल्य बाहरी एवं वस्तुपरक होते हैं। पाठ्यक्रम का निर्माण, शिक्षण विधियों तथा सहायक साधनों आदि का चयन उस सामाजिक वातावरण से संबंधित होता है जिसमें अध्यापक तथा बच्चे रहते हैं।

समाज जीवन को सुरक्षित सुविधाजनक सभ्य बनाने के लिए सामाजिक मूल्यों का निर्माण करता है। क्योंकि मनुष्य समूहों में रहता है इसलिए उसे किसी आचार संहिता का पालन करना पड़ता है ताकि सभी शांति पूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें। उदाहरण स्वरूप 'चोरी मत करो' एक महत्वपूर्ण सामाजिक मूल्य है। 'सदा सत्य बोलो' एक और सामाजिक मूल्य है। कुछ सामाजिक मूल्यों का उल्लेख इस प्रकार है–सामाजिक अनुरूपता, अनुशासन, सामाजिक संवेदना, परोपकार, सहनशीलता, सामाजिक समायोजन, सामाजिक वफादारी, सामाजिक न्याय, एवं पंचशील आदि।

नैतिक मूल्य

श्री राधाकृष्णन के अनुसार, 'भारत सहित सारा विश्व इसलिए कठिनाइयों में गुजर रहा है क्योंकि हमारी शिक्षा केवल बौद्धिक व्यायाम बनकर रह गई है और उसमें नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का कोई स्थान नहीं है।' राजनैतिक एवं सामाजिक मूल्यों का पतन हो रहा है, धर्म की पकड़ कमजोर हो रही है, स्वार्थ के लिए शक्ति एवं ज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है, राष्ट्रों का एक दूसरे पर विश्वास नहीं है, ऐसी स्थिति में शिक्षा नैतिक मूल्यों के लिए दी जानी चाहिए।

नैतिकता उन सिद्धांतों की संहिता है जो उत्तम जीवन जीने के लिए आवश्यक है। व्यक्ति के जीवन के लिए नैतिक मूल्यों का महत्व अत्यधिक है। इन्हीं के आधार पर व्यक्ति के चरित्र का निर्माण होता है। नैतिकता ही ऐसा नाम है जो मानवता के घावों को भरता है। नैतिक मूल्यों की

शिक्षा ही मनुष्य को इसकी प्रेरणा देगी कि वह आणविक शक्ति का प्रयोग के विनाश के लिए नहीं बल्कि उसके हित के लिए करें। नैतिक मूल्य इस प्रकार है ईमानदारी, सत्यता, नैतिक स्थिरता, एवं अच्छा चरित्र आदि।

सांस्कृतिक मूल्य

प्रत्येक संस्कृति के अपने कुछ मूल्य होते हैं। मैकाइवर एंड पेज के अनुसार 'संस्कृति शैलियों, मूल्यों,भावात्मक संबंधों तथा बौद्धिक साहसिक कार्यो का समूह है।

अति उत्तम विचार एवं ज्ञान संस्कृति है। यह आंतरिक सौंदर्य है बौद्धिक परिष्कार है और व्यक्तित्व का सौंदर्य आत्मक एवं नैतिक पक्ष हैं। भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण सांस्कृतिक मूल्य इस प्रकार हैं– ईश्वर में विश्वास, अध्यात्मवाद, अहिंसा, सहनशीलता, सादगी, समाज सेवा, शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा निष्काम कर्म एवं शिष्टता।

धर्मनिरपेक्ष मूल्य इस प्रकार हैं– परस्पर सद्भावना, परस्पर सहयोग, सहनशीलता, शाश्वत शक्तियों की प्रशंसा, चरित्र और मानवतावाद।

मानवीय मूल्यों पर आधुनिकता का प्रभाव

मानवीय मूल्यों का पतन आधुनिक युग में सामाजिक नैतिक एवं धार्मिक मूल्यों का खंडन हो रहा है ज्ञान और शक्ति का स्वार्थ के लिए दुरुपयोग हो रहा है, रिश्वत, भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता एवं हिंसा का बोलबाला है। सत्यम शिवम सुंदरम, जैसे शाश्वत मूल्यों का लोप हो रहा है।

धर्म पर प्रभाव

कभी समय था जब लोगों का धर्म में दृढ़ विश्वास था और वह धर्म के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया करते थे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ मूल्य समझे जाते थे, परंतु आज लोग अहम केंद्रित हो रहे हैं, और अपने हित की सोचते हैं, परहित कि उन्हें कोई चिंता नहीं है।

धन एवं शक्ति की लालसा– आधुनिक युग में लोगों की धनलालसा बढ़ रही है। धन लालच में उनके चरित्र का पतन हो रहा है। चोरों, डाकू, स्मगलर, आदि व्यक्तियों की संख्या बढ़ रही है। महात्मा गांधी के कथन अनुसार धन और शक्ति की लालसा ने मनुष्य को भ्रष्ट बना दिया है।

संस्कृति पर प्रभाव

आधुनिक संस्कृति प्राचीन संस्कृति से भिन्न है, आधुनिक संस्कृति में कई परिवर्तन हुए हैं, रीति–रिवाज, परंपराएं, कानून, सामाजिक नियम, कला साहित्य, धर्म तथा मूल्य पद्धति में बहुत परिवर्तन हुए हैं। मानव के व्यवहार एवं चरित्र में भी कई परिवर्तन आए हैं। प्रोफेसर जोड़ के कथन अनुसार, आधुनिक संस्कृति प्राचीन संस्कृति से बिल्कुल भिन्न है, यह भिन्नता मानवीय मूल्यों में परिवर्तन के कारण आई है।

मानव जाति का स्वर्णिम युग समाप्त होता जा रहा है। हम निरंतर विनाश की ओर अग्रसर हो रहे हैं। सामाजिक जीवन अस्त–व्यस्त हो रहा है। पारिवारिक जीवन दुःखद हो रहा है। गरीबों असहायाओं का शोषण बढ़ रहा है। व्यक्ति स्वार्थी, अवसरवादी, भोगी, चाटुकार एवं कर्तव्य विमुख हो रहा है। यह सभी चीजें मूल्यों की ओर संकेत करती हैं। वर्तमान समय में मूल्यों के इतने अधिक ह्रास के कारण जीने का अर्थ ही बदल गया है। वर्तमान युग में हमारे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय, और अंतरराष्ट्रीय जीवन में तनाव के कारण प्रतिदिन घुटन बढ़ती जा रही है। परिवार में छोटे–बड़े का सम्मान नहीं रह गया है। पति–पत्नी के संबंध तनावपूर्ण है। भाई–भाई में प्रेम नहीं है। इस प्रकार सामाजिक जीवन में सहयोग विलुप्त होता जा रहा है। अब सामाजिक नियमों एवं व्यवस्थाओं का उल्लंघन करने में कोई संकोच नहीं रह गया है। प्रदर्शन, घेराव, तोड़–फोड़, हिंसात्मक विद्रोह एवं आतंक हमारे जीवन में तनाव पैदा करते हैं। भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, रिश्वतखोरी, तस्करी, मिलावट, काला धन आदि से संबन्धित गतिविधियां हमें विचलित करती रहती हैं।

मूल्यों का पतन

आज हमारा समाज जिन बुराइयों का शिकार है, उसका मुख्य कारण मूल्यों का विनाश है। सार्वजनिक जीवन में मूल्य पतन के कगार पर खड़े हैं। लोग चिरकाल से चले आ रहे हैं मूल्यों का त्याग कर रहे हैं। सभी स्तरों पर सामाजिक, नैतिकता, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। इसके परिणाम स्वरूप स्वार्थ भावना, असीम लोभ, रिश्वत, भ्रष्टाचार, गुंडागर्दी, संकीर्णता, हिंसा, विनाश, मानवीय अधिकारों का दुरुपयोग, अन्याय, हताशा, चरित्र हीनता जैसी बुराइयों का प्रसार हो रहा है। हम राजनीतिक तनाव तथा आर्थिक दबाव एवं हताशा की स्थिति में रह रहे हैं। शोषण, भ्रष्टाचार, विनाश, स्वार्थ एवं हिंसा का बोलबाला है। अराजकता की स्थिति बनी हुई है। राजनीतिक मूल्यों के पतन के कारणों में– नेतृत्व का अभाव, राजनीतिक शोषण, आचार संहिता का आभाव, पुलिस के अत्याचार, स्कैंडल एवं अनुशासनहीनता मुख्य हैं।

सामाजिक मूल्यों के पतन के मुख्य कारणों में जाति प्रथा, सामाजिक विघटन, वैवाहिक विघटन, कुकर्म, भौतिकवादी दृष्टिकोण, स्वार्थ, सामाजिक अनुशासनहीनता, न्याय का अभाव, सामाजिक संवेदनशीलता का अभाव, एवं सामाजिक शोषण मुख्य रूप से उत्तरदाई हैं।

आर्थिक मूल्यों का भी निरंतर पतन हो रहा है। इसके मुख्य कारणों में विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी का विकास, भौतिकवाद का उदय, औद्योगीकरण एवं शहरीकरण की वृद्धि एवं मनोवैज्ञानिक अभियान का अभाव आदि मुख्य हैं।

मूल्य शिक्षा के स्रोत

धर्म–दर्शन, साहित्य सामाजिक रीति–रिवाज, विज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि मूल्यों के स्रोत हैं।

मानवीय मूल्यों की शिक्षा–साधन और विधियां

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986 में भी इस बात पर चिंता व्यक्त की गई है कि विद्यालय बच्चों में उचित मूल्यों का निर्माण करने में सक्षम हैं, वे यह कार्य कर नहीं रहे हैं और इस बात पर बल दिया गया है कि विद्यालयों को अपनी इस उत्तरदायित्व को पूरा करना चाहिए। इस हेतु मूल्य चर्चा के संबंध में तीन बातें कही गई हैं।

1. मूल्यों (सामाजिक व नैतिक) के विकास की दृष्टि से पाठ्यक्रम में संशोधन किया जाए जिससे इन मूल्यों का विकास करने में सशक्त साधन बन सकें।
2. शिक्षा द्वारा सार्वभौमिक व शाश्वत मूल्यों का विकास किया जाए, जिससे वे धार्मिक कट्टरता, अहिंसा तथा अंधविश्वासों का दमन करें।
3. मूल्य शिक्षा हेतु ऐसा पाठ्यक्रम बनाया जाए जो मूल्यों का सकारात्मक विकास करें इसमें राष्ट्रीय विरासत व राष्ट्रीय लक्ष्यों पर बल दिया जाए।

मूल्यों के निर्माण में निम्नलिखित साधन उपयोगी हो सकते हैं

जैसे प्रातः कालीन सभा, अनिवार्य विषय, पाठ्यक्रम का पुनर्निर्माण, पाठ्य पुस्तकों का पुनः निर्माण, विस्तार भाषण, भाषण प्रतियोगिताएं, व्यंग एवं नाटक, पुस्तक प्रदर्शनी, कला प्रदर्शनी, कला प्रतियोगिताएं, जन्म दिवस मनाना, अंतर्राष्ट्रीय दिवस मनाना, जन माध्यम के प्रयोग, मूल्य उन्मुख पत्रिका, मूल्य उन्मुख पुरस्कार, मूल्य उन्मुख प्रोजेक्ट, गर्ल गाइडिंग, स्काउट एवं राष्ट्रीय सेवा योजना तथा अध्यापक की भूमिका।

संदर्भ

1. *लाल, रमण बिहारी, (2004 शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत मेरठ रस्तोगी पब्लिकेशन पृष्ठ संख्या 524 –543*
2. *डॉ. पांडे. राम शकल डॉ. मिश्रा करुणा शंकर(2005 मूल्य शिक्षण विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।*
3. *डॉ. सक्सेना स्वरूप (2005 भारतीय दर्शनों में क्या है पुस्तक महल नई दिल्ली।*
4. *रुहेला एस पी (2009 मूल्य शिक्षा क्या, क्यों, कैसे अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।*
5. *डॉ. सिन्हा मंजरी डॉ. सिंधु आई एस(2912 विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षा तथा शिक्षक की भूमिका अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।*
6. *डॉ. सी. एस. शुक्ला (2013 शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्री आधार अनुभव पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद।*
7. *डॉ. पांडे दुर्गादत्त (2015 गांधी दर्शन के मूल बिंदु शेखर प्रकाशन इलाहाबाद।*
8. *वर्मा अशोक कुमार (2017 नीतिशास्त्र की रूपरेखा मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन पटना दिल्ली।*
9. *भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका वर्ष 36 अंक 1 जनवरी– जून 2017 , सरस्वती कुंज निराला नगर लखनऊ उत्तर प्रदेश।*

वर्तमान अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की चुनौती

डॉ. राम किशोर सागर[1], सुषमा रानी[2]
[1]असि. प्रो. (अर्थशास्त्र विभाग)
राजकिय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर (उ. प्र.)
[2]प्रधानाध्यापक
पूर्व मा. वि. पसियापुरा जनुवी, रामपुर(उ. प्र.)।

किसी भी अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी जैसी बीमारी की पहचान करना आवश्यक है। जब–जब सरकारों ने इस बीमारी को छुपाकर एक अच्छी तस्वीर दिखाने की कोशिश की है तब तब अर्थव्यवस्था खोखली होने लगती है। इसी वर्ष अप्रैल से जून की तिमाही में हमारे देश का सकल घरेलू उत्पाद जीडीपी पहले की तुलना में 5.8 प्रतिशत से घटकर 5 प्रतिशत पर आ गई। कृषि की विकास दर ऐतिहासिक गिरावट के साथ 2 प्रतिशत पर पहुंच चुकी है। जबकि इससे पूर्व यह विकास दर 5 प्रतिशत से अधिक थी।

भारत का मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर कुल 0.6 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है जो कि वर्ष 2018 की इसी तिमाही में 12.1 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा था। ऑटोमोबाइल सेक्टर में बड़े स्तर पर लोग नौकरियों से हाथ धो रहे हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में नकारात्मक परिणाम दिखाई दे रहे हैं। यह मंदी आय सृजन में गिरावट, बचत में गिरावट और खपत में गिरावट के कारण आई है। इस प्रकार की मंदी से उबरने के लिए सरकार काफी उपाय कर रही है।

पूर्व प्रधानमंत्री डॉक्टर मनमोहन सिंह ने अर्थव्यवस्था में जारी गिरावट पर एक बयान में कहा कि यह मंदी सरकार द्वारा बनाई गई मंदी है और बिना इसे स्वीकार किये ठीक नहीं किया जा सकता। उन्होंने नोटबंदी और जी0एस0टी0 को भी इसके लिए जिम्मेदार माना है।

किसी भी आर्थिक मंदी की चुनौती के लिए निजी क्षेत्र के स्थान पर सरकार को ही आगे आना होता है। सरकार को न्याय पूर्ण राजनीतिक फैसले लेकर खर्च में वृद्धि करनी होगी। यह भी ध्यान रखना होगा कि राजकोषीय घाटा अधिक न हो जाए। हमारी सरकार को रोजगार सृजन पर अधिक ध्यान देना होगा। क्योंकि सरकार जब रोजगार सृजन पर ध्यान नहीं देती है, तब भविष्य के लिए असुरक्षा का वातावरण पैदा हो जाता है। आज वर्तमान अर्थव्यवस्था इसी दौर से गुजर रही है। हमारी वर्तमान सरकार इसे ठीक करने के अनेक उपाय कर रही है। जिससे हम इस मंदी से शीघ्र ही निकल पाएंगे।

दुनिया भर की अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की आहट सुनाई देने लगी है भारत भी इस आर्थिक मंदी से अछूत नहीं है उद्योगों का पहिया थम सा रहा है। कंपनियों ने लागत घटाने के

लिए कर्मचारियों और अधिकारियों की छुट्टी का सहारा लेना शुरू कर दिया है। आर्थिक वृद्धि तिमाही दर सुस्त पड़ती नजर आ रही है। देश का ऑटो सेक्टर रिजर्व गियर में चला गया है, ऑटो इंडस्ट्री में लगातार 9 महीने से बिक्री में गिरावट दर्ज हो रही है। जुलाई 2019 में कार और बाइक की बिक्री में 31 प्रतिशत की गिरावट आई है इसके चलते ऑटो सेक्टर से जुड़े 3.5 लाख से अधिक कर्मचारियों की नौकरी चली गई, इतना ही नहीं अभी लगभग दस लाख लोगों की नौकरियों पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। कृषि के बाद सबसे अधिक रोजगार देने वाले कपड़ा उद्योग की भी दशा खराब है, यह सब पैरामीटर इस बात का संकेत दे रहे हैं कि हमारा देश भारत भी आर्थिक मंदी की जद में जा रहा है।

आजादी के बाद से भारत को प्रमुख रूप से दो बार आर्थिक मंदी से गुजरना पड़ा है। यह साल थे 1991 और 2008। वर्ष 1991 में आई आर्थिक मंदी के पीछे देश के आंतरिक कारण थे, लेकिन वर्ष 2008 में वैश्विक मंदी के चलते आर्थिक संकट में फंसने की सबसे बड़ी वजह भुगतान संकट था। उस समय आयात में भारी कमी आई थी जिससे देश की अर्थव्यवस्था दोहरे आर्थिक संकट में फंस गई थी। वर्ष 1991 के आर्थिक संकट के मुख्य कारण थे रुपए की कीमत तेजी से घटना। देश का बढ़ता चालू खाते का घाटा, निवेशकों का भारत के प्रति भरोसा घटना और रुपए की विनिमय दर में कमी। वर्ष 2008 में आई आर्थिक मंदी से भारत की अर्थव्यवस्था को इतना नुकसान नहीं झेलना पड़ा था। वर्ष 2008 की आर्थिक मंदी के समय भारत का व्यापार वैश्विक जगत के साथ काफी घट गया था। आर्थिक वृद्धि दर घटकर 6 प्रतिशत से नीचे चली गई थी।

वर्तमान अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी होते हुए भी अर्थव्यवस्था के पुरानी रफ्तार पकड़ने की उम्मीद अभी भी कायम है। 7 सितंबर 2019 को हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी की घोषणाओं से उम्मीद बंधी है, कि भारतीय अर्थव्यवस्था फिर से मजबूती की राह पकड़ेगी। एनडीए सरकार अपने पहले कार्यकाल में अर्थव्यवस्था के मोर्चे पर मजबूत दिखाई दी थी, जबकि दूसरे कार्यकाल के पहले 100 दिनों में ही देश की अर्थव्यवस्था में मंदी की आहट महसूस की जाने लगी। भारत की विकास दर के लुढ़क कर 5 प्रतिशत पर आ जाने से हमारी सरकार काफी चिंतित दिखाई दे रही है। भारत सहित दुनिया के कई देशों में आर्थिक गतिविधियों में सुस्ती के संकेत दिखाई दे रहे हैं। वर्तमान अर्थव्यवस्था के आर्थिक मंदी की ओर बढ़ने पर आर्थिक गतिविधियों में चौतरफा गिरावट आ रही है, ऐसे कई दूसरे पैमाने भी हैं जो वर्तमान अर्थव्यवस्था के मंदी की ओर बढ़ने के स्पष्ट संकेत दिखाई देने लगे हैं।

1. किसी भी अर्थव्यवस्था की विकास दर या जीडीपी तिमाही दर तिमाही घट रही है, इसे आर्थिक मंदी का सबसे बड़ा संकेत माना जाएगा। किसी देश की अर्थव्यवस्था या किसी खास क्षेत्र के उत्पादन में वृद्धि की दर को विकास दर कहा जाएगा। सकल घरेलू उत्पाद एवं निर्धारित अवधि में किसी देश में बने सभी उत्पादों और सेवाओं के मूल्य का जोड़ होता है, भारत जैसे देश की विकास दर के लुढ़क कर 5 प्रतिशत पर आना इसका जीता जागता उदाहरण है।

2. आर्थिक मंदी का एक दूसरा संकेत है लोगों के द्वारा वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग कम से कम करना। ऐसी दशा में बिस्कुट, तेल, साबुन, कपड़ा और धातु जैसी सामान्य वस्तुओं के साथ–साथ घरों और वाहनों की बिक्री भी लगातार घट जाती है। आर्थिक मंदी काल में लोग आवश्यक वस्तुओं पर खर्च को भी काबू में करने का प्रयास करते हैं। वाहनों की बिक्री घटने को मंदी का शुरुआती संकेत माना जाता है। जब लोगों के पास अतिरिक्त पैसा होता है तभी वह गाड़ी खरीदना पसंद करते हैं। गाड़ियों की बिक्री कम हो रही है तो इसका मतलब है कि लोगों के पास कम पैसा बच रहा है। वाहन निर्माण कंपनियों के संगठन सियाम ने 8 सितंबर 2019 को बताया कि अगस्त 2019 में ट्रक, मिनी ट्रक और बसों जैसी वाणिज्यिक वाहनों की बिक्री में 39 प्रतिशत की गिरावट देखने को मिली है।

3. अर्थव्यवस्था में उद्योग का पहिया रुकने से नए उत्पाद नहीं बन पाएंगे। इसमें निजी क्षेत्र की काफी बड़ी भूमिका होती है। मंदी काल में उद्योगों का उत्पादन कम हो जाता है। मिलो और फैक्ट्रियों पर ताले लगने लगते हैं, क्योंकि बाजार में उनकी बिक्री घटने लगती है। बाजार में औद्योगिक उत्पादन कम होने से अनेक सेवाएं प्रभावित होती हैं, इसके अंतर्गत माल ढुलाई, बीमा, गोदाम और वितरण जैसी अनेक सेवाएं शामिल हैं। कुछ कारोबार जैसे टेलीकॉम, टूरिज्म केवल सेवा आधारित होते हैं, परंतु बिक्री घटने पर यह कारोबार भी प्रभावित होता है।

4. अर्थव्यवस्था में मंदी आने पर रोजगार के अवसर लगातार घटने लगते हैं। उत्पादन न होने के कारण उद्योग बंद होने लगते हैं। डुलाई नहीं होने से बिक्री रुक जाती है, इसके चलते कंपनियां कर्मचारियों की छटनी करने लगती हैं। अर्थव्यवस्था आर्थिक मंदी की सबसे बड़ी चुनौती है बेरोजगारी की समस्या। निर्माण क्षेत्र में भी वृद्धि दर 12 प्रतिशत से घटकर 0.6 प्रतिशत रह गई है। इस क्षेत्र में लाखों लोगों को रोजगार से हाथ धोना पड़ा है। ऑटोमोबाइल, कपड़ा सहित कई क्षेत्रों की दयनीय स्थिति नई चिंता पैदा कर रही है।

5. यदि आय की रकम में से व्यय घटा दें तो लोगों के पास जो पैसा बचेगा वह बचत के लिए इस्तेमाल होगा। इसी पैसे में से निवेश किया जाता है। बैंक में जमा पैसा भी निवेश के दायरे में आता है, परंतु आर्थिक मंदी के दौर में निवेश कम हो जाता है। क्योंकि लोगों की आय कम हो जाती है, परिणामस्वरूप उनकी क्रय शक्ति कम हो जाती है। वह बचत करने से वंचित रह जाते हैं, जिसके कारण अर्थव्यवस्था में पैसे का प्रभाह रुक जाता है।

6. जब लोगों की बचत कम होती है तो वे बैंक या निवेश के अन्य साधनों में भी कम पैसा लगाते हैं। ऐसी दशा में बैंकों या वित्तीय संस्थाओं के पास कर्ज देने के लिए पैसा घट जाता है। अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की चुनौती से निपटने के लिए कर्ज की मांग और पूर्ति का बना रहना आवश्यक है। इसका दूसरा पहलू यह है कि जब कम बिक्री के चलते उद्योग उत्पादन घटा रहे हैं, तो वह कर्ज नहीं लेंगे। कर्ज की मांग और आपूर्ति दोनों की गिरावट को आर्थिक मंदी का संकेत माना जाता है।

7. शेयर बाजार में उन्हीं कंपनियों के शेयर बढ़ते हैं जिनकी कमाई और मुनाफा बढ़ रहा होता है। वर्तमान अर्थव्यवस्था में कंपनियों की कमाई का अनुमान लगातार कम हो रहा है और वे

उम्मीदों पर खरा नहीं उतर पा रही हैं। ऐसी दशा को भी आर्थिक मंदी के रूप में देखा जाता है। कंपनियों का मार्जिन मुनाफा और प्रदर्शन लगातार घट रहा है, शेयर बाजार भी निवेशक के लिए निवेश करने का एक माध्यम हैं। लोगों के पास पैसा कम होने के कारण वे बाजार में निवेश कम कर रहे हैं जिसके परिणाम स्वरूप शेयरों के दाम लगातार घट रहे हैं।

8. किसी अर्थव्यवस्था में जब तरलता घटी है तो इसे भी आर्थिक मंदी की आहट माना जाता है। ऐसे समय में सामान्य लोग पैसा खर्च करने व निवेश करने से परहेज करते हैं तो वह उस पैसे का उपभोग बुरे वक्त में कर सकें। इसीलिए वे पैसा अपने पास बचा कर रखते हैं। वर्तमान अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी के कारण यही दशा देखने को मिल रही है।

लोगों के मन में आर्थिक मंदी का भय घर कर रहा है। वर्तमान अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की चुनौती से निपटने के लिए हमारे प्रधानमंत्री जी ने स्वतंत्रता दिवस के शुभ अवसर पर दिल्ली के लाल किले की प्राचीर से लोगों को पूरा आश्वासन दिया।

भारत की जनता के बीच आर्थिक मंदी की आशंका कितनी गहरी है इसका अनुमान हम इस बात से लगा सकते हैं कि बीते 5 वर्षों के दौरान गूगल के ट्रेंड में स्लोडाउन सर्च करने वाले लोगों की संख्या 1—2 प्रतिशत से बढ़कर 100 प्रतिशत तक पहुंच चुकी है।

वर्तमान अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की चुनौती से निपटने के लिए हमारी जनप्रिय केंद्रीय सरकार अनेक प्रयास और उपाय कर रही है सरकार आर्थिक परिसंपत्तियों की गिरती कीमतों पर बराबर नजर रख रही है। उत्पादन और मांग में वृद्धि के प्रयास किए जा रहे हैं। वित्तीय संस्थाओं पर लगाम कसकर बाजार से नगदी सोककर या ब्याज दर बढ़ाकर केंद्रीय बैंक परिसंपत्तियों की कीमतों पर दृष्टि लगाए हुए हैं। पूरी दुनिया जानती है कि भारत में चुनौतियां नई हो या पुरानी देश हर चुनौती को चुनौती देता रहा है और देता रहेगा।

संदर्भ

1. *मुकुल, अरविंद कुमार, 'योजना' वैश्विक मंदी से कैसे बचे भारत, नवंबर 2008, पृष्ठ संख्या 52*
2. *कसौटिया, विजय लक्ष्मी, 'योजना' आर्थिक मंदी और खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, नवंबर 2009 पृष्ठ संख्या 25*
3. *सागर, आर0के0, आकाशवाणी रामपुर, 'वर्तमान' अर्थव्यवस्था में आर्थिक मंदी की 'चुनौती', प्रसारण तिथि 24 सितंबर 2019।*
4. *दैनिक समाचार पत्र, अमर उजाला, मुरादाबाद 9 सितंबर 2019 पर संख्या 12*
5. *दैनिक समाचार पत्र, अमर उजाला, मुरादाबाद 10 सितंबर 2019 तरह संख्या 11*
6. *दूरदर्शन समाचार आदि।*
7. *इंटरनेट गूगल, याहू, बिंग आदि।*
8. *सोशल मीडिया।*
9. *अन्ना समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं।*

डिजिटल इंडिया एवं मानवीय मूल्य

रंजीत सिंह
शोधार्थी, गणित
हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद।

डिजिटल इंडिया क्या है?

डिजिटल इंडिया भारत सरकार द्वारा आरम्भ किया हुआ एक महत्वाकांक्षि कार्यक्रम है जिसका मूल उद्देश्य देश के हर विभाग व रिकॉर्ड को एक ही कड़ी से जुड़ना है और वह कड़ी है देश की इलेक्ट्रॉनिक डाटा सिस्टम की कड़ी, जो की काम की गति को बढ़ाने में मददगार है।

डिजिटल इंडिया वह कार्यक्रम है जो की देश को एक डिजिटली शसक्त सोसाईटी में तब्दील कर सके और भारत को एक नया रूप दे सके, डिजिटल इंडिया कार्यक्रम से देश की हर जानकारी और रिकॅार्ड को स्वच्छता से इलेक्ट्रॅानिक मोड में रखा जा रहा है जो की आगे काम में सरलता के साथ साथ तेज रफ्तार भी लाएगा।

डिजिटल इंडिया की शुरुआत

किसने और कब शुरू किया डिजिटल भारत अभियान?

डिजिटल इंडिया की शुरुआत दिल्ली के इंदिरा गाँधी इंडोर स्टेडियम में 1 जुलाई 2015 को देश के प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के द्वारा कई बड़े–बड़े हस्तियों की उपस्तिथि में हुआ था। इस पहल के शुभारम्भ समारोह में विभिन्न उद्योगपतियों जैसे की टाटा ग्रुप के तब के अध्यक्ष साइरस मिस्त्री, आर.आई.एल अध्यक्ष मुकेश अम्बानी, विप्रो के अजीम प्रेमजी मौजूद थे। इस प्रोग्राम की शुरुआत खबरों में काफी छाई, लोगों के मन में नई नौकरी और काम करने के तरीके में बदलाव के काफी आस जागने लगे।

डिजिटल इंडिया प्रोग्राम के मुख्य उद्देश्य

डिजिटल इंडिया प्रोजेक्ट मोदी सरकार द्वारा आरम्भ किया हुआ एक अहम प्रोजेक्ट है जो की देश के हर विभाग को इलेक्ट्रॉनिकली जोड़ता है। इस कार्यक्रम से देश की करीब 2.5 लाख पंचायतों समेत 6 लाख गाँव को ब्रॉडबैंड से जोड़ने का लक्ष है। सरकार ने इस लक्षयों को 2017 के अंत तक हासिल करने का लक्ष रखा है।

डिजिटल इंडिया प्रोजेक्ट का उद्देश्य देश के डाटा को इलेक्ट्रॉनिक मोड में रखना है जिससे की देश की संपत्ति की चोरी होने का संभावना कम हो जायेगी। आज कल देश में सरकार द्वारा विभिन्न स्कीम चलायी जा रही हैं। इन स्कीमों के तहत गरीब और जरुरतमंद लोगों को विभिन्न मदद प्रदान की जाती है, लेकिन असल में ये स्कीमें सही जन तक पहुंचती भी नहीं है, और बीच में ही अनुसार अयोग्य लोग इसका फायदा उठा लेते थे।

इस तरह के लोभ और अनैतिक कार्यों को रोकने के लिए सरकार ने डिजिटल पेमेंट और डिजिटल प्रोग्राम का आरम्भ किया। डिजिटल पेमेंट का उद्देश्य सही लोगों तक उनके हक को पहुंचाना भी है।

प्रधान मंत्री मोदी जी चाहते हैं कि डिजिटल इंडिया का लाभ हर कोई उठाये। इससे देश का कृषि क्षेत्र भी लाभ पाता है। कृषि उत्पादन, मुद्रा संबधि विवरण और बिक्री मूल्यों का पता लगा के कृषि क्षेत्र में अधिक कमाई की जा सकती है।

इस मुहीम का लक्ष देश से कागजी कार्यवाही को हटाना है, जिससे की देश के लाखों रुपये खर्च होने के साथ–साथ अनियमितता भी पनपती है।

अगले चार साल के अन्दर ढाई लाख पंचायतों को ब्रॉडबैंड से जोड़े जाने का लक्ष रखा हैं। सरकार ने अपनी तैयारी भी शुरू कर ली है। सरकार की सारी योजनायें और नियम अब हर किसी के स्मार्ट फोन में होंगे, लेकिन भारत देश में करीब 90 करोड़ लोगों की पहुँच इन्टरनेट तक नहीं होने के कारण, सरकार ने डिजिटल साक्षरता के प्रोग्राम को भी आरम्भ कर दिया है।

गाँव–गाँव में डिजिटल इंडिया के बारे में और डिजिटल इंडिया के महत्व व लाभ के बारे में देश के नागरिकों को बताया जायेगा। पुरे देश में डिजिटल इंडिया की एक लहर छा जाएगी ताकि देश की तकनिकी सुविधाओं से कोई भी देशवाशी बंचित न रहे।

डिजिटल इंडिया के लाभ या फायदे

डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के अनेक लाभ और गुंण हैं। डिजिटल इंडिया से हर व्यक्ति की जिंदगी में एक बदलाव आया है। डिजिटल इंडिया के फायदे अनेक हैं। अगर सरकार की इस मुहीम को हम सब मिल के और मदद करें तो ये प्रोजेक्ट हमें अपनी जिंदगी में एक वरदान के रूप में वापस मदद करेगा। डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से हर व्यक्ति, सरकारी, बेसरकारी कार्यालयों में समय की बचत हो रही है।

1. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से सही जन को उसका सही लाभ मिल रहा है,
2. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से रिश्वत की आदत को जड़ से मिटाने में एक प्रकार की मदद हो रहा है,
3. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से कागजी कार्यवाही में बेकार के खर्च में कमी नजर आ रही है।
4. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से हर चीज की सही सूचना लोगों तक पहुँच रही है,
5. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से देश में हो रही विभिन्न मुहीम की जानकारी पाने में सरलता दिख रही है,
6. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से एक स्वच्छ और सत्य भारत का निर्माण हो रहा है।

डिजिटल इंडिया प्रोजेक्ट एक ऐसी मुहीम है जो की सेवा प्रदाता और उपभोक्ता दोनों को फाईदा पहुंचाता है। देश में हाल ही में डीमोनेटाईसेसन व वीमुद्रिकरण लागू होने के बाद से लोगों में डिजिटल इंडिया की काफी ज्यादा आग्रह देखने को मिल रहा है। लोग आज कल अपना हर खरीद और बिक्री को कैशलेश करना पसंद कर रहे हैं। छोटे छोटे व्यापारियों से लेकर बड़ी दुकानों में भी आज कल लगभग हर खरीद पेटिएम, जैसे कंपनियों के कैशलेश तरीकों से की जा रही है।

डिजिटल पेमेंट और डिजिटल सुरक्षा का एक माहौल पुरे देश में छाया हुआ है। पेटीएम, मोबिक्विक जैसे कंपनियां सरकार की डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के प्रमोशन में काफी मददगार साबित हुए हैं। आज लगभग पूरा देश इन कंपनियों के डिजिटल पैमेंट के तरीके को अपना के देश को डिजिटल बना रहे हैं। छोटे से लेकर बड़े व्यापारियों को भी ग्राहकों कि सुविधा के लिए इस तरह के पैमेंट और कैशलेश तरीकों को अपनाना पड़ा। देखते ही देखते एक साल से भी कम वक्त (विमुद्रीकरण के वक्त से) में देश की जनता ने अपना कारोबार ऑनलाइन करना पसंद करने लगे।

सरकार ने नोटबंदी के बाद कैशलेश पैमेंट के तरीकों को अपनाने के लिए पुरे देश से अनुरोध किया। देश में कैशलेश को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा एक स्वतंत्र एप का आरम्भ किया गया, जो की लोग आसानी से इस्तेमाल कर सकते हैं। इस एप का नाम भीम एप रखा गया।

डिजिटल इंडिया ने देश भर में कई नौकरियां और रोजगार भी प्रदान किया हैं। सरकार ने देश में तकनिकी सुधार और नयी तकनीकों के लांच के कार्य में कई युवाओं को नौकरियां प्रदान करीं।

डिजिटल इंडिया के हानि या नुक्सान

डिजिटल इंडिया अभियान पर ये निबंध अधूरा होगा अगर हम डिजिटल भारत के नुक्सान पे चर्चा ना करें। जहां तक में देख सकता हूँ, डिजिटल इंडिया मिशन के हानि तो कुछ नहीं है लेकिन हां शॉर्ट–टर्म में डिजिटल इंडिया का नुक्सान गरीब और कम पढ़े लोगो को होगा, क्योंकि उन्हें ये तकनीक समझने में और इससे अभियस्त होने मे कुछ वक्त लग जाएगा।

गरीब लोग जिनके पास "android" मोबाइल ही नहीं है, वह "BHIM APP" का लाभ कैसे उठाएंगे?

लेकिन डिजिटल इंडिया का लाभ और हानि के बारे में चर्चा हो रही है तो हमें ये भी याद रखना चाहिए की कोई भी बड़ा बदलाव एक ही झटके में नहीं होता। वक्त और अभ्यास सब में चाहिए होता है।

आज डिजिटल इंडिया मिशन के कदम बड़े ही तेज रफ्तार से सफलता को छू रहे हैं। आइये जानते हें डिजिटल इंडिया की सफलता की कहानी–

डिजिटल इंडिया की सफलता

डिजिटल इंडिया हर रोज नई सफलता को चूमती है, इस बात का तो पूरा देश गवाह है। डिजिटल इंडिया भारतीयों की जिंदगी में वह परिवर्तन लाने का मिशन है जिससे की हर उपभोक्ता को अपने रोजमर्रा के जीवन के कई काम पहले से आसान और कम खर्च में हो रहे हैं। डिजिटल इंडिया की सफलता की कहानियाँ–

1. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से देश की हर गाँव को डिजिटल गाँव का रूप मिलाः अब तो डिजिटल इंडिया से सरकार देश के हर गाँव को इन्टरनेट के माध्यम से जोड़ने के काम पर लगी है। ये काम करीब 1 साल पहले से शुरु किया जा चुका है। इसके लिए देश के हर गाँव को इन्टरनेट के माध्यम से जोड़ा जाएगा, जो की देश की टेलिकॉम कंपनी बीएसएनएल को सौंपा जा चुका है, कि वह इस काम को अपने तकनिकी उपाय से मंजिल तक पहुँचाए, ई–गवर्नेंस की माने तो ये कार्य अपने अंतिम कगार तक पहुँच गया है।
2. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से कार्यविधि में तेजी और सटीकता की एक पहल बन गयीः डिजिटल इंडिया के जादू से देश के आर्थिक शहर मुंबई के सभी कोर्ट और कार्यालयों से टाइपराइटर के इस्तेमाल को जल्द ही समाप्त किया जायेगा। देश की कार्य व्यवस्था को और तेजी रफ्तार देने के लिए ये नया कदम उठाया जायेगा।
3. डिजिटल इंडिया प्रोग्राम से गाड़ीयों की आर.सी. करवाने में अब आसानी हुई (डिजिटल इंडिया के लाभ)। अब देश में गाडियों की आर.सी बनाने के लिए घंटों लाइन में खड़े होने की जरुरत नहीं है, क्यूंकि डिजिटल इंडिया के कारण अब आर. सी बस कुछ मिनटों में ऑनलाइन बन जायेगी, जिससे समय की काफी बचत हुई। ये देश वासीओं के लिए एक वरदान है।

जानिए कितना सफल रहा डिजिटल इंडिया? डिजिटल इंडिया प्रोजेक्ट कैसे चल रहा है?

डिजिटल इंडिया मिशन हर दिन नयी ऊँचाइओं को छूने की कगार पर पहुँचने की तो हम सब रोज देख रहे हैं, लेकिन क्या ये सिलसिला यूँ ही बढ़ेगा, या इसके तरीकों में बदलाव की सख्त जरुरत है? आइए जानते हैं–

डिजिटल इंडिया को देश भर से अच्छी रेस्पोंस मिल रही है, इस मुहीम को गाँव और शहर दोनों वातावरण में काफी सराया गया है, गाँव के ज्यादा से ज्यादा लोग आजकल इन्टरनेट का उपयोग कर रहे हैं, कहा ये भी जा रहा है की अगर गाँव में डिजिटल इंडिया को इसी तरह से

प्रोत्साहन मिलता रहा, तो वह दिन दूर नहीं जब गाँव के लोगों की इन्टरनेट व्यवहार की संख्या शहरी संख्या को पीछे छोड़ जायेगी।

डिजिटल इंडिया के प्रोग्राम को अभी भी पूरी तरह से सफलता हासिल करने के लिए बहुत सी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है, आज भी देश के ज्यादातर लोग अनपढ़ हैं जो डिजिटल इंडिया की बढ़ोत्तरी में सबसे बडी रुकावट है। साइबर थ्रेट के कारण भी डिजिटल इंडिया की मुस्किलें बढ़ने लगी हैं, और इस मुहीम की सबसे बड़ी रुकावट है देश की राजनीति, जिससे की देश की ओप्पोजिसन पार्टी हर नई योजना या सिस्टम को नकारात्मक घोषित करके देश की बढ़ोत्तरी में रुकावट बन रहे हैं।

डिजिटल इंडिया से इन्टरनेट के प्रयोग में भारी मात्र में बढ़ोत्तरी हुई है, लेकिन आज भी हमारे देश के करीब 37 फीसदी लोग अनपढ़ हैं, और करीब 90 करोड़ लोगों के पास स्मार्ट फोन की उपलबधी नहीं है। देश के टेंडर व्यवस्था में ई–टेंडर का माहोल बनाने पर सरकार ने कमर कस ली है, लेकिन ई–टेंडर या कहें ई– गवर्नेंस लोगों की परेशानी तो खत्म कर सकती है, लेकिन क्या इससे भ्रष्टाचार खत्म होगा,? इसका कोई पर्याप्त प्रमाण है? कानूनी नियम की देखें तो 2 लाख से ऊपर की खरीद के लिए ई–टेंडर जारी करना होता है, लेकिन देश की कई जगहों से तो ये भी आरोप आ रहा है की बिना टेंडर से ही ठेके बांटे जा रहे हैं।

कहा जा रहा है की देश में डिजिटल हवा की लहर छा रही है, लेकिन सच तो ये भी है की देश की कई हिस्सों में आज भी मोबाइल फोन का सिग्नल तक नहीं पहुँच पाया है, और स्थान कुछ ऐसे भी हैं जहां सिग्नल तो पहुँचता है लेकिन इस पर भरोसा करना बेवकूफी होगी। देश के कई हिस्सों में मरीज कम से कम सरकारी एम्बुलेंस को खबर तक नहीं कर पाते हैं, जिससे की राज्य में हर साल कई मात्रा में लोगों की मौत भी होने की खबर हम रोज अखबारों में पढ़ते हैं।

हम मानते हैं की सरकार इन सारी परिस्तिथियों से अवगत है और इसका समाधान करने के लिए कई प्रकार की कदम भी उठा रही है, लेकिन अभी डिजिटल इंडिया जैसे एलानो को हम पूरी तरह से सफल नहीं कह सकते। लेकिन हम सब की मिली–भगत से वह दिन दूर नहीं जब डिजिटल इंडिया जैसी स्कीम से हम सबको फायदा मिलेगा और हम गौरव से देश को डिजिटल देश कहेंगे।

लेकिन इतनी सफलताओं के बावजूद, आज भी डिजिटल इंडिया के सामने कई चुनौतियां हैं। डिजिटल इंडिया की सफलता में कोई सवाल नहीं है, लेकिन आने वाले वक्त में सरकार को इस मुहीम पे और मेहनत करनी होगी।

डिजिटल इंडिया के सामने मुश्किल चुनौतीयां?

डिजिटल इंडिया भारत सरकार की अच्छी योजना है, ई–कॉमर्स डिजिटल इंडिया प्रोग्राम को सुगम बनाने में मदद करेगा। कई कानूनी सलाहकारों की माने तो बिना साइबर

सुरक्षा के डिजिटल इंडिया व्यर्थ है। डिजिटल इंडिया को सफल बनाने के लिए हर कार्यालयों के कर्मियों को उचित तालीम प्रदान करना अनिवार्य है। डिजिटल इंडिया के कई बड़ी चुनौतियां हैं–

1. **देश की इन्टरनेट स्पीड डिजिटल इंडिया के लिये एक बड़ी बाधा बनी :** देश की कई हिस्सों में इन्टरनेट स्पीड की बड़ी मुसीबत है जो की डिजिटल इंडिया को उन इलाकों में बढ़ने नहीं दे रही है। इस तरह से कहीं न कहीं इस प्रोजेक्ट के लिए एक बड़ी बाधा साबित हो रही है।
2. **देश की तकनिकी कमी की कारण सुरक्षा पर खतरा लहरा रही है :** देश की कंप्यूटर तथा सूचना प्रणाली इन्टरनेट से जुडी है। इन पर विदेशी कम्पन्यों की आधिपत्य है, जो की डिजिटल इंडिया के सफलता पर एक सवालिया निशन लगा दे रही है। इसके लिए देश को चाहिए स्वदेशी तकनिकी नियंत्रण जो की देश के तथ्यों को बाहरी देशों की तकनीक से दूर रखे, ताकि देश में सुरक्षा का एक वातावरण बने।
3. **बच्चों पर इन्टरनेट की व्यवहार की आजादी पर खतरा के चलते डिजिटल इंडिया पर मुस्किल लहराई :** देश के बच्चों को डिजिटल इंडिया के कारण इन्टरनेट से जुड़ने की मुहीम और उनके इन्टरनेट व्यवहार पर आजादी भी हमें एक बार फिर डिजिटल इंडिया के बारे में सोचने के लिए मजबूर कर दे रही है। आजकल बच्चे इन्टरनेट पर पढ़ाई करने के लिए उसकी इस्तेमाल करते हैं, लेकिन इन्टरनेट जो की दुनिया भर की जानकारी को हम तक उपलब्ध करा रही है, वह बच्चों को अपनी मतलब और बेमतलब की जानकारी के जाल में फंसाने में कई बार सक्षम होते हम सब ने देखा है।
4. **देश में बिजली की परेशानी भी डिजिटल इंडिया की सफलता में एक रुकावट है :** आजादी के इतने वर्षों बाद भी हमारे देश के कई हिस्से आज भी बिजली को एक सपने की तरह देख रहे हैं। बिजली की परेशानी भी डिजिटल इंडिया के खिलाफ खड़ी एक रुकावट है। बिना बिजली के देश में प्रगति का सपना देखना बेवजह और बेमतलब है। सीधी बात है की बिना बिजली के इन्टरनेट चल नहीं पायेगा जो की सीधा डिजिटल इंडिया पर अपना असर दिखायेगा। जरुरत है की देश की सरकार को, देश के हर गाँव को बिजली उपलब्ध कराना।

डिजिटल इंडिया का सारांश

डिजिटल इंडिया भारत सरकार के बहुउपयोगी कदम है जो की आगे चल के देश के हर कार्यालयों के काम काज में सहजता और आसानी लाने की एक बड़ी पहल है। इससे देश के विकास में अपना अमूल्य योगदान है। ये नागरिकों को डिजिटल सशक्त बनाने में अहम् भूमिका निभा रही है।

आज डिजिटल इंडिया कैंपेन के कारण देश को काफी लाभ मिला है, जैसे की कई सरकारी ऑफिस में डिजिटलाईजेशन के कारण काम ने रफ्तार पकड़ी है, काम काज में निपुंणता की लहर झलक है, और सबसे अहम् की सरकारी बाबुओं की चोरी की कमाई में अब ताला पड़ने के दिन आ गये हैं, जो की कई गरीबों को एक बड़ी राहत देने में सफल प्रयास है।

तो आइऐ हम सब मिल कर देश के डिजिटल इंडिया प्रोग्राम में हिस्सा लेकर देश के प्रति अपना फर्ज निभाएं और ज्यादा से ज्यादा डिजिटलाईजेशन को अपनी जिंदगी का हिस्सा बनाऐं।

क्या आप हमारे डिजिटल इंडिया पर निबंध के आर्टिकल से खुश हैं? अगर आप भी डिजिटल इंडिया के बारे में अपनी कोई सोच रखना चाहते हें, तो नीचे कमेंट बॉक्स में अपनी राय जरुर दें, और इस आर्टिकल को ज्यादा से ज्यादा लोगों में शेयर करें, ताकि देश में डिजिटलाईजेशन की लहर बन जाए और हमें एक आसान और तेज गति जिन्दगी जीने में मदद हो।

डिजिटल इंडिया कैसे कार्य करेगाः डिजिटल इंडिया से डेटा का डिजिटलाइजेशन आसानी से होगा जो भविष्य में चीजों को तेज और दक्ष बनाने में मदद करेगा, इसमें कागजी कार्य, समय और मानव की मेहनत की भी बचत होगी। सरकार और निजी क्षेत्र में गठबंधन स्थापित कर कई बड़े गांव में, डिजिटल लेस इलाकों में भी बदलाव लाएगा। भारत के सभी गांव और शहर और नगर तकनीकी होंगे (राष्ट्रीय अंतराष्ट्रीय) मुख्य कंपनियां 2019 तक इस प्रोजेक्ट को पूरा करने की योजना है, इसमें अंबानी द्वारा 2.5 लाख करोड़ का निवेश किया गया है, इस योजना द्वारा इंटरनेट सेवा के साथ दूरदराज के ग्रामीण इलाकों तक पहुंचेगा इंटरनेट, जिससे नागरिकों में सुधार आ सकता है, इस योजना से हर एक को काफी फायदा होगा।

डिजिटल इंडिया द्वारा चलाई जाने वाली प्रमुख योजनाएंः डिजिटल इंडिया द्वारा भारत के विकास के लिए कुछ योजनाएं चलाई जा रही है जिसमें पहले से प्रचलित ई गवर्नेस योजना बहुत ही प्रतिभाशाली रूप है जिसे नव स्तंभों का नाम दिया गया है जो प्रत्येक नागरिक को कई डिजिटल सुविधाएं प्रदान करेगा। वो स्तंभ इस प्रकार है–

(1) ब्रॉड बैंड हाइवे

(2) लोकहित पहुंच कार्यक्रम

(3) मोबाइल कनेक्टिविटी

(4) एक क्रांति

(5) ई गवर्नेंस

(6) सभी को सूचना

(7) नौकरी के लिए आई .टी.

(8) पूर्व फसल कार्यक्रम

(9) इलेक्ट्रॉनिक विनिर्माण

सभी को डिजिटल इंडिया की जानकारी होना

डिजिटल इंडिया के अंतर्गत सरकार अपनी सभी जानकारी वेबसाइट और सोशल मीडिया द्वारा प्रत्येक नागरिक को देगी। हर नागरिक को टू.वे. कम्युनिकेशन की सुविधा भी दी जाएगी ताकि सभी के पास डिजिटल इण्डिया की जानकारी हो।

इस योजना को सफल बनाने के लिए सबसे पहले सरकार ने आधार की मदद से लोगों का बायोमेट्रिक डाटा लिया, जिससे उनकी अद्वितीय पहचान मिल सकें। सभी भारतीय लोगों को अद्वितीय पहचान मिलने के बाद भारतीय नागरिकों से सभी सेवाओं जैसे मोबाइल नंबर, PAN, बैंक अकाउंट , जीवन बीमा , राशन कार्ड , गैस कनेक्शन , ड्राइविंग लाइसेंस को आधार कार्ड से जोड़ा जा रहा है।

उसके बाद आधार की सहायता से लोगों को सभी सुविधाएँ दी जा रही हैं। इससे लोगों की पहचान सही प्रकार से हो पा रही है और साथ ही बीच में भ्रष्टाचार करने वाले कम हो गये हैं। आज आप घर पर बैठे आधार की मदद से मोबाइल सिम खरीद सकते हैं , अपना PAN अप्लाई कर सकते हैं और ऐसी कई सेवाएं हैं जो Online KYC और OTP की सहायता से कुछ ही मिनटों में पुरे हो रहे हैं जिनके लिए कभी लोगों को महीनों तक इंतजार करना पड़ता था।

आज के समय में लगभग सभी भारतीय बैंकों में ऑनलाइन बैंकिंग और ATM की सुविधा है जिसकी सहायता से लोग घर बैठे सभी पैसों का लेन–देन कर सकते हैं। अब PAN को भी आधार से जोड़ा जा रहा है जिसकी मदद से कोई भी आयकर चोरी या घोटाला नहीं कर पायेगा और साथ ही लोग TDS भी घर में बैठे भुगतान कर सकते हैं।

कई इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का निर्माण

(नेट.जीरो. इम्पोर्ट्स) के तहत सभी प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक उपकरण का निर्माण देश में ही किया जाएगा जिसमें मोबाइल, सेट अप बॉक्स, वी.सेट, फेब लेस डिजाइन, कस्टमर और मेडिकल इलेक्ट्रॉनिक, स्मार्ट एनर्जी मीटर, माइक्रो एटीएम, स्मार्ट कार्ड, जैसे उपकरण हमारे देश में ही निर्माण होगा और इन पर ज्यादा फोकस किया जाएगा।

डिजिटल इंडिया द्वारा नौकरियां: कौशल विकास कार्यक्रम को इससे जोड़कर कंपनियां कार्य प्रणाली के अनुसार ग्रामीणों को प्रशिक्षण दिया जाएगा जिससे रोजगार में काफी मदद मिलेगी।

अर्ली हार्वेस्ट कार्यक्रमः इसके अंतर्गत डिजिटल इंडिया कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए सरकार ने कुछ नियम बनाए हैं जिसको पूरे देश में लागू किया जाएगा–

- **ई–हॉस्पिटल पोर्टल** : Digital India Project अंतर्गत जनता आसानी से डॉक्टर से कंसल्ट कर पायेगी, अपोइंटमेंट भी समय पर इसी पोर्टल के जरिये दिया जायेगा, संकट के समय किसी भी रोग के बारे में सभी जानकारी आसानी से इस पोर्टल के माध्यम से दी जाएगी।
- **ई–बस्ता पोर्टलः** इसके (Digital India Project) अंतर्गत छात्रों को बुक्स प्रोवाइड कराई जाएगी। जो भी पढ़ाई संबंधी जानकारी चाहिये, वो इस ई–बस्ता पोर्टल के तहत छात्रों को दी जाएगी। जरुरी पढ़ाई संबंधी नोट्स या अन्य मटेरियल भी इस पोर्टल के जरिये प्रोवाइड कराये जायेंगे, और इसका इस्तेमाल कोई भी कहीं से भी कर सकता है।
- नौकरी के लिए भी सभी जानकारी इन्टरनेट पर हैं इसके लिए भी कई गवर्नमेंट द्वारा संचालित पोर्टल लांच किये जायेंगे जिसके तहत रोजगार के संबंध में सभी जानकारी उपलब्ध कराई जाएगी।
- **डिजिटल लाकर्स** : सरकार द्वारा डिजिटल लॉकर्स प्रोवाइड कराये गये हैं, जिसमें व्यक्ति अपने जरुरी दस्तावेज सुरक्षित रख सकता है।
- Digital India project के कारण सभी कार्यों में पारदर्शिता बढ़ेगी। ऑनलाइन होने के कारण रिश्वत जैसे कार्य कम हो जायेंगे क्यूंकि सभी कार्य डिजिटल तरीके से होने के कारण सभी आँखों के सामने होंगे, अतः इससे काफी हद तक भ्रष्ट्राचार रोका जा सकता है।
- Digital India project के कारण कोई भी काम आसानी से बिना तकलीफ के घर बैठे हो जायेंगे।
- इससे देश में रोजगार बढ़ेगा, लोगो का विकास कई गुना तेजी से बढ़ेगा।
- डिजिटलाइजेशन से लोगो के प्रति कार्ड पेमेंट या नेट बैंकिंग के प्रति नकारात्मक सोच कम होगी जिससे इनका प्रयोग बढ़ेगा और कालाबाजारी भी कम होगी, साथ ही अर्थव्यवस्था सुचारू होगी।
- गाँव को इस Digital India project में अहम् रखने से नींव मजबूत होगी जो कि बहुत जरुरी हैं क्यूंकि शहरी लोग आसानी से स्मार्ट दुनियाँ को अपनाते हैं लेकिन सुविधा की कमी के कारण गाँव के लोग पीछे रह जाते हैं।

डिजिटल इंडिया के अंदर आने वाली सर्विसेज

सीएससी क्या है ?

सीएससी का पूरा नाम कॉमन सर्विस सेंटर यानि आम सेवा केंद्र हैं। यह प्रोग्राम राष्ट्रीय ई गवर्नेस योजना का रणनीतिक आधार है। इसे मई, 2006 में भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिक्स एवं आईटी मंत्रालय की एक पहल के रूप में शुरू किया गया था। यह भारत के गांवों को विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक सेवाओं देने के लिए पहुँच बिंदु है, जिससे समाज को डिजिटल और वित्तीय रूप से योगदान मिलता है। यह ई—गवर्नेस, शिक्षा, स्वास्थ्य, टेलीमेडिसिन, मनोरंजन के साथ—साथ अन्य प्राइवेट सेवाओं के क्षेत्रों में उच्च गुणवत्ता एवं लागत प्रभावी वीडियो, वोईस एवं डेटा कंटेंट और सेवाओं प्रदान करता है। इसकी सबसे बड़ी खास बात यह है कि यह ग्रामीण क्षेत्रों में वेब इनेबल्ड ई—गवर्नेस सेवाएं प्रदान करता है, जिसमे आवेदन पत्र, प्रमाण पत्र एवं बिजली, टेलीफोन और पानी के बिल जैसे उपयोगी भुगतान शामिल हैं। देश में अभी 3 लाख के ऊपर सीएससी सेंटर हैं। आजकल भारत सरकार अपनी सभी योजनाओं का लाभ और उससे जुड़ी जानकारी इन्हीं सीएससी सेंटर में देती है। प्रधानमंत्री आवास योजना के रजिस्ट्रेशन में ये सेंटर्स महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके अलावा इसी साल आने वाली दुनिया की सबसे बड़ी हेल्थ बीमा योजना "आयुष्मान भारत" में भी सीएससी सेंटर का महत्वपूर्ण योगदान रहने वाला है।

उपसंहार

डिजिटल इंडिया की सफलता के लिए देश की बड़ी—बड़ी कंपनियों ने काफी खर्च किया है, अब तक इसमें तो 4.5 लाख करोड़ खर्च कर चुके हैं, इससे 18 लाख लोगों को नौकरी मिलेगी। यह भारत सरकार की बहुत ही अच्छी योजना है, इससे भारत की एक अलग पहचान होगी। डिजिटल इंडिया गांव से लेकर शहर तक हर क्षेत्र में जुड़ेगा और हमारे देश का नाम रोशन करेगा। हमारा देश दूसरे देशों से मदद लेता था और अब मदद देने वाला देश बनेगा।

शिक्षा में मानवीय मूल्य एवं व्यावसायिक आवश्यकता एवं महत्व

रेशू गंगवार[1], डॉ. अनुपमा महरोत्रा[2]
[1]शोधार्थी
[2]एसो. प्रो. गृहविज्ञान
राजकीय रज़ा पी.जी. कॉलेज, रामपुर।

किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या

शिक्षा वह कुंजी है जिससे व्यक्ति अपनी सफलता सुनिश्चित कर सकता है, वह अपने उज्जवल भविष्य की ओर अग्रसर हो सकता है, शिक्षित व्यक्ति समाज में सम्मान का पात्र होता है, हमारे राष्ट्र में प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित हो साथ ही साथ उसमें मानवीय मूल्य व नैतिकता का भी समावेश हो इसके लिए सरकार ने अपनी तरफ से बहुत से प्रयास किये हैं।

स्वतन्त्रता के पश्चात निर्मित संविधान एवं समय–समय पर गठित शिक्षा सम्बन्धी आयोगों तथा समितियों का नैतिक मूल्य व नागरिक बोध सम्बन्धित शिक्षा को महत्वपूर्ण बताया है। हमारे संविधान में सर्वधर्म समभाव को प्राथमिकता देकर नैतिक मूल्यों के रुप में सामने लाया गया है।

चारित्रिक एवं नैतिक शिक्षा पर बल देते हुए स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि ''शिक्षा मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास है वह शिक्षा जो जनसमुदाय को जीवन संग्राम के उपयुक्त नहीं बना सकती, जो उनकी चारित्रिक शक्ति का विकास नहीं कर सकती, जो उनके मन में परहित भावना और सिंह के समान साहस पैदा नही कर सकती, क्या उसे भी हम शिक्षा नाम दे सकते हैं? शिक्षा का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा था– सभी शिक्षाओं का, अभ्यासों का अंतिम ध्येय मनुष्य का विकास करना है। जिस अभ्यास के द्वारा मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रवाह और अविष्कार संयमित होकर फलदायी बन सकें।''

डॉ0 राधाककृष्णन ने ठीक कहा है कि भारत सहित सारे संसार के कष्टों का कारण यह है कि शिक्षा का सम्बन्ध नैतिक और अध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति न रहकर केवल मस्तिष्क रह गया हैं, यदि शिक्षण का अर्थ हृदय और आत्मा की अवहेलना है तो उसको पूर्ण नहीं माना जा सकता है। 12 सितम्बर 2002 के अपने ऐतिहासिक निर्णय में उच्चतम न्यायालय की त्रि–सदस्य खंडपीठ ने कहा कि सदाचार, सत्य, अहिंसा ये शाश्वत मूल्य हैं जो कि मूल्य आधारित शिक्षा की नींव हैं, अतः इसके लिए यह जरूरी है कि यह माना जाए कि हमारे उपनिषदों के उन तथ्यों को उसी रूप में समझा जाए। निर्णय में संविधान के अनुच्छेद 28 की व्याख्या करते हुए कहा कि विद्यार्थियों को मूल्य आधारित शिक्षा के तहत यह बताया जाए कि सभी का मूल एक है। सत्य,

प्रेम शांति, सदाचरण शाश्वत मूल्य शिक्षा के आधार होना चाहिए क्योंकि इन नैतिक मूल्यों के बिना कोई भी संविधान या लोकतन्त्र कारगर नहीं हो सकता। शिक्षा का उद्देश्य होता है कि मानव को सही अर्थों में मानव बनाया जाये। उसमें आत्मनिर्भरता की भावना को उत्पन्न करे, देशवासियों का चरित्र निर्माण करे, मनुष्य को परम पुरूशार्थ की प्राप्ति कराना है लेकिन आज यह सब केवल लक्ष्य पूर्ति के साधन बनकर रह गये है। नैतिक मूल्यों का निरंतर ह्रास किया जा रहा है। प्रत्येक राष्ट्र की सामाजिक एवं सांस्कृतिक उन्नति वहां की शिक्षा पद्धति पर निर्भर करती है, हमारे देश में स्वतंत्रता के बाद शिक्षा के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है और वर्तमान में कला वाणिज्य, विज्ञान, चिकित्सा आदि अनेक संकायों में विभिन्न सवर्गो में शिक्षा का गुणात्मक एवं संख्यात्मक प्रचार हो रहा है, सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में या कम्प्यूटर शिक्षा में भारत विश्व का अग्रणी देश बन गया है। फिर भी एक कमी यह है कि यहाँ नैतिक शिक्षा पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता है। इससे भारतीय पीढ़ी संस्कारहीन और कोरी भौतिकवादी बन रही है। नैतिक शिक्षा का अर्थ उस शिक्षा से है जो बच्चों में नैतिकता के गुणों का विकास करती है। बच्चों को संस्कारो से जोड़ती है। उन्हें उनके कर्त्तव्यों का ज्ञान करवाती है। शिक्षक छात्र के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे न केवल शिक्षा प्रदान करते हैं बल्कि एक छात्र के व्यक्तित्व को विकसित करने में मदद करते हैं। जैसा कि प्रशिक्षक अक्सर एक संरक्षक की भूमिका निभाता है और एक व्यक्ति के विकास को प्रभावित करता है यह आवश्यक है कि वे कुछ नैतिकता का पालन करें। यह महत्वपूर्ण है कि एक प्रशिक्षक समझता है कि प्रत्येक छात्र अलग है और उसी के आधार पर उसका मूल्यांकन भी किया जाना चाहिए।

शिक्षा में नैतिकता शिक्षा प्रणाली को विनियमित करने में मदद करती है और यह सुनिश्चित करती है कि यह अभ्यास मानव कल्याण के लिए सकरात्मक योगदान देता है।

संदर्भ

1. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986*
2. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति पृष्ठ सं0 11*
3. *सिंह तोमर नीतू (2016) ''मानवीय मूल्यों का नैतिक महत्व एक सामाजिक विवेचना।*
4. *तिवारी शालू (2019) ''विद्यार्थी जीवन में नैतिक शिक्षा का महत्व, Vol 11 No. 06.*

वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण का मानवीय मूल्य संरक्षण में योगदान

ऋचा राघव
शोधार्थी

भारतीय समाज प्राचीनकाल से ही आदर्शवादी समाज रहा है। भारतीय समाज में प्रेम, भाईचारा, सहानुभूति आदि मूल्य प्रमुख रूप से पाए जाते हैं। इन मूल्य के संरक्षण में शिक्षक का विशेष योगदान है। शिक्षक भावी राष्ट्र के निर्माता हैं, जिन पर किसी भी राष्ट्र का भविष्य टिका रहता है। जब शिक्षकों के कन्धों पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी है तो इन शिक्षकों को दी जाने वाली शिक्षा भी विशेष होनी चाहिए जिससे यह मानवीय मूल्यों के संरक्षण में अपना योगदान दे सकें। वर्तमान भारतीय समाज में शिक्षा का स्तर तो अवश्य उठा है किन्तु शिक्षा आज मानवीय मूल्यों से काफी दूर होती जा रही है, जिसके कारण आज समाज में संवेदना एवं प्रेम का अभाव है। इसका प्रमुख कारण है भावी शिक्षक को दी जाने वाली शिक्षा में गुणवत्ता का अभाव है। यदि शिक्षकों को दी जाने वाली शिक्षा में उन्हें मानवीय मूल्यों का परिचय कराया जाएगा तो वह इस ज्ञान को आत्मसात कर अपने व्यवहार में अवश्य उतारेगा। शिक्षक वह प्रतिबिम्ब होते है जिसमें विद्यार्थी अपने भावी भविष्य को साकार होते हुए देखते हैं। शिक्षक मानवीय मूल्यों को पोषित एवं विस्तारित करता है जिससे देश का भविष्य उज्जवल बनता है। शिक्षक शिक्षा इन मानवीय मूल्यों का आधार तैयार करती है।

भारतीय समाज प्राचीनकाल से ही आदर्शवादी समाज रहा है। हमारे देश में प्रारम्भ से ही शिक्षक को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। बालक का भविष्य उसके शिक्षक के हाथों में ही निहित होता है। फ्रॉबेल के अनुसार ''विद्यालय रूपी बाग में शिक्षक रूपी माली शिक्षार्थी रूपी पेड़–पौधों के उचित विकास के लिए उत्तरदायी हैं।''[1]

वैदिक काल में विद्यार्थी के प्रशिक्षण के लिए गुरूकुल प्रणाली का चलन था। गुरूकुलों में विद्यार्थी को योग्य शिक्षकों द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती थी। शिक्षक जितना ज्ञानवान एवं संयमी होता था उसका प्रभाव विद्यार्थी पर उतना ही अधिक पड़ता था। शिक्षक अपने विद्यार्थी को न केवल शिक्षित करता था बल्कि उसे एक योग्य नागरिक बनाता था। गुरूकुल में विद्यार्थियों को माता–पिता की तरह स्नेह, प्रेम एवं भरण–पोषण किया जाता था। गुरू का कर्तव्य था कि वह शिष्य को अज्ञान के अंधकार से निकाल कर ज्ञानरूपी प्रकाश में लाए जैसा कि कबीरदास जी ने कहा है कि –

सतगुरू की महिमा अनत, अनत किया उपगार।

लोचन अनत उघाड़िया अनत दिखावणहार।।[2]

शिक्षकों को भारतीय समाज का आधार स्तम्भ माना जाता है। शिक्षकों की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि :–

गुरू सुआ मोहि पन्थ दिखावा।

बिनु गुरू जगत को निर्गुन पावा।[3]

भूमण्डलीयकरण के दौर में आज जहाँ एक ओर शिक्षा का प्रचार–प्रसार तेजी से हुआ है वहीं आज समाज अपनी संस्कृति के मूल्यों को काफी पीछे छोड़ते चले जा रहे हैं। आज का युवक एक मशीन की भांति कार्य करता चला जा रहा है। उसके हृदय में एक दूसरे मनुष्यों के प्रति कोई प्रेम और संवेदना का भाव नहीं है। इसका मुख्य कारण है कि आज व्यक्ति में मानवीय मूल्यों का लगातार ह्रास होता चला जा रहा है। इस परिस्थिति को रोकने के लिए हमें उस मूल कारण का समाधान करना आवश्यक है। शिक्षा के क्षेत्र में आज क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं और लगातार होते जा रहे हैं। इस प्रगति को सार्थक तब ही बनाया जा सकता है जब व्यक्ति में शिक्षा और मानवीय मूल्यों का सामंजस्य बना रहे।

जब विद्यार्थियों को मार्गदर्शित करने वाले शिक्षक प्रशिक्षित होने के साथ–साथ मानवीय मूल्यों के पोषक होंगे तो विद्यार्थियों में स्वतः ही मूल्यों का विकास होगा। गुरू रवीन्द्रनाथ टैगोर ने शिक्षा के सम्बन्ध में लिखा है –

''शिक्षा मस्तिष्क को अंतिम सत्य खोजने के योग्य बनाती है, जो सत्य हमें पार्थिव बन्धनों से मुक्त करता है और हमें वह धन देता है, जो सांसारिक वस्तु नहीं है, जो शक्ति नहीं है बल्कि प्रेम है और जिसके कारण मानव उस सत्य को अपना बना लेता है और उसे ढ़ंग से प्रकट करता है।''[4]

शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए प्राचीनकाल से ही प्रयास किए जा रहे हैं। किसी भी राष्ट्र की प्रगति और विकास वहाँ की शिक्षा के द्वारा ही संभव है। योग्य शिक्षक किसी भी परिस्थिति में अपने विद्यार्थी की जिन्दगी में ज्ञान, मूल्य, आदर्श, संस्कार और प्रतिबद्धता जगा सकता है। सामाजिक मान्यता है कि शिक्षक जन्मजात होते हैं किन्तु प्रत्येक समाज की आवश्यकताएँ अलग होती है। देशकाल और वातावरण के प्रभाव से वह परिवर्तित होती रहती है। शिक्षकों को प्रशिक्षित करके उनके अंदर शिक्षण की कला को और मानवीय मूल्यों को पोषित किया जाता है। आधुनिकता की दौड़ में आज हम इतने अंधे हो चुके हैं कि हमें हमारी संस्कृति के मूल्यों का ज्ञात तक नहीं है। अपने देश के भविष्य को उज्जवल बनाने के लिए शिक्षकों को दिए जा रहे प्रशिक्षण में सुधार की आवश्यकता है। शिक्षा के निजीकरण होने से शिक्षा सभी के लिए आसानी से सुगम तो हुई है लेकिन उसकी गुणवत्ता में गिरावट आई है। आज शिक्षक प्रशिक्षण

संस्थानों में अपने आप को बचाए रखने के लिए प्रतिस्पर्धा लगी हुई है जिसके चलते शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए शून्य अंक लाने वाले विद्यार्थी को भी प्रवेश दे दिया जाता है। विद्यार्थियों की हर तरह की शर्त को प्रवेश दे दिया जाता है। विद्यार्थियों की हर तरह की शर्त को प्रवेश के समय महाविद्यालय सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं जिनमें से प्रमुख है विद्यार्थी का महाविद्यालय न आना। महाविद्यालय अपनी संख्या पूर्ति करने के चक्कर में इस बात पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते कि यदि एक भावी शिक्षक अपने प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में भाग ही नहीं लेगा तो उसे क्या प्रशिक्षित किया जाएगा ? क्या उसमें मूल्य विकसित किए जाएंगे ?

शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने के लिए स्वतन्त्रता पूर्व और स्वतन्त्रता के पश्चात् काफी महत्वपूर्ण प्रयास किए गए। सन् 1835 का मैकाले का विवरण पत्र आया जिसमें अंग्रेजी शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया। सन् 1853 के वुड के घोषणा–पत्र ने शिक्षा की तात्कालीन स्थिति की समीक्षा करके भारतीय शिक्षा में जो अनेक समस्याएँ थी उनका अध्ययन किया। इस घोषणा पत्र को भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। ब्रिटिश शिक्षा में अब तक जो कमियां थी वुड के घोषणा–पत्र ने उन्हें दूर करने का प्रयास किया।

3 फरवरी 1882 को भारतीय शिक्षा आयोग हण्टर कमीशन का गठन किया गया। इसमें प्राथमिक शिक्षा का विश्लेषण किया गया तथा देखा कि प्राथमिक शिक्षा के विकास में क्या–क्या अवरोध आ रहे हैं। शिक्षक प्रशिक्षण को सुधारने के लिए आयोग ने अपने महत्वपूर्ण सुझाव दिए। हटाँग कमेटी ने प्राथमिक शिक्षा में काफी सराहनीय कार्य किया। उन्होंने शिक्षा में अपव्यय एवं अवरोधन के पीछे के प्रमुख कारणों का पता लगाया जिससे प्राथमिक स्तर पर अपव्यय एवं अवरोधन को रोकने के लिए सराहनीय प्रयास किए गये। हालांकि यह बात सत्य है कि अपव्यय और अपरोधन की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। इसने अध्यापक शिक्षा को व्यवसाय प्रधान बनाने पर बल दिया। सन् 1944 की सार्जेण्ट योजना भी शिक्षक प्रशिक्षण के लिए मील का पत्थर साबित हुई। इसने प्रत्येक स्तर पर शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र खोलने की बात कही। सभी पाठ्यक्रमों के अभिनव पाठ्यक्रमों की व्यवस्था पर जोर दिया गया।

सन् 1948 में स्थापित राधाकृेष्णन् आयोग ने शिक्षा की गुणवत्ता में आ रही गिरावट का गहराई से अध्ययन कर अपने सुझाव प्रस्तुत किए। उच्च शिक्षा के लिए शिक्षक वर्ग के लिए विशेष प्रावधान किए गये। शिक्षक–प्रशिक्षण के लिए भी आयोग ने अपने सुझाव दिए। आयोग ने कहा कि शिक्षक–प्रशिक्षण में सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक कार्य दोनों पर समान बल दिया जाए तथा 12 सप्ताह का शिक्षण अभ्यास अनिवार्य किया जाए। कुछ वर्ष अध्यापन के बाद बी0एड0 परीक्षा उत्तीर्ण छात्रों को एम0एड0 में प्रवेश दिया जाए।

1952 में माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन करने के पश्चात् उनके निराकरण के लिए मुदालियर आयोग का गठन किया गया। मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षकों के शिक्षण के लिए सुझाव दिये। आयोग के अनुसार प्रशिक्षण काल दो वर्ष का होना चाहिए। आयोग ने कहा कि प्राधानाध्यापक को उच्च वेतनमान दिया जाए जिससे योग्य व्यक्ति इस पद पर

नियुक्त किए जा सके। सन् 1964 में डॉ0 डी0एस0 कोठारी की अध्यक्षता में गठित भारतीय शिक्षा आयोग ने शिक्षक प्रशिक्षण के दोषों को स्पष्ट करके उन्हें दूर करने के लिए सुझाव प्रस्तुत किए। आयोग ने प्रशिक्षण की गुणवत्ता पर ध्यान देते हुए सभी शिक्षण संस्थाओं को शिक्षक–प्रशिक्षण कॉलेज खोलने का सुझाव दिया। आयोग ने प्रशिक्षण अवधि के बारे में निम्नलिखित सुझाव दिये जो निम्नवत् है :–

1. प्रशिक्षण स्नातक छात्रों के लिए एक वर्ष का होना परन्तु कार्य दिवसों की संख्या एक वर्ष में बढ़ाकर 230 कर देनी चाहिए।
2. प्राथमिक शिक्षकों के लिए व्यवसायिक कोर्स की अवधि 2 वर्ष होनी चाहिए।
3. शिक्षा में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम की अवधि 3 सत्र कर देनी चाहिए तथा इसे संचालित करने हेतु उन्हीं संस्थाओं को अनुमति देनी चाहिए जो उचित और अर्ह शिक्षक रख सकें।[5]

आज हमें शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने के लिए एक बार फिर से प्रयास करना होगा। सरकार और एन0सी0टी0ई0 इसके लिए लगातार प्रयास कर रही है। प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में बी0एड0 और एम0एड0 को द्विवर्षीय करना, बी0ए0बी0एड0 चारवर्षीय पाठ्यक्रम को शुरू करने के पीछे यहीं उद्देश्य है। बी0एड0 के पाठ्यक्रम में 'नई तालीम' पाठ्यक्र को जोड़ने के पीछे भी यही उद्देश्य है। इस पाठ्यक्रम को प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में जोड़ने के पीछे उद्देश्य यही है कि आज के शिक्षक जो मानवीय मूल्यों से अनभिज्ञ बने हुए है, पाठ्यक्रम के माध्यम से उन मानवीय मूल्यों से परिचित हों और उन्हें अपने व्यवहार में उतार सकें।

वर्तमान का शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रय अपने कार्य को सम्पूर्ण करने में पूर्णरूपेण सक्षम है। बस उसे अपने व्यवहार में उतारने के लिए हमें प्रतिबद्ध होना होगा। जब तक हम उसे अपने आचरण में लेने से लिए प्रतिबद्ध नहीं होगें तब तक शिक्षा की गुणवत्ता और सामाजिक स्थिति में सुधार संभव नहीं है। शिक्षा ही वह माध्यम है जो समाज की सभ्यता संस्कृति और मानवीय मूल्यों का संरक्षण करती है। अतः शिक्षा प्रदान करने वाले शिक्षकों को जब तक मानवीय मूल्यों को प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में शामिल नहीं किया जाएगा तब तक शिक्षा और समाज का पूर्णरूपेण विकास संभव नहीं है।

संदर्भ

1. *शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय परिदृश्य – प्रोफेसर रमन बिहारी लाल, पृष्ठ संख्या– 317।*
2. *कबीर ग्रन्थावली पृ0 सं0–56।*
3. *पदमावत् पृ0सं0– 265।*
4. *शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक मूल आधार – डॉ0 आर0ए0 शर्मा, पृ0सं0–544।*
5. *भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ – गुप्ता एवं ममता, पृ0सं0– 394*

शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों (Social Media) की भूमिका

दीपक कुमार शर्मा[1], शरद गंगवार[2]
[1]सहायक प्राध्यापक, बी.एड. विभाग
राजकीय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर
पूर्व छात्र (एम.एड.), बरेली कॉलेज, बरेली।

प्राचीन समय में मनुष्य की आवश्यकताएं सीमित थी जिस हेतु कम प्रयत्नों द्वारा ही मनुष्य इनकी पूर्ति कर लेता था परन्तु सभ्यता के विकास व सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप मनुष्य की आवश्यकताओं में वशद्धि होने लगी जिनकी पूर्ति हेतु मनुष्य को अधिक प्रयत्न करने पड़े परिणामस्वरूप समयाभाव के कारण वह समाज से दूर होता चला गया परन्तु मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः उसने समाज से सम्पर्क बनाये रखने हेतु वर्तमान विज्ञान व तकनीकी प्रधान युग में सामाजिक माध्यमों को अपनाया।

शिक्षा का क्षेत्र भी इन परिवर्तनों से अछूता नहीं है क्योकि शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। वर्तमान समय में शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु सामाजिक माध्यमों का प्रयोग किया जा रहा है। यद्यपि शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग से कुछ समस्याएं दृष्टिगत होती है परन्तु लाभ व सीमायें एक ही सिक्के के दो पहलू है। अतः आवश्यक है कि सुनियोजित नीति द्वारा इन समस्याओं का निराकरण करते हुए शिक्षा के क्षेत्र को सामाजिक माध्यमों के प्रयोग से प्रभावी व उद्देश्यपूर्ण बनाया जाये जिससे शिक्षा का प्रचार–प्रसार जन–जन तक हो सके तथा 'शिक्षित भारत–विकसित भारत' का सपना साकार हो सके।

प्रस्तुत शोध आलेख में शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग के लाभों व समस्याओं को इंगित किया गया है।

भूमिका

शिक्षा वह साधन है जो मानव को प्राणी जगत के अन्य जीवो से पश्थक करती है। शिक्षा मानव को एक सामाजिक प्राणी बनाकर सांस्कृतिक धरोहर को आगे आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरित करने के योग्य बनाती है। शिक्षा मानव के सर्वांगीण विकास में सहायक है। शिक्षा द्वारा मानव अपना जीवन सुखमय बनाकर सामाजिक जीवन में अपने कर्तव्य का पालन करते हुए राष्ट्र के विकास में अपना योगदान देता है। शिक्षा मानव को वातावरण के साथ अनुकूलन करने के योग्य बनाकर वातावरण में अपनी सुविधानुसार परिवर्तन करने की शक्ति प्रदान करती है। शिक्षा समाज में व्याप्त रूढ़िवादी विचारधाराओं, परम्पराओं एवं तौर–तरीकों में परिवर्तन हेतु

सर्वप्रमुख उपकरण के रूप में कार्य करती है तथा समाज में परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त करती है। इस प्रकार शिक्षा समाज की उन्नति के लिए एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में कार्य करती है।

शिक्षा व्यक्ति की जन्मजात शक्तियों के सर्वांगीण विकास में सहायक है जो उसके जन्म से लेकर मृत्यु तक निरंतर चलती रहती हैं। शिक्षा समाज की संस्कृति के संचरण, संरक्षण व उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा व्यक्ति विशेष को समाज से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है तथा समाज की संस्कृति की निरंतरता को बनाये रखती है। शिक्षा व्यक्ति की अन्तर्निहित क्षमता तथा उसके व्यक्तित्व का विकास करती है। शिक्षा बौद्धिक परम्पराओं और तकनीकी निपुणताओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संचरण हेतु धुरी का कार्य करती है। शिक्षा सभ्यता के दीपक को प्रदीप्त रखने में सहायक है। शिक्षा व्यक्ति का मार्गदर्शन करते हुए राष्ट्र के भाग्योदय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा उन भावी नागरिकों का निर्माण करती है जिनके ऊपर राष्ट्र का उत्थान निर्भर है। शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास कर चहुंमुखी प्रतिभाओं को उजागर करती है। इस प्रकार जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए शिक्षा एक शक्तिशाली साधन है।

नेल्सन मंडेला के अनुसार– ''शिक्षा वह शक्तिशाली साधन है जिसका उपयोग आप समाज में परिवर्तन के लिए कर सकते है।''

नेल्सन मंडेला ने शिक्षा को एक शक्तिशाली साधन की संज्ञा दी है। उनका कहना है कि यदि आप समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, कुप्रथाओं व कुरीतियों का निराकरण कर समाज में परिवर्तन करना चाहते हैं तो शिक्षा के माध्यम से आप समाज में परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त कर सकते है।

समाज

मनुष्य का समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध है तथा सामाजिक जीवन उसका स्वभाव है। अतः समाज मनुष्य में निहित है तथा मानव से ही समाज है।

विभिन्न व्यक्तियों द्वारा निर्मित समुदायों का सामूहिक रूप समाज कहलाता है जिसमे सभी व्यक्ति मानवीय क्रियाकलाप करते है। मानवीय क्रियाकलाप में आचरण, सामाजिक सुरक्षा तथा निर्वाह आदि की क्रियायें सम्मिलित होती है। इस प्रकार उस वश्हद समूह को समाज की संज्ञा दी जा सकती है जिसका निर्माण विभिन्न व्यक्तियों के समुदायों द्वारा होता है।

मैकाईवर के अनुसार– ''मनुष्य के आपसी स्वैच्छिक सम्बन्धों का नाम समाज है।''

मैकाईवर महोदय ने व्यक्ति द्वारा अन्य व्यक्तियों से स्थापित सामाजिक सम्बन्धों को समाज की संज्ञा दी है। उनके अनुसार व्यक्ति यह सम्बन्ध अपनी इच्छा से स्थापित करता है।

सामाजिक माध्यम

मनुष्य समाज के अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करते हुए अपना जीवन व्यतीत करता है परन्तु सामाजिक परिवर्तन व मानवीय आवश्यकताओं में वृद्धि के फलस्वरूप समयाभाव के कारण मनुष्य समाज से दूर होता जा रहा है तथा व्यक्तियों के आपसी सम्पर्क में कमी हो रही है परन्तु वर्तमान विज्ञान व तकनीकी प्रधान युग में सामाजिक माध्यमों ने व्यक्ति व समाज के मध्य उत्पन्न अन्तर की क्षतिपूर्ति करने का प्रयास किया है। इन्टरनेट के इस युग में सामाजिक माध्यमों का उपयोग कर मनुष्य अपने सामाजिक सम्बन्धों का निर्वहन कर रहा है।

सामाजिक माध्यमों से अभिप्राय उन माध्यमों से है जिनका प्रयोग व्यक्तियों द्वारा आभासी मंच पर परस्पर सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने हेतु किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक माध्यम व्यक्तियों को आभासी मंच प्रदान करता है जिस पर वे समाज के किसी भी व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित कर विचारों का आदान–प्रदान कर सकते है। सामाजिक माध्यमों के प्रयोग हेतु इन्टरनेट संयोजकता (Internet Connectivity) अनिवार्य है।

वर्तमान में पारस्परिक संवाद हेतु विभिन्न सामाजिक माध्यमों का प्रयोग किया जा रहा है, जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैः

फेसबुक, ट्विटर, व्हाट्सएप, टेलीग्राम, इंस्टाग्राम, यूट्यूब, हैंगआउट, वीचैट, स्नैपचैट, गूगल मीट, जूम, सिस्को वेबेक्स मीटिंग, जिओ मीट इत्यादि।

शिक्षा एवं सामाजिक माध्यम

वर्तमान विज्ञान व तकनीकी प्रधान युग में समाज के स्वरुप व मानव जीवन में नित्य नवीन परिवर्तन हो रहे है परिणामतः व्यक्ति समाज के अन्य व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करने हेतु सामाजिक माध्यमों का प्रयोग कर रहा है। शिक्षा का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है क्योकि शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु सामाजिक माध्यमों का अत्यधिक प्रयोग किया जा रहा है जिसमे वेबिनार, ई–संगोष्ठी, ई–सेमिनार, ई–कार्यशाला, ऑनलाइन प्राध्यापक विकास कार्यक्रम, ऑनलाइन व्याख्यान आदि उल्लेखनीय हैं जिनका आयोजन विभिन्न प्रकार के सामाजिक माध्यमों की सहायता से किया जा रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में प्रयुक्त सामाजिक माध्यम निम्न प्रकार हैः

गूगल मीट, गूगल क्लासरूम, जूम, सिस्को वेबेक्स मीटिंग, जिओ मीट, यूट्यूब, व्हाट्सएप, टेलीग्राम, फेसबुक आदि।

शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग के लाभ

सामाजिक माध्यमों ने शिक्षा के क्षेत्र को अनेक प्रकार से लाभान्वित किया है, अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इन लाभों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता हैः

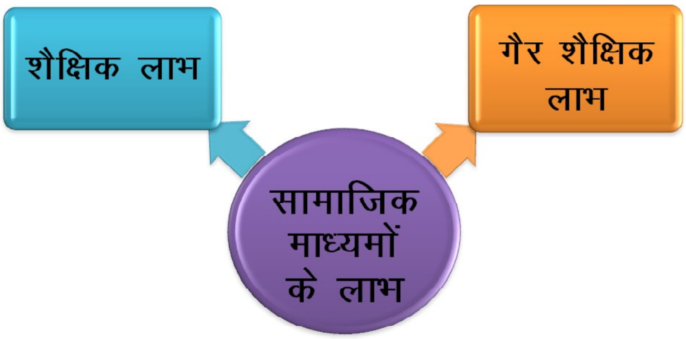

चित्र संख्या 1–शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग के लाभ

(अ) शैक्षिक लाभ :

(1) सामाजिक माध्यम शिक्षा के प्रचार–प्रसार में उन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जो क्षेत्र शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हैं तथा जहाँ शैक्षिक सुविधाओं का अभाव है।

(2) सामाजिक माध्यम अस्वस्थ शिक्षकों व विद्यार्थियों के लिए लाभकारी हैं। सामाजिक माध्यमों की सहायता से अस्वस्थ शिक्षक व विद्यार्थी स्वस्थ होने तक शिक्षण व अधिगम को अनवरत जारी रख सकते हैं।

(3) सामाजिक माध्यम शिक्षक वर्ग के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। एक शिक्षक सामाजिक माध्यमों की सहायता से अपने शिक्षण कार्य से विभिन्न विद्यार्थियों को लाभान्वित कर सकता है।

(4) वर्तमान विज्ञान व तकनीकी प्रधान युग में सामाजिक माध्यम विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन हेतु लाभकारी साधन हैं जिस हेतु प्रायः विद्यार्थियों को कोई शुल्क नहीं (निःशुल्क) अथवा नाममात्र का शुल्क देना पड़ता है।

(5) विभिन्न सामाजिक माध्यमों की सहायता से विद्यार्थियों को महत्वपूर्ण अध्ययन सामग्री उपलब्ध हो जाती है।

(6) सामाजिक माध्यम दिव्यांग (शारीरिक रूप से अक्षम) शिक्षकों व विद्यार्थियों के लिए लाभकारी हैं। सामाजिक माध्यमों की सहायता से दिव्यांग शिक्षक व विद्यार्थी क्रमशः शिक्षण व अधिगम को अनवरत जारी रख सकते हैं।

(ब) गैर शैक्षिक लाभ :

(1) विभिन्न राष्ट्रों के शैक्षिक क्षेत्र में संलग्न व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक मंच पर सामाजिक माध्यमों की सहायता से शैक्षिक विचारों का आदान–प्रदान करते हैं फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क व सहयोग में भी वृद्धि होती है।

(2) सामाजिक माध्यमों के प्रयोग हेतु तकनीकी उपकरणों का होना नितान्त आवश्यक है। वर्तमान विज्ञान व तकनीकी प्रधान युग में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग में वृद्धि होने से बाजार में तकनीकी उपकरणों की मांग में वश्द्धि होती है परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था को लाभ होता है।

शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग से उत्पन्न समस्याएं

शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग से उत्पन्न समस्याओं को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:

चित्र संख्या 2–शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोग से उत्पन्न समस्याएं

(अ) शैक्षिक समस्याएं

(1) विभिन्न सामाजिक माध्यमों से प्राप्त अध्ययन सामग्री की शुद्धता व विश्वसनीयता पर अभी भी एक प्रश्न चिह्न है।

(2) भारत की विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में अध्ययन सामग्री की अनुपलब्धता सामाजिक माध्यमों के उपयोग की एक प्रमुख समस्या है।

(3) शैक्षिक क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों का प्रयोग प्रायः अनुदेशन हेतु ही अधिक किया जा सकता है जबकि शिक्षा का क्षेत्र अनुदेशन से अधिक व्यापक है जिसमे प्रशिक्षण, प्रायोगिक कार्य आदि सम्मिलित है।

(4) शैक्षिक क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के प्रयोगकर्ताओं द्वारा विभिन्न तकनीकी साधनों का प्रयोग किया जाता है, यह तकनीकी साधन प्रयोगकर्ताओं के स्वास्थ्य (नेत्र, दृश्यता आदि) को प्रभावित करते हैं।

(ब) तकनीकी समस्याएं

(1) शैक्षिक क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के कुशल प्रयोग हेतु प्रयोगकर्ताओं के पास तकनीकी उपकरणों का होना नितान्त आवश्यक है परन्तु भारत में शिक्षकों व विद्यार्थियों के एक वर्ग के पास तकनीकी उपकरणों का अभाव है।

(2) शैक्षिक क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों के कुशल प्रयोग हेतु प्रयोगकर्ताओं के पास तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है परन्तु भारत में शिक्षकों व विद्यार्थियों के एक वर्ग के पास आधारभूत तकनीकी ज्ञान का अभाव है।

(3) अच्छा व तीव्र गति नेटवर्क सामाजिक माध्यमों के प्रभावी प्रयोग की अनिवार्य शर्त है परन्तु भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अच्छे व तीव्र गति नेटवर्क का अभाव है।

(4) सामाजिक माध्यमों के प्रयोग हेतु तकनीकी उपकरणों का प्रयोग किया जाता है, जिस हेतु निर्बाध विद्युत आपूर्ति अनिवार्य शर्त है परन्तु भारत में निर्बाध विद्युत आपूर्ति एक विकट समस्या है।

निष्कर्ष

''यदि आप किसी भी राष्ट्र को अवनति की ओर ले जाना चाहते है, आप उस राष्ट्र की शिक्षा व्यवस्था में सेंध लगा दीजिये वह राष्ट्र स्वतः ही अवनति की ओर चला जायेगा।'' उपरोक्त पंक्तियाँ किसी भी राष्ट्र के विकास में शिक्षा के महत्व को प्रदर्शित करती हैं। इस प्रकार शिक्षा किसी भी राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अतः इस हेतु आवश्यक है कि राष्ट्र में व्यापक स्तर पर शिक्षा का प्रचार–प्रसार किया जाये जिससे राष्ट्र के विकास का मार्ग प्रशस्त हो सके।

भारत में सामाजिक माध्यमों ने शिक्षा के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। यद्यपि भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में जहाँ जनसँख्या के एक वर्ग के पास तकनीकी उपकरणों का अभाव है परन्तु फिर भी शैक्षिक क्षेत्र में सामाजिक माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

सन्दर्भ

1. *सिंह, डॉ. प्रदीप एवं कुमार, डॉ. विनोद (2021) ''समकालीन भारत और शिक्षा'' आर. लाल बुक डिपो, मेरठ*
2. *शर्मा, शिल्पी, वार्ष्णेय, संध्या, मिश्रा, सुधीर कुमार (2021) ''शिक्षा में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी'' आर. लाल बुक डिपो, मेरठ*
3. *शर्मा, आर. ए. (2021) ''शिक्षा के तकनीकी आधार'' आर. लाल बुक डिपो, मेरठ*
4. *जैन, सत्येंद्र (2021) ''विद्या प्रश्न बैंक–शिक्षाशास्त्र'' विद्या प्रकाशन मंदिर, मेरठ*
5. *जैन, सत्येंद्र (2021) ''विद्या प्रश्न बैंक–समाजशास्त्र'' विद्या प्रकाशन मंदिर, मेरठ*
6. *अमर उजाला (2022) ''सम्पादकीय पृष्ठ''*
7. *www.hi.wikipedia.org*
8. *www.kailasheducation.com*
9. *www.politicalinhindi.blogspot.com*

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों एवं मानवीय मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. रोहित कुमार
असिस्टेंट प्राफेसर, शिक्षा
भगवान आदिनाथ कॉलेज ऑफ एजूकेशन।

महात्मा गाँधी के अनुसार – "शिक्षा से मेरा अभिप्राय है बच्चे के अन्दर निहित शरीर, मन और आत्मा का सर्वाङ्गीण व सर्वोत्तम विकास करना। किसी भी देश का विकास उसकी शिक्षा पर निर्भर करता है। शिक्षा अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाती है। शिक्षा से मनुष्य के अन्तः चक्षु खुल जाते है। शैक्षिक उपलब्धि और मानवीय मूल्यो का माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रो के अध्ययन के लिए ललितपुर जिले एवं उसके तीन विकास खण्डों ललितपुर, जखौरा,महरौनी के राजकीय एवं गैर सरकारी शिक्षण संस्थानो को 100–100 छात्रों को लिया गया हैं। माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र छात्रों, नैतिक मूल्यों का मध्यमान क्रमशः 11.51 व 10.50 तथा मानक विचलन क्रमशः 1.90 व 2.30 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 3.352 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 20.88 व 29.19 तथा मानक विचलन क्रमशः 4. 08 व 3.23 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 15.85 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है।

प्रस्तावना

किसी भी देश का विकास उसकी शिक्षा पर निर्भर करता है। शिक्षा अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाती है। शिक्षा से मनुष्य के अन्तः चक्षु खुल जाते है। उसे आत्मिक तथा आलौकिक प्रकाश मिलती है। शिक्षा से सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है। किसी भी राष्ट्र या समाज में जो उन्नति परिलक्षित होती है, वह उस राष्ट्र अथवा समाज की शिक्षा का प्रतिफल है तथा किसी समाज या राष्ट्र को अद्योगति में जाना अशिक्षा का द्योतक है। शिक्षा वह साधन है जिसके बिना जीवन अधूरा सा प्रतीत होता है। इसके द्वारा ही किसी देश की उन्नति संभव है। शिक्षा एक नये और उज्ज्वल समाज के विकास का आधार है। शिक्षा के माध्यम से ही बालक में पवित्र भावनाओं, संस्कारों, नैतिकता और भावी सुविचारों को जन्म देता है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास करना है अर्थात् शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास से है। शिक्षा मनुष्य को प्रत्येक परिस्थिति में तर्क–वितर्क के आधार पर सुलझाने का ज्ञान प्रदान करती है।

प्राणी का जन्मजात स्वभाव होता है कि वह वातावरण में होने वाली पारस्परिक क्रियाओं का निरीक्षण करता है तथा उन्हीं व्यवहारों को ग्रहण करने की कोशिश करता है। परिवार का स्थान इसमें सर्वोपरि है। मुख्यतः वह परिवार के सदस्यों के व्यवहारों से अधिक सीखता है। बालक को जो पारिवारिक वातावरण उपलब्ध होता है, उसका प्रभाव उसके व्यक्तित्व गुण, मूल्य तथा शैक्षिक उपलब्धि आदि पर पड़ता है। अधिकांशतः बालकों में यह देखा गया है कि उनकी योग्यताएँ स्वतन्त्र पारिवारिक वातावरण पर निर्भर करती है तथा बालकों में अच्छी आदतों का विकास स्वस्थ पारिवारिक वातावरण पर ही निर्भर करता है। किसी भी बालक का अधिकांश समय अपने परिवार के सदस्यों के मध्य व्यतीत होता है। इसी कारण उनके बीच होने वाली पारस्परिक क्रिया—कलापों एवं व्यवहारों का स्पष्ट प्रभाव उनके व्यक्तित्व तथा मूल्यों आदि पर परिलक्षित होता है। बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में माता—पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों का बहुत महत्व है। यदि अभिभावक बालक की व्यक्तिगत विभिन्नताओं, योग्यताओं तथा इच्छाओं आदि पर उचित ध्यान नहीं देते हैं तो बालक शिक्षा के क्षेत्र के साथ—साथ जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी पिछड़ जाता है। परिवार के पश्चात् विद्यालयों के वातावरण पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। विद्यालयों का वातावरण चाहे शैक्षणिक हो अथवा सह—शैक्षणिक, उसमें छात्रों की मानसिकता उनकी इच्छाओं, सहज आकांक्षाओं को पूरा करते हुए यदि विद्यालय संचालित किये जाये, में नवीन उत्साह दिखाई देता है। जो छात्रों एवं विद्यालयों के लिये भी उपयुक्त है। इसलिये शिक्षण कार्य एवं सह—शैक्षणिक गतिविधियों का संतुलन उत्तम होना चाहिये। जिससे छात्र स्वयं के चहुँमुखी विकास के क्षेत्र में श्रेष्ठ अनुभव करें। चूंकि आज का बालक ही राष्ट्र के भविष्य का निर्माता है। अतः अगर हम अच्छे चरित्रवान, कर्मठ, उत्साही, लगनशील, सकारात्मक अभिवृत्ति तथा आदर्श जीवन मूल्यों वाले नागरिक चाहते है तो बालक को ऐसा वातावरण उपलब्ध कराया जाए जिसमें रहकर बालक की सम्पूर्ण अभिक्षमताओं का पूर्ण रूप से विकास संभव हो सके।

शोध अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व

किसी भी देश का विकास वहाँ की शिक्षा पर निर्भर करता है। उसके नागरिक कैसे है? इस पर देश का भविष्य निर्भर करता है। आज के प्रतियोगी संसार में यह जरूरी है कि प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित हो। उत्तर प्रदेश के ललितपुर जनपद में शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के लोगों में सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि पर बड़ी असमानताएँ स्पष्ट से देखी जा सकती है विशेषतौर पर शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की जीवन शैली, सामाजिक स्तर एवं आर्थिक तथा शैक्षणिक स्तर पर। इन असमानताओं से शहरी तथा ग्रामीण विद्यार्थियों के बीच बढ़ती खाई को पाटने के लिये वर्तमान में इस प्रकार के शोध की आवश्यकता है जिससे वे कारण ज्ञात हो सके, जिनके माध्यम से यह जानकारी प्राप्त की जा सके कि शहरी एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में कैसे सार्थक प्रयास किये जाये कि बालकों का सम्पूर्ण विकास हो सके। इस शोध की वर्तमान में आवश्यकता

शिक्षा में परिवर्तन, शिक्षण में प्रयुक्त तकनीकि का विकास की दृष्टि से भी आवश्यक है ताकि इस प्रकार की शिक्षा नीति का निर्माण हो सके जो हम सबको भी विकास भी मुख्य धारा से जोड़ सके।

समस्या कथन

शोधकर्त्ता ने अपने शोध "माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों मानवीय मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन" के विषय का चयन किया।

पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या

1. माध्यमिक स्तर – प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त माध्यमिक स्तर से तात्पर्य अराजकीय (गैर सरकारी सहायता प्राप्त) एवं राजकीय (सरकारी) माध्यमिक विद्यालयों से है तथा विद्यार्थियों में कक्षा 9 एवं 10वीं में अध्ययनरत से है।

2. ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थी – प्रस्तुत शोध में ग्रामीण विद्यार्थियों से तात्पर्य उन विद्यार्थियों से है जो ग्रामीण क्षेत्र में स्थित अराजकीय एवं राजकीय माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा 9 व 10वीं में अध्ययनरत है। शहरी विद्यार्थियों से तात्पर्य उन विद्यार्थियों से है जो शहरी क्षेत्र में स्थित अराजकीय एवं राजकीय माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा 9 व 10वीं में अध्ययनरत है।

मानवीय मूल्य – प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित चार मूल्यों को ही सम्मिलित किया गया है :–

1. ईमानदारी 2. विनम्रता 3. मानवता 4. गंभीरता

शैक्षिक उपलब्धि – शिक्षा एक सौद्देश्य प्रक्रिया है। शिक्षा प्रक्रिया के द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार में कुछ पूर्व निर्धारित संशोधन करने का प्रयास किया जाता है। शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य इन शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति से है। शैक्षिक उपलब्धि शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है। शैक्षिक तथा उपलब्धि अर्थात् विद्यालय से सम्बन्धित शैक्षिक अनुभवों के परिणाम स्वरूप विद्यार्थियों में होने वाले व्यवहार परिवर्तन को ही शैक्षिक उपलब्धि कहा जाता है।

शोध अध्ययन उद्देश्य

समस्या के अध्ययन के लिये शोधकर्त्ता द्वारा निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये :–

(1) माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों के मानवीय मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(2) माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि की तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ

(1) माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के छात्रों के मानवीय मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

(2) माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

न्यादर्श: "जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले अनुपात को ही न्यादर्श कहते है।"

न्यादर्श अनुसंधान की आधारशीला है। यह आधारशीला जितनी सुदृढ़ होगी अनुसंधान के परिणाम उतने ही विशुद्ध एवं विश्सनीय होंगे। शोधकर्त्ता ने अपने शोध कार्यहेतु उपकरणों का प्रशासन किसी निश्चित समूह पर अध्ययन के लिये करता है। सम्पूर्ण समष्टि पर मूल्यांकन समय एवं लागत की कठिनाइयों के फलस्वरूप न्यादर्श का चयन किया जाता है। न्यादर्श तभी उपयुक्त माना जा सकता है, जब वह सम्पूर्ण समष्टि का सही सही प्रतिनिधित्व करें।

छात्र	छात्रा	कुल विद्यार्थी
100	100	200

1. विकास खण्डों का चयन सोद्देश्य न्यादर्श चयन विधि से किया गया है।
2. कक्षाओं का चयन सोद्देश्य न्यादर्श विधि से किया गया।
3. माध्यमिक विद्यालयों का चयन याद्देच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया है।
4. विद्यार्थियों का चयन सोद्देश्य न्यादर्श विधि से किया गया।

शोध समस्या की परिसीमाएँ

समय एवं अध्ययन की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध अध्ययन में अद्योलिखित तथ्य ध्यान में रखे गये?

(1) प्रस्तुत शोध अध्ययन में उत्तर प्रदेश के ललितपुर माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 9वीं तथा 10वीं के विद्यार्थियों को लिया गया।

(2) प्रस्तुत शोध अध्ययन में राजकीय व अराजकीय तथा सहायता प्राप्त ग्रामीण शहरी क्षेत्रों में अध्ययनरत विद्यार्थियों को लिया गया।

शोध अययन में प्रयुक्त विधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन में आदर्शमूलक सर्वेक्षण विधि को काम में लिया गया है चूंकि यह विधि शोध की एक प्राचीन विधि है। इसका सम्बन्ध वर्तमान में उपस्थित संस्थितियों अथवा प्रचलित व्यवहारों से है। यह वर्तमान शैक्षिक समस्याओं को हमारे समक्ष प्रस्तुत करती है तथा इन्हें हल करने की ओर संकेत करती है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोध अध्ययन में "माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि, व्यक्तित्व गुणों एवं मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना है।"

शोध में दो प्रकार के उपकरण प्रयुक्त किये जाते है (1) मानकीकृत उपकरण (2) स्व–निर्मित उपकरण।

1. मानवीय मूल्य प्रमापनी

विद्या प्रकाषन जबलपुर द्वारा निर्मित (मानकीकृत)

2. शैक्षिक उपलब्धि – प्रश्नावली (स्वनिर्मित)

शोध में प्रयुक्त सांख्यिकी

शोधकर्त्ता ने प्रस्तुत शोध अध्ययन में निम्नलिखित सांख्यिकी का उपयोग किया गया।

1. प्रतिशत (%)
2. माध्य / मध्यमान = Mean $M = \frac{\sum x}{N}$
3. मानक विचलन = S.D. $\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2}{N}}$
4. मानक त्रुटि (S.E) = $\sqrt{\frac{SD}{N}}$
5. "टी" मूल्य $t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\frac{(SD_1)^2}{N_1} + \frac{(SD_2)^2}{N_2}}}$

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन

1. गुप्ता, नरेन्द्र कुमार (2017) "डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री प्रशिक्षणार्थियों पर नैतिक मूल्यों एवं बुद्धिलब्धि के प्रति जागरूकता का अध्ययन"। पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज॰)

उद्देश्य

(1) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन प्रशिक्षणार्थियों की नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता की वस्तुस्थिति ज्ञात करना।

(2) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन प्रशिक्षणार्थियों की बुद्धिलब्धि की वस्तुस्थिति ज्ञात करना।

(3) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन (पुरूष–महिला) प्रशिक्षणार्थियों की नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता की तुलना करना।

(4) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन (पुरूष–महिला) प्रशिक्षणार्थियों की बुद्धिलब्धि का तुलना अध्ययन करना।

(5) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन प्रशिक्षणार्थियों के नैतिक मूल्यों एवं बुद्धिलब्धि के बीच सह–सम्बन्ध ज्ञात करना।

शोध निष्कर्ष

(1) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन प्रशिक्षणार्थियों की नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता (पुरूष–महिला) समेकित रूप से देखी जाये तो सर्वाधिक सेवाभावना, शिष्टाचार, घटकों के प्रति विशेष जागरूकता पायी गयी तथा ईमानदारी, सर्वधर्म समभाव के प्रति जागरूकता कम पायी गई। शेष घटकों में जागरूकता लगभग समान पायी गयी।

(2) समेकित रूप से देखा जाय तो "टी" का मान 2.275 प्राप्त हुआ जो कि "टी" के सारणी मूल्य 0.05 सार्थकता स्तर पर तो 1.97 से अधिक है किन्तु 0.01 सार्थकता स्तर पर 2. 60 से कम है। अतः अन्तर सार्थक नहीं कहा जा सकता है अर्थात् परिकल्पना सं॰ 1 को स्वीकृत किया जाता है।

(3) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन में अध्ययनरत (पुरूष–महिला) प्रशिक्षणार्थियों की बुद्धिलब्धि 36.5 प्रतिशत उच्च स्तर की पायी गयी तथा 27.5 प्रतिशत प्रशिक्षणार्थियों की बुद्धिलब्धि सामान्य से ऊपर स्तर की पायी गयी। जबकि 6.00 प्रतिशत प्रशिक्षणार्थियों की बुद्धिलब्धि का स्तर सामान्य पाया गया।

(4) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन (पुरूष–महिला) प्रशिक्षणार्थियों के नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता में नगण्य धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया गया।

(5) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन (पुरूष–महिला) प्रशिक्षणार्थियों के बुद्धिलब्धि के बीच निम्न धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया गया।

(6) डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री ऐजूकेशन (पुरूष–महिला) प्रशिक्षणार्थियों के नैतिक मूल्यों एवं बुद्धिलब्धि के बीच मध्यम धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया गया। अतः परिकल्पना सं॰ 3 को अस्वीकृत किया जाता है।

2. Kumar Anil (2015) : "A critical study of the effectiveness of English curriculum for secondary schools of Kerala to develop moral maturity among the learners": University of Calicult (Ph.D.)

Objective

1. To critically analyze the content of secondary school English curriculum for Kerala for the identification of values inherent in it.
2. To critically analyze the level of teachers awareness of the values inherent in the content of the secondary school English curriculum.
3. To critically analyze the instructional activities used for transacting secondary school English curriculum to develop "Moral Maturity".
4. To identify the level of Moral Maturity of Secondary School Pupils.

Findings

1. While the instructional methods followed by the English teachers are considered, again the level of 'ideal' activities falls into an even lower level.
2. The level of Moral Maturity of the secondary schools pupils is on the lower side. It is below 35 per cent.
3. It is much relieving to find out that the content of the English curriculum is a reservoir of values, which is the primary requisite for the indirect approach to value Education.

3. Sharma, Rajesh (2015) : "Study of Secondary, School Teacher morale with reference to different variables". University : Gujarat University)Ph.D)

Objectives

1. To identify and study the morale of teacher of secondary schools.
2. To study the effect of family related variables on teacher moral of secondary school.
3. To study the effect of school related variables on teacher moral of secondary schools.
4. To study the effect of personal related variables on teacher moral of secondary schools.
5. To study the effect of interaction of various variables on teacher moral of secondary schools.

Findings

(a) Family Related Variables

1. There is no significant effect of family related type of family" variable on teacher moral of secondary school teachers.
2. There is no significant effect of family related "caste & "Marital status" variable on teacher moral of secondary school teachers".

(b) Personal Related Variables

1. There is no significant effect of Personal related "Gender", qualification & age, variable on teacher moral of secondary school teachers.
2. There is no significant mean difference between the teacher morale of ("Male" and "Female") and ("Graduate & Master") (above 35 years of age and below 35 years of age) teacher of secondary school.

(c) School Related Variables

1. There is no significant of school related "nature of school" and "Experience" and "Type of school" variable on teacher moral of secondary school teachers.

4. Sharma Chetna (2015) : "A study on attitude of secondary school students towards moral values." Shri Jagdish Prasad Jhabarmal Tibarewala University Jhunjhunu, Rajasthan (Ph.D.)

Objects

1. To check attitude of Rural govt. and private school boys towards moral values.
2. To check attitude of urban govt. and Private school boys towards moral values.
3. To verify the attitude of Rural and Urban school boys towards moral values.
4. To study the attitude of urban and rural school girls towards moral values.

Findings

1. There was no significant difference between rural government and private boys attitude towards moral values.
2. There was no significant difference between rural school boys and urban school boys towards moral values.

3. There was no significant difference between private school girls and govt. secondary school boys attitude towards moral values.
4. There was be no significant difference between rural school girls and urban school boys towards moral values.

5. Vanaja, M. (2013) : "Emotional maturity, social maturity & moral judgment of the student teachers of Guntur district" Acharya Nagarjuna University Nagarjuna Nagar, Guntur, A.P. (Ph.D.)

Objective

1. To construct a moral judgment questionnaire for the student teachers.
2. To find out the over all scores of emotional maturity, social maturity and moral judgment of the student teachers.
3. To classify the student teachers based on their emotional maturity, social maturity and moral judgment.

Findings

1. Gender of the student teacher is influencing their emotional maturity, social maturity and moral judgement.
2. Age of the student teachers is influencing their emotional maturity but not their social maturity and moral judgement.
3. Location of the student teachers is not casting its impact on student teachers emotional maturity, social maturity or moral judgement.
4. Emotional maturity of the student teachers is dependent on their marital status but social maturity and moral judgment are not.

6. Robert Thomberg and Ebru Og42 (2013) : "Teachers views on values Education; A qualitative study in Swedan and Turkey" (L.U.L. Sweden, Turkey).

Research aims

The aim of the current study was to Examine Swedish and Turkish teachers, perspectives on values Educations. Sweden and Turkey are both European Countries with a Secular School System. However Sweden is located in the northern part of Europe and has a Christian cultural history. Turkey is located in the southeast of Europe and with a Muslim cultural background. Consequently we found, it of interest to conduct the study in both countries.

1. What values of teachers consider important to teach or focus upon in their practice of values Education?

2. How do teacher's describe their practice of values Education?
3. What do teachers refer to us the basis for their choices of values and methods in their practice of values education?

Results

In both the Swedish and the Turkish interview data, when teachers reported values they viewed as important for their students learn. They mostly described what could be called relational values, that is valves about how to treat others, such as showing other people respect, being kind and nice to others, showing empathy, treating others fairly or justly, and not harassing or harming others.

The second most common set of values that the teacher's as important valves to teach their students were self responsibility valves, such as taking responsibility for yourself and your actions, honestly, doing your best in every situation self awareness, self discipline self control and following rules.

2. शैक्षिक उपलब्धि पर किये गये शोध अध्ययन

प्रहलाद राय (2016) ग्रामीण एवं शहरी महाविद्यालयी छात्र–छात्राओं की सामान्य मानसिक योग्यता का अध्ययन किया।" इन्होंने अपने शोध अध्ययन में पाया कि शहरी छात्र–छात्राओं की आकांक्षाओं में सार्थक अन्तर है, जबकि ग्रामीण छात्र–छात्राओं की आकांक्षाओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

श्रीमती लिलेश्वरी साहू (2016) "ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षिक आकांक्षाओं का अध्ययन किया।" इन्होंने अपने शोध अध्ययन में पाया कि ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक आकांक्षाओं में सार्थक अन्तर है।

देवराज शुक्ला (2015) "ग्रामीण एवं शहरी हाईस्कूल के विद्यार्थियों की बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया। इन्होंने अपने शोध अध्ययन में पाया कि ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के गणित, विज्ञान, अंग्रेजी विषयों के प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर पाया गया। जबकि हिन्दी कला तथा सामाजिक विज्ञान के विषयों के प्राप्तांकों में समानता पायी गई तथा ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की बौद्धिक योग्यता सन्तोषप्रद है।

Singh and Praveen (2010): The relationship of social maturity with Academic Achievement of High School Studnets". इन्होंने अपने शोध अध्ययन में कक्षा 10वीं के 100 छात्रों ग्रामीण एवं 100 शहरी छात्रो को लिया गया।

इन्होंने अपने शोध अध्ययन में पाया कि छात्रों एवे छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, साथ ही इन्होंने पाया कि ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

H.D. Gurbasappa (2009): Intelligency and self concept of academic achievement of secondary school students". इन्होंने अपने शोध अध्ययन में 400 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया और पाया कि बुद्धिमत्ता और शैक्षिक उपलब्धि की आत्म अवधारणाओं में उच्च सार्थक अन्तर है।

शोध विधि, प्रविधि एवं उपकरण– प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्त्ता ने आदर्शमूलक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया है।

मानवीय मूल्य परीक्षण– एल॰एन॰दुबे (विद्या भारतीय प्रकाशन)

शैक्षिक उपलब्धि–शैक्षिक उपलब्धि प्रश्नावली

दत्त संकलन सारणीयन, विश्लेषण एवं व्याख्या–

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के छात्रों के मानवीय मूल्यों का मध्यमान–मानक विचलन

क्र॰सं॰	वर्ग	N	मध्यमान	मानक विचलन	"T" मूल्य	वि॰वि॰
1.	ग्रामीण	100	11.51	1.90	3.352	अन्तर सार्थक है।
2.	शहरी	100	10.50	2.30		

198 डिग्री स्वतन्त्रता के अंश पर

T का सारणी मूल्य 0.05 स्तर पर = 1.97

0.01 स्तर पर = 2.60

व्याख्या

उपर्युक्त सारणी को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र छात्रों नैतिक मूल्यों का मध्यमान क्रमशः 11.51 व 10.50 तथा मानक विचलन क्रमशः 1.90 व 2.30 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 3.352 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं॰1 को अस्वीकृत किया जाता है।

शैक्षिक उपलब्धि

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों का शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान–मानक विचलन की तुलना

क्र॰ सं॰	वर्ग	N	मध्यमान	मानक विचलन	"T" मूल्य	वि॰वि॰
1.	ग्रामीण छात्रों	100	19.61	3.62	14.365	अन्तर सार्थक है।
2.	शहरी छात्रों	100	27.86	4.46		

198 डिग्री स्वतन्त्रता के अंश पर "T" का

T का सारणी मूल्य 0.05 स्तर पर = 1.97

0.01 स्तर पर = 2.60

व्याख्या

उपर्युक्त सारणी को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की छात्रों के शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 19.61 व 27.86 तथा मानक विचलन क्रमशः 3.62 व 4.46 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 14.365 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं॰ 2 को अस्वीकृत किया जाता है।

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान–मानक विचलन की तुलना

क्र॰सं॰	वर्ग	N	मध्यमान	मानक विचलन	"T" मूल्य	वि॰वि॰
1.	ग्रामीण छात्राओं	100	20.88	4.08	15.85	अन्तर सार्थक है।
2.	शहरी छात्राओं	100	29.19	3.23		

198 डिग्री स्वतन्त्रता के अंश पर "T" का

T का सारणी मूल्य 0.05 स्तर पर = 1.97

0.01 स्तर पर = 2.60

व्याख्या

उपर्युक्त सारणी को देखने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 20.88 व 29.19 तथा मानक विचलन क्रमशः 4.08 व 3.23 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 15.85 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं॰ 2 को अस्वीकृत किया जाता है।

निष्कर्ष

1. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र छात्रों नैतिक मूल्यों का मध्यमान क्रमशः 11.51 व 10.50 तथा मानक विचलन क्रमशः 1.90 व 2.30 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 3.352 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं॰1 को अस्वीकृत किया जाता है।
2. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 20.88 व 29.19 तथा मानक विचलन क्रमशः 4.08 व 3. 23 प्राप्त हुआ। "टी" का मान 15.85 आया। जो "टी" के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं॰ 2 को अस्वीकृत किया जाता है।

सन्दर्भ

1. *भट्नार, सुरेश : शिक्षा मनोविज्ञान" प्रकाशकइन्टरनेशनल पब्लिशिंग, बेगम ब्रिज रोड़, निकट गवर्नमेन्ट, कॉलेज, मुद्रक एफीशियेन्ट प्रिन्टर्स, नई दिल्ली।*
2. *मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, न्यू देहली : दि रिपोर्ट दि एजूकेशन कमीशन, 1964–66*
3. *महेश, भार्गव : "आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन", हर प्रसाद भार्गव 4/230, कचहरी घाट, आगरा, 1990*
4. *माथुर, एस॰एस॰ :"शिक्षा मनोविज्ञान" 1991, आगरा पुस्तक मन्दिर।*
5. *Best, John W. (1964) : "Element of Educational Research", USA, Pretice Hall Inc. Eagleood Cliff.*
6. *Borg Walter (1983) : "Educational Research an Introduction" New York Longmans, Green of Col. Ltd.*
7. *Buch, M.B. (1978-83) : Third Survey of Research in Education" New Delhi (NCERT)*

8. *Buch, M.B. (1983-88) : Fourth Survey of Research in Education" New Delhi (NCERT)*
9. *Buch, M.B. (1988-93) : Fifth Survey of Research in Education" New Delhi (NCERT)*
10. *Buch, M.B. (1993-98) : Sixth Survey of Research in Education" New Delhi (NCERT)*
11. *P.Usha (2007)"Emotional Adjustment and family acceptance of the child, Corelated for Achievement" Vol. 6 No. 1 Hydrabad, June 2007] pp. 25-27.*
12. *S.S.Bamman and S.S. Ksheersagar (2008) : "Self concept and academic achievement among students" Indian Journal of Psychometry and Edcuation,", Vol. 38, No. 1, Patna 2008.*
13. *Pushplata, B., Dhanda and C.K. Singh (2009) : "Comparative study of Intellectual Ablities of Rural and Urban Prescholars", Indian Psychological Review Vol. 72, No. 1, Agra.*
14. *H.D. Gurubasappa (2009) : "Intelligency and Self concept of Academic achievement of secodnary school student", Edutraces Vol. 8, No. 10, Hydrabad June 2009.*
15. *Naresh , Neeraj (2015) : माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के व्यक्तित्व गुणों, आत्म प्रत्यय, मूल्यों एवं शैक्षिक उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन" ।*
16. *Singh Arun Kumar (2013) : "Research Method inh Psychology and Education", Motilal Bansarsidas Jawahar Road, New Delhi.*
17. *Pathak, P.D. (2014) : "Educational Psychology" Shri Vinod Pustak Mandi, Agra.*
18. *Rai, Parasnath (2014) : "An Introduction to research method to spychology sociology and Education, Laxmi Narayan Agrawal Publication, Agra.*
19. *Mrs. Suneeta Singh : (2012) : "A Comparative study of personality of the Rural and Urban Girl Students", Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal Vol., 03, Issue - II, November 2012.*
20. *Najmah Peerzada (2014) :"A comparative study on personality characteristics of rural and urban adolescents of district Anantnag and Srinagar (J&K), India Journal of Education Research and Behavioral Sciences, Vol. 3(4), pp. 081-086, April, 2014.*
21. *Shodhganga, inflibnet.ac.in*
22. *www.google.co.in*
23. *भार्गव, महेश चन्द्र (1984) "आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन", हर प्रसाद भार्गव, आगरा*
24. *गेरिट, हेनरी, ई॰ (1996) "शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग" कल्याणजी पब्लिशर्स लुधियाना*
25. *Good, C.V. ; Bar, A.S. and Seatter, D.E. (1962) : "The methodology of Educational Research" Appleton Century Crofts Inc. New York.*
26. *कपिल, एच॰के॰ (1981) : "अनुसंधान विधियाँ" हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशन आगरा*
27. *रूहेला, प्रो॰एस॰पी॰ (2009) "विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा" विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2*

मूल्यों के विविध आयाम; ISBN: 978-93-93248-08-4

आजादी के समर में आधुनिक शिक्षा का योगदान

सचिन कुमार
असि. प्रोफेसर, इतिहास विभाग
डी. ए. वी. कॉलेज,मुजफ्फरनगर।

शिक्षा मानव जीवन में एक शस्त्र की भांति होती है। जिस प्रकार कोई योद्धा शस्त्र धरण करने के पश्चात अपने आपको गौरवान्वित और आतम्निर्भर महसूस करता है, उसी प्रकार एक सामान्य मानव भी शिक्षित होने के पश्चात अपने आपको गौरवान्वित समझता है, इसके अतिरिक्त वह अपने अधिकारो और कर्तव्यो के प्रति भी जागरूक हो जाता है, अंग्रेजो ने जो शिक्षा प्रणाली मैकाले के समय आरंभ की थी। उसका उद्देस्य था केवल अंग्रेजी माधायम से कुछ भारतीयो को पढ़ाना जो उनके लिए एक दूभासिया कार्यकर सकें। प्रारम्भ में अंग्रेजो ने कुछ योजना बनाई जैसे –1854का (wood dispatch),1882 का हंटर आयोग आदि।

लेकिन अंग्रेजो के ये प्रयोग आधिक सफल नहीं हो सके। शिक्षा का जैसे – जैसे प्रसार हुआ लोगो में राष्ट्रवाद की भावना जागने लगी। अब भारतीय जनमानस अपने विचारो का आदान –प्रदान भी करने लगा। साहित्य का निर्माण अनेकों रूपों से किया जाने लगा जैसे–

1. समाचार पत्रों का प्रकाशन
2. उपन्यास लेखन
3. पत्रिकाओ का सर्जन

इसके अतिरिक्त कुछ क्रांतिकारी साहित्य का भी लेखन हुआ, जिसे पढ़कर तत्कालीन समय के नौजवान क्रांति की राह पर चल पड़े और हमें आजादी दिलाई।

त्रिलोचन की कविता और मानवीय मूल्य

सच्चिदानन्द पाण्डेय
शोधार्थी
राजकीय रजा स्नातकोत्तर म. विद्यालय, रामपुर।

प्रगतिशील जीवन मूल्यों और जनवादी सरोकारों के कारण त्रिलोचन हिन्दी साहित्य में एक ऐसे विशिष्ट कवि के रूप में अपनी पहचान निर्मित करते हैं जिसकी समूचीकाव्य संवेदना मानवीय मूल्यों पर ही आधारित है। वे ऐसे मानवीय मूल्यों के पक्षधर हैं जो शाश्वत है और जिनके बिना मानव का अस्तित्त्व और मानवीय अस्मिता की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। उनके काव्य में एक ओर ग्राम्य जीवन के प्रति असीम अनुराग से जनित करुणा है तो दूसरी ओर जनसामान्य के हर्ष–विषाद से निरन्तर साह्चर्य जनित प्रेमानुभूति। कहीं प्रकृति के रंगो से दीप्त सतरंगी कविताओं का सहज प्रवाह है तो कहीं अन्तर्मन के कालुष्य को धुलकर रससिक्त करने वाली आदिम मानवीय श्रृंगार की स्वाभाविक अभिव्यक्तियाँ। त्रिलोचन की कविता नितान्त बुद्धि–विलास की कटूक्तियाँ नहीं बल्कि वे तो मानवीय मूल्यों की ऐसी अभिव्यक्तियाँ है जो 'मन के करघों पर रेशम के भाव' बुनती हैं और अपनी स्वाभाविक सरलता से जन जन के अन्तर्मन को दीपित करती रहती हैं–

''कविता के चेहरे पर जो पाउडर उधार का लगा हुआ था भद्दा था,
वह कलंक धो दिया, सहज मैंने बना दिया
कविता को–उसका स्वाभाविक सरल उजाला
दिपता है आँखों में खुबता है, जना दिया
जो जानना सभी को था, पहना दी माला
सीधे सादे सुर में उर के गान सुनाए
मन के करघों पर रेशम के भाव बुनाए।''[1]

मन के करघों पर रेशम के भाव बुनना सब के सामर्थ्य की बात नहीं यह वही कवि संभव कर सकता है जिसे जनजीवन की अनेकानेक गतिविधियों की गहरी समझ हो, जो जनता की नब्ज़ को उसके जीवन की हलचलों तथा ध्वनियों को गहरे स्तरों से पहचानता हो। त्रिलोचन के शब्दों में कहें तो जिसका जनता के जीवन से प्रत्यक्ष जुड़ाव हो, आत्मीयता हो। स्वयं त्रिलोचन की कविता अपने जनवादी जुड़ावों और आत्मीयता की बुनियाद पर मानवीय मूल्यों से सम्पृक्त होकर ही आगामी मनुष्यता का निर्माण करने सें सक्षम होती है। उनकी कविताओं की विषयवस्तु

अयथार्थ जीवन संदर्भों पर आधारित नहीं, बल्कि वह प्रत्यक्ष जीवन और वास्तविक जीवनानुभूति पर आधारित है उनके कविता प्रत्यक्ष अनुभवाश्रित है, यथार्थ जन्य है—

''मैंने उनके लिए लिखा है जिन्हें जानता हूँ/
जीवन के लिए लगाकर अपनी बाजी
जूझ रहे हैं जो फेंके टुकड़ों पर राजी
कभी नहीं हो सकते हैं/ मैं उन्हें मानता हूँ आगामी
मनुष्यताओं का निर्माता।''[2]

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने उनकी कविताओं में इसी शाश्वत् मूल्यों की पहचान कर उन्हें सच्चे अर्थों में मानवीय राग का कवि कहा है उनके शब्दों में—''त्रिलोचन क्रान्ति, विद्रोह, क्षोभ आक्रोश या उत्तेजना के कवि नहीं हैं। वे मूलतः राग के कवि हैं। इस लोक के सौन्दर्य में उनका गहरा लगाव है। वस्तुतः त्रिलोचन भारतीय लोकजीवन की पहचान कराने वाले ऐसे कवि हैं जो अपने समकालीन के बीच स्वयं अपनी भी अलग पहचान कराते हैं। अपने समकालीनों की भीड़ में जैसे उनका व्यक्तित्व अलग है वैसे ही उनकी कविता का भी। तथाकथित आधुनिकता में न तो वे खप सकते हैं न उनकी कविता। इसीलिए उनकी कविता के पास सीधा, सहज, आडम्बरहीन, भारतीय लोकमन लेकर जाना उचित होगा।''[3]

प्रत्यक्ष जीवन अनुभूतियों पर आधारित त्रिलोचन की कविताओं की शक्ति का यही आधार भी है कि वे लोकमन से जुड़ती ही नहीं बल्कि लोकमन की होकर उनमें कुछ इस प्रकार से समा जाती हैं जैसे सागर की लहरें अथाह सागर में समा जाती हैं। लोकमन से गहरी सम्पृक्ति ही उनकी कविताओं में मानवीय मूल्यों की पक्षधर बनकर उपस्थित होती है। प्रेम, करुणा और विश्वबंधुत्त्व की प्रतिष्ठा तथा प्राणिमात्र का कल्याण जैसे उत्कृष्ट और अनिवार्य मानवीय मूल्यों की संकल्पना पर आधारित उनका काव्य हमारी चेतना का निरन्तर परिष्कार करता रहता है और स्वार्थ की संकीर्ण मनोभूमि से बहुत ऊपर उठाकर व्यापक लोककल्याण परकता की ओर उन्मुख कर देता है। उनका मानना है कि मानवतावादी मूल्यों की पक्षधरता से ही मानवता का दीपक प्रज्ज्वलित होकर संसार की संकीर्णताओं की कालिमा को भस्मसात् कर सकता है—

''मानवता स्वतंत्र हो/तुम मानव के दीपक हो,
अत्याचार तिमिर क्षय कर दो/तुम इतिहास छोड़कर बैठे, उठो नया अध्याय बनाओ।''[4]

मानवता के पथ को प्रशस्त करने की आकांक्षा रखने वाला त्रिलोचन का साहित्य विश्व को एक ही परिवार का अनिवार्य या अविभाज्य अंग मानता है। कवि को पूरा यकीन भी है कि हमारी परम्परा की अन्तर्दृष्टि से ही हमें वह शक्ति मिलेगी जिससे निरन्तर यान्त्रिक होते जाते जीवन में सरसता की सृष्टि होगी और मानवीय सभ्यता पुनर्जीवित हो सकेगी और यदि हम

अपनी परम्परा से आँखे चार किये बिना अतियान्त्रिकता और मशीनीकरण के मकड़जाल में उलझते गये तो एक दिन शीघ्र ही विश्वयुद्धों की विभीषिका में ही मानवीय सभ्यता की अर्जित समस्त उपलब्धियों के साथ–साथ समूची सृष्टि ही नष्ट हो जायेगी। इसीलिए हमें अपनी संस्कृति में निहित विश्वबंधुत्त्व की भावना के निरन्तर विश्व स्तरीय प्रसार की अपरिहार्य आवश्यकता है–

'तुम्हारी ध्वजाएं/वसुधैव कुटुम्बकम की छाप लिए हुए हैं,'[5] और यही कारण है कि वे विश्वबंधुत्त्व की प्रतिष्ठा तथा 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' जैसे विश्वकल्याणकारी मूल्यों की पक्षधरता के कवि भी बन जाते हैं। ऐसा सिद्धान्त जो मानव को मानव से पृथक् करे उनमें विघटनकारी तत्त्वों का प्रसार करे वे त्रिलोचन के लिए नितान्त त्याज्य है। ऐसे विघटनकारी सिद्धान्तों की निस्सारता की परत दर परत उघाड़ कर रख देते हैं–

'वह मेरा भाई जिसको तुम अलगाना
अपना धर्म समझ बैठे हो मैं न सुनूँगा।
बात तुम्हारी तुम तो ध्वजा धर्म की
लिए लिए फिरते हो, तुमको ग्लानि नहीं है
कोई भी मर जाय तुम्हें हानि नहीं है।
बहुत हुआ दिख गयी तुम्हारी कलाकर्म की
हिन्दू मुसलमान ईसाई अब ये सारे
नाम मिटेंगे, सब मनुष्य होंगे तुम हारे।'[6]

इस प्रकार स्पष्ट है कि त्रिलोचन धर्म की ध्वजा लेकर चलने वाले समाज की विघटनकारी शक्तियों का निरन्तर प्रतिरोध करने वाला साहित्य रचने को ही अपने असली कविकर्म की पहचान के रूप में भी इंगित करते रहे हैं। जहाँ एक ओर वे समाज की विध्वंसक शक्तियों के प्रतिरोध की बात करते हैं वहीं वे ऐसे गीतों का भी सृजन कर रहे हैं जिसमें प्रेम की सरस धारा आद्यन्त आप्लावित है, सर्वत्र आत्मीयता जनित असीम अनुराग की सृष्टि है। वे एक ऐसे विश्वजनीन प्रेम के पक्षधर हैं जिसके मजबूत और दृढ़ सूत्र में समूची मनुष्यता को पिरोया जा सके जहाँ तमाम प्रकार की संकीर्णताएँ भस्मीभूत हों–

'इस जीवन में रह जाय न मल
द्वेष दंभ अन्याय घृण छल
चरण–चरण चल गृह कर उज्ज्वल
गृह–गृह की लक्ष्मी मुस्काओ
आज मुक्त कर मन के बन्धन

करो ज्योति का जप का वंदन
स्नेह अतुल धन धन्य यह भुवन
बनकर स्नेहगीत लहराओ।'[7]

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि त्रिलोचन का साहित्य जनवादी और मानवीय मूल्यों की पक्षधरता का साहित्य है यहाँ प्रेम, दीप्ति, उल्लास और राग–विराग की अनेक अन्तर्छटायें भी विद्यमान हैं तथा पर दुख कातरता और मानवीय करुणा की ऐसी असीम विश्व–कल्याणाभिनिवेशी चिन्तन धाराएं भी हैं, जो हमारी चेतना का विस्तार कर उसे स्वार्थ के संकीर्ण बंधनों से मुक्त कर विश्वनिर्माण और विश्वसृजन के परार्थमयी संकल्पनाओं से ओत–प्रोत करने में सक्षम हैं। उनकी विश्व दृष्टि का निर्माण उनके मानवतावादी मूल्यों की आधारभूमि पर होता है। वे सच्चे अर्थों में मानवीय मूल्यों के पोषक कवि है।

संदर्भ

1. *वासुदेव सिंह (त्रिलोचन), का. सं.–उस जनपद का कवि हूँ पृ0 113*
2. *वासुदेव सिंह (त्रिलोचन), उस जनपद का कवि हूँ पृ0 65*
3. *आधारशिलाः त्रिलोचन विशेषांक 2009 पृ0 122*
4. *वासुदेव सिंह (त्रिलोचन), का. सं.–तुम्हें सौंपता हूँ पृ0 127*
5. *वासुदेव सिंह (त्रिलोचन), का. सं.–तुम्हें सौंपता हूँ पृ0 32*
6. *वासुदेव सिंह (त्रिलोचन), का. सं.–अनकहनी भी कुछ कहनी है पृ0 19*
7. *वासुदेव सिंह (त्रिलोचन), का. सं.–सबका अपना आकाश त्रिलोचन पृ0 16*

शिक्षक, शिक्षा और मूल्य

डॉ. संजीव कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर
शिक्षक–शिक्षा विभाग (बी.एड.)
कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर, जिला–गौतमबुद्ध नगर

प्रस्तावना

प्रत्येक जागरूक समाज अपने नागरिकों में स्वीकृत मूल्यों एवं अनुमोदित व्यवहार मानदंडों को सृजित करने के लिए औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करता है। औपचारिक शिक्षा को शिक्षण एवम अधिगम की नियोजित व्यवस्था भी कहा जाता है जहां एक प्रशिक्षित व्यक्तित्व दूसरे व्यक्ति अर्थात अधिगमकर्ता के व्यवहार को आदर्श स्वरूप में परिवर्तित करता है। कोठारी आयोग ने शिक्षक को राष्ट्र का निर्माता भी इसी परिपेक्ष्य में कहा है। समाजशास्त्र की अवधारणा यह है कि व्यक्ति का नागरिकीकरण तभी संभव है यदि व्यक्ति समस्त मानवीय मूल्यों से परिपूर्ण हो। अतः मूल्ययुक्त व्यक्ति ही राष्ट्र का व्यक्तित्व निर्मित करता है। उक्त प्रक्रिया जिस पक्ष पर सर्वाधिक निर्भर है वो है ''शिक्षक''।

वर्तमान परिपेक्ष्य में असंतोष, अलगाव, उपद्रव, आंदोलन, असमानता, असामंजस्य, अराजकता, आदर्श विहीनता, अन्याय, अत्याचार, अपमान, असफलता अवसाद, अस्थिरता, अनिश्चितता एवम आपसी संघर्ष मानव जीवन के मुख्य आयाम बन चुके हैं। आज भारतीय समाज पर सांप्रदायिकता,जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद, हिंसा की संकीर्ण कुत्सित भावनाओं का आधिपत्य स्पष्ट परिलक्षित होता है। उक्त समस्त समस्याओं का मूल कारण मनुष्य के नैतिक मूल्यों का पतन और चारित्रिक अवमूल्यन है। अब चूंकि नैतिकता का सम्बंध मानवीय अभिवृत्ति से है इसलिए शिक्षा से इसका विशेष सम्बंध स्वतः ही स्पष्ट है। हम जानते हैं कि कौशलों व दक्षताओं की अपेक्षा अभिवृत्ति–मूलक प्रवृत्तियों के विकास में पर्यावरणीय घटक विशेष रूप में सहायक होते हैं। यदि छात्रों के परिवेश में नैतिकता के तत्त्व पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हैं तो परिवेश में जिन तत्त्वों की प्रधानता होगी वे जीवन का अंश बन जाते हैं इसीलिए कहा जाता है कि मूल्य पढ़ाये नहीं जाते, अधिग्रहीत किये जाते हैं। देश की प्रमुख शैक्षिक नियोजन संस्था–''राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद'' (एन.सी.ई.आर.टी) के द्वारा 84 मूल्यों की एक सूची तैयार की गयी है जो व्यक्ति में नैतिक मूल्यों के परिचायक हो सकते हैं।

व्यवहारिक सत्य तो ये है कि नैतिक मूल्यों की कोई एक पूर्ण सूची तैयार ही नहीं की जा सकती है फिर भी में हम इतना कह सकते हैं कि हम उन गुणों को नैतिक कह सकते हैं जो व्यक्ति

के स्वयं के सर्वांगीण विकास और कल्याण में योगदान देने के साथ–साथ किसी अन्य के विकास और कल्याण में किसी प्रकार की बाधा न पहुंचाए। नैतिक मूल्यों की जननी नैतिकता सद्गुणों का समन्वय मात्र नहीं है, अपितु यह एक व्यापक गुण है जिसका प्रभाव मनुष्य के समस्त क्रिया– कलापों पर होता है और उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व इससे प्रभावित होता है। नैतिक मूल्य वास्तव में नैतिक आचरण की संहिता है। हमें इस बात को भली भांति समझना होगा कि नैतिक मूल्य नितांत वैयक्तिक होते हैं। अपने प्रस्फुटन उन्नयन व क्रियान्वय से यह क्रमशः अंतयक्तिक/ सामाजिक व सार्वभौमिक होते जाते हैं। एक ही समाज में विभिन्न कालों में नैतिक संहिता भी बदल जाती है। नैतिकता वास्तव में ऐसी सामाजिक अवधारणा है जिसका मूल्यांकन किया जा सकता है। यह कर्तव्य की आंतरिक भावना है और उन आचरण के प्रतिमानों का समन्वित रूप है जिसके आधार पर सत्य असत्य, अच्छा–बुरा, उचित–अनुचित का निर्णय किया जा सकता है और यह विवेक के बल से संचालित होती है।

अतः उक्त स्तिथि में समस्या के निवारण के दायित्व समाज पर ही आता है और समाज अपने दायित्वों का निर्वहन औपचारिक शिक्षा व्यवस्था के माध्यम से ही करता है। औपचारिक शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक वो आयाम है जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि छात्र उसके आचरण का अनुसरण और व्यवहार का अनुकरण करते हैं।

शिक्षा और नैतिक मूल्य

आज जब हम ''शिक्षा'' की बात करते हैं तो सामान्य अर्थो में यह स्वीकार किया जाता है कि इसके द्वारा हमें वस्तुगत ज्ञान अर्जित होता है तथा जिसके आधार पर हम जीविकोपार्जन के लिए रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

समाज और देश के लिए इस औपचारिक ज्ञान का महत्व भी है क्योंकि ये समाज अथवा देश के लिए विशेषज्ञ निर्मित करता है। यह भी प्रमाणित सत्य है कि शिक्षित राष्ट्र ही अपने भविष्य को सँवारने में सक्षम एवम समर्थ होता है। आज कोई भी राष्ट्र विज्ञान और तकनीक की प्रासंगिकता को अस्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि जीवन के प्रत्येक आयाम में अब इसका उपयोग अनिवार्य है। वैज्ञानिक शोधों एवम परिणामों का प्रयोग ही था जिसके फलस्वरूप देश में हरित क्रांति और श्वेत क्रांति सार्थक एवम साकार स्वरूप ले सकी। अतः वस्तुपरक शिक्षा हर क्षेत्र में उपयोगी है परंतु जीवन में केवल पदार्थ ही महत्वपूर्ण नहीं हैं। हम जानते हैं कि भारतीय समाज एवम व्यवस्था में फैला भ्रष्टाचार किस तरह से विकास के प्रवाह को धीमा किए हुए है।

हम देखते हैं कि मूल्यों में ह्रास होने से समाज में हर प्रकार के अपराध बढ़ रहे हैं। हम यह भी देखते हें कि मूल्यविहीन समाज में असंतोष फैल रहा है। बेरोजगारी के बढ़ने से क्रोध व असंतोष जैसी कई चुनौतियाँ प्रत्यक्ष हैं।

इन परिस्थितियों में आत्म विश्लेषण एवम आत्ममंथन अनिवार्य हो जाता है। क्या हमारी शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है? यदि शिक्षा व्यवस्था त्रुटिहीन है तो निश्चित ही व्यक्तियों में दोष है ? आखिर कहीं ना कहीं तो विकारों का शीर्षासन चल रहा है जो सत्य को असत्य और असत्य को सत्य प्रमाणित कर रहा है।

यदि वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर निरपेक्ष दृष्टिपात करें तो प्रथम दृष्टया ही इसकी कमियाँ परिलक्षित हो जाएँगी। हमारे देश के आधे से अधिक शिक्षित व्यक्तियों के सामने कोई लक्ष्य नहीं है, उनके सामने अँधेरा ही अंधेरा है।

जिसने अपने जीवन के बेशकीमती वर्ष शिक्षा में लगा दिए, जिसने इतना समय किसी कार्य के प्रति समर्पित कर दिया, उसके दो हाथों को कोई काम नहीं है। इतने वर्षों के श्रम का कोई प्रतिफल नहीं तो ऐसी शिक्षा बेकार ही है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अक्षर ज्ञान जरूरी है, चौदह वर्ष तक की शिक्षा जरूरी है ताकि बालक जीवन के हर क्षेत्र की प्रमुख ज्ञान से अवगत हो सके। परंतु उच्च शिक्षा की उपाधि उतने ही लोगों को दी जानी चाहिए जितने लोग उससे आसानी से रोजगार प्राप्त कर सकें।

केवल थोड़े से मेधावी लोगों को ऊँची शिक्षा दी जानी चाहिए तथा अन्य छात्रों को रोजगारपरक शिक्षा दी जाए तो बेकारी की समस्या हमारे देश से कुछ वर्षों में ही विदा हो जाएगी। गुरुदेव रवींद्रनाथ जैसे विचारकों ने हमारी शिक्षा प्रणाली की खामियों को समझकर इन्हीं कारणों से एक विशिष्ट शिक्षा व्यवस्था की परिकल्पना की थी ।

यदि शिक्षा व्यवस्था में सचमुच सकारात्मक सुधार लाना हो तो शिक्षा में नैतिक मूल्यों का समावेश अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि कोई कार्य यदि सुस्पष्ट नीति के बिना किया जाए तो वह निःसंदेह असफल होगा। नीति से ही नैतिक शब्द बना है जिसका अर्थ है सोच–समझकर बनाए गए नियम या सिद्धान्त। लेकिन आज की शिक्षा में नैतिक मूल्यों का कोई समावेश नहीं है क्योंकि वह दिशाहीन है।

आज की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है मात्र पढ़–लिखकर धनोपार्जन करना। अब चाहे वह धन कैसे भी आता हो, इसकी परवाह न की जाए। यही कारण है कि शिक्षित वर्ग भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने में सबसे आगे हैं।

शिक्षा प्राप्ति की एक सुविचारित नीति होनी चाहिए। छात्रों की शुरू से ही यह जानकारी देनी चाहिए कि जीवन में आगे चलकर तुम्हें किन समस्याओं से जूझना होगा। छात्रों को पता होना चाहिए कि जीने के मार्ग अनेक हैं तथा उस मार्ग को ही चुनना श्रेयस्कर है जो व्यक्ति विशेष के स्वभाव के अनुकूल हो।

नैतिक शिक्षा की बातों में सत्य, क्षमा, दया, ईमानदारी, अहिंसा आदि बताने से कुछ खास हासिल नहीं होता यदि हम इन ऊँची–ऊँची बातों को जीवन में उतारने का बालकों को अवसर

न प्रदान करें। बालकों की सहज बुद्धि में प्रयोगात्मक सत्य अधिक सहजता से प्रवेश करते हैं। यदि मात्र उपदेश उन्हें प्रभावित कर सकते तो आज समाज में इतनी बेईमानी और इतना भ्रष्टाचार न फैला होता।

शिक्षा के साथ नैतिक मूल्यों को सम्बद्ध करने का अर्थ यह नहीं है कि बालकों के निरंतर भारी होते हुए बस्ते में एक और किताब का बोझ डाल दिया जाए। इससे उनके जीवन में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आ सकता क्योंकि बच्चे समझते हैं कि यह भी एक विषय है जिसमें अच्छे अंक लाने होंगे। इसके विपरीत यदि हम उन्हें अच्छे माहौल में, विद्यालय परिसर को जीवन की एक प्रयोगशाला बनाकर शिक्षा को किसी उद्देश्य से संयुक्त कर दें तो उनके लिए बहुत लाभकारी होगा।

खेल अथवा मनोरंजक विधि से दी गयी शिक्षा अधिक प्रभावी होती है। साथ–साथ यदि विद्यालय स्तर से ही प्रत्येक बच्चे के अंदर निहित क्षमता को पहचान कर उसे एक सुनिश्चित दिशा दे दी जाए तो निश्चित ही शिक्षा प्राप्ति का उद्देश्य सिद्ध हो जाएगा।

वर्तमान समय में हमारे नैतिक मूल्य भी बदल रहे हैं क्योंकि नगरीकरण, आधुनिक सभ्यता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि के कारण नई पीढ़ी के लोग पुरातनपंथी विचारधारा से चिपके नहीं रहना चाहते हैं।

अतः शिक्षा में ऐसे नैतिक मूल्यों को जोड़ने का असफल प्रयास नहीं करना चाहिए जो युगानुरूप नहीं रह गए हैं। इसमें धार्मिक कट्टरता, किसी एक धर्म के प्रति आग्रह जैसा भाव नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे शिक्षा बोझिल हो जाती है। सदाचार की वैसी बातें जो सभी धर्मों व सभी संप्रदायों को मान्य है, समाहित कर हम नए, प्रगतिशील समाज की रचना कर सकते हैं ।

शिक्षक और नैतिकता

कोठारी आयोग की रिपोर्ट में शिक्षक को यूं ही राष्ट्र निर्माता की संवेदनशील उपाधि से विभूषित नहीं किया गया। निःसंदेह राष्ट्र के निर्माण में शिक्षक की भूमिका अद्वितीय, अविस्मरणीय एवं अतुलनीय है। व्यक्ति अपने बाल्यकाल से लेकर युवावस्था तक शिक्षक से ही औपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है। शिक्षक तथा शिष्य का सम्बन्ध अखण्ड एवम अदभुत होता है क्योंकि शिक्षक का व्यक्तित्व शिष्य को किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित करता है। अतः शिक्षक की नीति तथा नैतिकता महत्वपूर्ण अथवा विचारणीय है। शिक्षक अपने छात्रों के लिए एक आदर्शतम होता है, इसलिए शिक्षक का चरित्र उच्च तथा नैतिकता से परिपूर्ण होना चाहिए।

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक कालक्रम तथा शासन के प्रभाव के कारण शिक्षकों की नैतिकता के मापदंडों में परिवर्तन आते रहे हैं। प्राचीन काल में शिक्षकों में उच्च कोटि की नैतिकता पाई जाती थी जो आज उन प्राचीन आदर्शों के स्तर के अनुकूल नहीं है। प्राचीन काल में जब ऋषि मुनियों द्वारा विद्याध्ययन की परम्परा थी तब ये ऋषि छात्रों को दूर आश्रम में शिक्षा प्रदान

करते थे और वे शासन एवं सत्ता के प्रभाव से मुक्त होकर समभाव से सभी छात्रों को ज्ञान देते थे, जैसे कृष्ण–सुदामा में हर प्रकार की भिन्नता थी फिर भी दोनों ने ही ऋषि संदीपन के आश्रम में ही शिक्षा ग्रहण की। इसी तरह उनके द्वारा अर्जित ज्ञान एवम कौशलों का मूल्यांकन भी निरपेक्ष भाव से किया जाता था।

उस समय शिक्षकों को शासन एवम सत्ता प्रभावित नहीं करती थी इसलिए उनमे उच्च स्तर की आदर्शतम नैतिकता पाई जाती थी। मध्य काल में शासन व्यवस्था शिक्षा अथवा शिक्षकों पर अपना प्रभाव डालने लगी तब से शिक्षकों के नैतिकता के स्तर का अवमूल्यन प्रत्यक्ष होना शुरू हुआ। इसका उदाहरण महाभारत काल में दीखता है जब गुरु द्रोणाचार्य जो कि राजपुत्रों के गुरु थे और उनका लक्ष्य अर्जुन को सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर बनाना था। इसलिए उन्होंने एकलव्य को अपना शिष्य बनाना स्वीकार नहीं किया। फिर भी जब एकलव्य ने अन्तःमन में द्रोण को गुरु मान कर स्व–अध्याय और परिश्रम से धनुष विद्या सिख लिया और जब इसका ज्ञान गुरु द्रोण को हुआ तो अधिकार न होते हुए भी उन्होंने एकलव्य से गुरु दक्षिणा के रूप में उसके दाहिने हाथ का अँगूठा मांग लिया ताकि भविष्य में कोई अर्जुन का प्रतिद्वंदी न रहे।

समाज में हर व्यक्ति का अपना एक स्थान होता है, एक कार्य क्षेत्र होता है जिसका चयन वो अपनी शिक्षा–दीक्षा और प्रशिक्षण के अनुरूप करता है और वही उसकी सफलता की सीमाओं को तय करती है। व्यक्ति किस क्षेत्र में जाये इसका निर्धारण उसकी प्रारम्भिक शिक्षा और शिक्षक के द्वारा ही तय होता है इसलिए ये आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है की शिक्षक सदैव चरित्रवान तथा उच्च नैतिकता वाला हो तभी वह अपने शिष्यों में सच्चाई, ईमानदारी, सहनशीलता, कार्यनिष्ठा तथा लगन आदि चारित्रिक गुणों का विकास कर सकता है। इस तरह शिक्षक छात्रों के चरित्र के निर्माता होते हैं।

बाल्यकाल से ही जब अध्ययन के साथ–साथ चरित्र निर्माण पर भी जोर दिया जायेगा तब बड़ा होकर व्यक्ति चाहे चिकित्सा के क्षेत्र, अभियंत्रण के क्षेत्र, उद्योग या कृषि क्षेत्र में जाये वह अपना कार्य पूरी ईमानदारी और निष्ठा से करेगा। इससे वह स्वयं भी सफलता प्राप्त करेगा तथा अपने व्यवसाय को भी सफल बनाएगा।

लेकिन आज के औद्योगीकरण एवम बाजारवादी व्यवस्था के युग में चारित्रिक नैतिकता पर जरा भी जोर नहीं दिया जा रहा है। बस किसी तरह उपाधियाँ प्राप्त कर किसी व्यवसाय में लग जाओ, बस मात्र एक यही उद्देश्य रह गया है। आज शिक्षा का न वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने से मतलब है और न ही चारित्रिक गुण विकसित करने से। शिक्षा की अंग्रेजी पद्दति अपना कर तो चरित्र निर्माण को और भी भुला दिया गया है। बस ऊपरी दिखावा और तड़क भड़क बच्चों में भर दी है। शिक्षक भी अपना कोई आदर्श बच्चों के समक्ष नहीं रख पा रहे हैं। शिक्षक ये समझते ही नहीं कि बच्चों में चारित्रिक गुणों का विकास कराना उनका भी कर्त्तव्य है। इसमें शिक्षक का दोष

भी नहीं है क्योंकि आज की शासन तथा शिक्षण व्यवस्था ऐसी नहीं है की शिक्षक इसके लिए स्वयं को उत्तरदायी समझे।

गुरुदेव रविंद्रनाथ ठाकुर ने भारतीय कालातीत उच्चश्रेष्ठ मूल्यों को जन–साधारण के जीवन में प्रस्थापित करने के उद्देश्य से ही 'शांति निकेतन' जैसी शिक्षण संस्था की स्थापना की और इसके लिए उन्होंने प्रतिभाशाली तथा आदर्शवादी व्यक्तियों की मदद ली और स्वयं उन्हें उचित कार्य करने के लिए प्रेरित किया।

पहले के शिक्षक छात्रों को सिर्फ आदर्श का पाठ नहीं पढ़ाते थे अपितु वे उन्हें व्यवहार द्वारा करके उनमें आदर्श प्रस्थापित करते थे। उन शिक्षकों में इतनी उच्च नैतिकता होती थी कि छात्रों के हित के लिए अपने व्यक्तिगत सुख–दुःख की परवाह तक नहीं करते थे। इसका ज्वलंत उदाहरण आज के युग के हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति डा. राधाकृष्णन तथा डा. जाकिर हुसैन साहब हैं, जिन्होंने शिक्षण का कार्य कर शिक्षक के उच्च आदर्श स्थापित किया। हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भी एक महान शिक्षाविद थे। एक सफल वैज्ञानिक होते हुए भी एक शिक्षक की भाँति बच्चों एवं युवाओं को शिक्षित करते रहते थे। वे विज्ञान और शिक्षा के प्रति एक समर्पित व्यक्ति थे और शिक्षा के प्रति उनका यह लगाव उनकी अंतिम साँस तक उनके साथ रहा। अनेक शैक्षिक संस्थानों से जुड़े डा. कलाम अपने भारत देश के साथ साथ पूरे विश्व में भी लोकप्रिय थे। वैज्ञानिक सोच–शिक्षण और अपने कार्य के प्रति प्रतिबद्धता उनके व्यक्तित्व की विशेषता थी। यह हमारे लिए गौरव की बात है की हमारे कई पूर्व राष्ट्रपति पहले एक शिक्षक थे।

नैतिकता के विकास में शिक्षक की भूमिका

हम जानते हैं कि शिक्षा मनुष्य के सम्यक् एवम सर्वांगीण विकास के लिए उसके विभिन्न ज्ञान तंतुओ को प्रशिक्षित करने की सतत प्रक्रिया है। इसके द्वारा मनुष्य में आत्मसात करने, ग्रहण करने, रचनात्मक कार्य करने, दूसरों की सहायता करने और राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रमों में पूर्ण सहयोग देने की भावना का विकास होता है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन एवम परिमार्जन किया जाता है। वह परिवर्तन, जो मनोविज्ञान के अनुसार उसे पाश्विक प्रवृत्ति से मानवीय श्रेष्ठत्व प्रदान करता है।

नीति शास्त्र की उक्ति है–''ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः'' अर्थात् ज्ञान से हीन मनुष्य पशु के तुल्य है। ज्ञान की प्राप्ति शिक्षा या विद्या से होती है। दोनों शब्द पर्यायवाची हैं। 'शिक्ष' धातु से शिक्षा शब्द बना है, जिसका अर्थ है–विद्या ग्रहण करना। विद्या शब्द 'विद' धातु से बना है, जिसका अर्थ है–ज्ञान पाना। ऋषियों की दृष्टि में विद्या वही है जो हमें अज्ञान के अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाये –'सा विद्या सा विमुक्तये'। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में 'अध्यात्म विद्यानाः' कहकर इसी सिद्धांत का समर्थन किया है।

शिक्षा की प्रक्रिया युग सापेक्ष होती है। युग की गति और उसके नए–नए परिवर्तनों के आधार पर प्रत्येक युग में शिक्षा की परिभाषा और उद्देश्य के साथ ही उसकी संरचना एवम स्वरूप

भी बदल जाता है। यह मानव इतिहास का सनातन सत्य है। मानव के विकास के लिए खुलते नित–नये आयाम शिक्षा और शिक्षाविदों के लिए चुनौती का कार्य करते है जिसके अनुरूप ही शिक्षा की नयी परिवर्तित–परिवर्धित रूप–रेखा की आवश्यकता होती है। शिक्षा की एक बहुत बड़ी भूमिका यह भी है कि वह अपनी संस्कृति, धर्म तथा अपने इतिहास को अक्षुण्ण बनाए रखें, जिससे की राष्ट्र का गौरवशाली अतीत भावी पीढ़ी के समक्ष द्योतित हो सके और युवा पीढ़ी अपने अतीत से कटकर न रह जाए।

आज शिक्षक से अपेक्षा है कि वह सामाजिक परिवर्तन के सापेक्ष मात्र अक्षर तथा पुस्तकीय ज्ञान कल ही शिक्षण का साधन न बनाये बल्कि अपने आदर्श आचरण से मूल्यों के प्रति छात्रों में सम्मान जागृत करे। ऐसी शिक्षा निश्चित ही 'स्वर्ग लोके च कामधुग् भवति।' कामधेनु बनकर सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाली और सुख–समृद्धि तथा शांति का संचार करने वाली होगी।

वर्तमान शिक्षा में नैतिक मूल्यों की अधिकतम आवश्यकता है। वैदिक शिक्षा प्रणाली का मानना है कि समस्त ज्ञान मनुष्य के अंतर में स्थित है। भारतीय मनोविज्ञान के अनुसार आत्मा ज्ञान रूप है और ज्ञान आत्मा का प्रकाश है। मनुष्य को बाहर से ज्ञान प्राप्त नहीं होता प्रत्युत आत्मा के अनावरण से ही ज्ञान का प्रकटीकरण होता है। श्री अरविन्द के शब्दों में ''मस्तिष्क को ऐसा कुछ नहीं सिखाया जा सकता जो जीव की आत्मा में सुप्त ज्ञान के रूप में पहले से ही गुप्त न हो।'' स्वामी विवेकानंद ने भी इसी बात को इन शब्दों में व्यक्त किया है–''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। ज्ञान मनुष्य में स्वभाव सिद्ध है कोई भी ज्ञान बाहर से नहीं आता सब अंदर ही है हम जो कहते है कि मनुष्य 'जानता' है। यथार्थ में मानव शास्त्र संगत भाषा में हमें कहना चाहिए की वह अविष्कार करता है, अनावृत ज्ञान को प्रकट करता है।''

अतः समस्त ज्ञान चाहे वह भौतिक हो, नैतिक हो अथवा आध्यात्मिक मनुष्य की आत्मा में है। बहुधा वह प्रकाशित न होकर ढका रहता है और जब आवरण धीरे–धीरे हट जाता है तब हम कहते है कि हम सीख रहे है जैसे–जैसे इस अनावरण की क्रिया बढ़ती जाती है हमारे ज्ञान में वृद्धि होती जाती है। इस प्रकार शिक्षा का उद्देश्य नए सिरे से कुछ निर्माण करना नहीं अपितु मनुष्य में पहले से ही सुप्त शक्तियों का अनावरण और उसका विकास करना है।

चारित्रिक एवं नैतिक शिक्षा पर बल देते हुए स्वामी विवेकानंद ने कहा था– ''शिक्षा मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास है वह शिक्षा जो जनसमुदाय को जीवन संग्राम के उपयुक्त नहीं बना सकती, जो उनकी चारित्रिक शक्ति का विकास नहीं कर सकती, जो उनके मन में परहित भावना और सिंह के समान साहस पैदा नहीं कर सकती, क्या उसे भी हम शिक्षा नाम दे सकते है?'' शिक्षा का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा था –'सभी शिक्षाओं का, अभ्यासों का अंतिम ध्येय मनुष्य का विकास करना है। जिस अभ्यास के द्वारा मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रवाह और आविष्कार संयमित होकर फलदायी बन सकें।'

शिक्षार्थी के जीवन में नैतिक मूल्य परक उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि नैतिक मूल्यों वाली उच्च शिक्षा लोगों को एक अवसर प्रदान करती है जिससे वे मानवता के

सामने आज शोचनीय रूप से उपस्थित सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक मसलों पर सोच–विचार कर सकें। अपने विशिष्ट ज्ञान और कौशल के प्रसार द्वारा उच्च शिक्षा राष्ट्रीय विकास में योगदान करती है। इस कारण हमारे अस्तित्व के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है।[4]

उच्च शिक्षा के संदर्भ में गुणवत्ता की महत्ता का विश्लेषण करते हुए तत्कालीन उच्च शिक्षा विभाग के प्रमुख सचिव बसंत प्रताप सिंह ने कहा है– ''उच्च शिक्षा का संबंध जीवन में गुणात्मक मूल्यों के विस्तार से है जिससे सभ्यता के विकास क्रम में अर्जित मानवता के दीर्घकालिक अनुभवों को आत्मलब्धि की दिशा में समाजीकरण के साथ अग्रसारित किया जा सके। ऐसे अनुभवों के समुच्चय ही कालान्तर में मूल्य बनते हैं जिन्हें अपनाने की परम्परा ही संक्षेप में संस्कृति कहलाती है।[5] और इस संस्कृति के निर्माण में एक शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज के बदलते सामाजिक परिवेश में शिक्षा, शिक्षा के प्रकार और शिक्षा प्राप्त करने के तरीकों में कई परिवर्तन आए है, जिसमें शिक्षक की भूमिका में भी बदलाव आया है, एक अच्छे शिक्षक के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा है कि श्रेष्ठ शिक्षक वही है जिसकी अपने विषय में गहरी पैठ हो। उसका अपने विषय पर तो अधिकार होना ही चाहिए, अध्यापन क्षमता भी उत्कृष्ट कोटि की होनी चाहिए, जिससे छात्रों को श्रेष्ठ ज्ञान लाभ मिल सके।

सन्दर्भ

1. *रमेश प्रसाद पाठक, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय परिपेक्ष्य; विकास पब्लिकेशन, 2015, पृष्ठ संख्या 145.*
2. *डॉ. लक्ष्मी के. ओड, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि; राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ संख्या 85.*
3. *डॉ. रश्मि श्रीवास्तव, स्वामी विवेकानंद का शिक्षा दर्शन; नीलकमल पब्लिकेशन्स, 2016, पृष्ठ संख्या 233।*
4. *डॉ. नयन कुमार आचार्य, वेदों में मानवीय मूल्य; आर्य समाज साहित्य, पृष्ठ संख्या 159।*
5. *अजीत नारायण त्रिपाठी, नैतिक और मानवीय मूल्य; विद्या भवन, इन्दौर –2018, पृष्ठ संख्या 117।*
6. *डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण', कथाकार निशंक और जीवन मूल्य, डायमंड बुक्स, 2013, पृष्ठ संख्या 76*
7. *डॉ. शिवपाल सिंह एवम राकेश कुमार केशरी, शिक्षा के दार्शनिक एवम समाजशास्त्री; परिदृश्य, लॉयल बुक, मेरठ, 2017, पृष्ठ संख्या 387–398.*
8. *डॉ. ऐ.बी. भटनागर एवम डॉ. अनुराग भटनागर, शिक्षा के दर्शनिक एवं समाजशास्त्री; परि श्य, आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ, 2018, पृष्ठ संख्या 332–343*
9. *डॉ. पूनम मदान एवम डॉ. राम शक्ल पाण्डेय, शिक्षा के दार्शनिक एवम समाजशास्त्रीय आधार, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा। 2017/18, पृष्ठ संख्या 222–227.*
10. *डॉ. रमन बिहारी लाल एवम डॉ. सुनीता पलोड़, शिक्षा के दार्शनिक एवम समाजशास्त्रीय परिदृश्य, आर. लाल.पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2018, पृष्ठ संख्या 178–185.*

भौगोलिक परिस्थितियाँ तथा मानवीय मूल्य

सौरभ भारद्वाज
बी. एड. द्वितीय वर्ष
शिक्षक शिक्षा विभाग
राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर।

भारत एक विभिधता सम्पन्न देश है। इसकी विभिधता यहां के भौगोलिक स्वरुप में, सभ्यता–संस्कृति में, जलवायु में, कला में, धर्म में, विचारों आदि में देखने को मिलती है। इसके साथ साथ यह देश गाथाओं तथा प्राचीन परम्पराओं का कर्मस्थल तथा इतिहास का जनक रहा है।

यहां हम भारत के भौगोलिक स्वरुप की बात करते है। भारतवर्ष विविधता से भरा हुआ प्रायद्वीप स्थलखण्ड है। इसके उत्तर में पर्वतराज हिमालय जिसकी बर्फ से ढकी ऊँची–ऊँची पर्वत चोटियाँ अनुपम छटा को संजोए हुए है। वही पश्चिम में अरब सागर,पूर्व में बंगाल की खाड़ी, दक्षिण में हिन्द महासागर है। तीन तरफ से जल से घिर जाने के कारण भारत प्रायद्वीपीय देश कहलाता है। तथा मध्यवर्ती भाग में उपजाऊ मिट्टी युक्त मैदानी भाग तथा पठारी भाग भारतवर्ष की खूबसूरत स्वरुप को दर्शाता है।

हमारे देश की भौगोलिक परिस्थितियाँ यहां के भौतिक स्वरूप की देन है। यहां पर कही ऊँचे–ऊँचे पर्वत हैं, तो कहीं हरे–भरे उपजाऊ मैदान, कही पठारी भूमि है तो कही मरुस्थलीय भूमि, कही तटीय मैदान है तो कही द्वीप समूह है। ये सभी स्वरूप अपने आप में विविधताओं को संजाऐ हुए है।

भारत की उत्तरी सीमा पर एक विशाल पर्वतमाला है जो पश्चिम में जम्मू–कश्मीर से लेकर पर्व में अरूणाचल प्रदेश तक विस्तृत है। इसे पर्वत राज हिमालय के रूप से जानते है। इस क्षेत्र में ऊँची–ऊँची बर्फ से ढकी चोटियाँ है। इसके अतिरिक्त सुन्दर–सुन्दर घाटियां है। हिमालय पर्वतीय क्षेत्र उत्तर की ओर से आने वाली ठण्डी हवाओं को रोककर हमारी जलवायु को शुष्क और ठण्डी होने से बचाता है। साथ ही दक्षिणी मानसूनी हवाओं को रोककर वर्षा कराने में सहायक है। यह मृदा ढालों पर पतली परत के रूप में होती है। इसी मृदा पर पर्वतीय वन, जिन्हें शंकुधारी वन कहते है। यहां के मध्य भाग में चीड़, पाइन, ओक, देवदार आदि के वृक्ष पाये जाते है। इस विषम परिस्थितियों में यहां के लोगों का मुख्य व्यवसाय पर्यटन, पशुपालन, औषधि निर्माण है।

हिमालय के दक्षिण में भारत का विशाल मैदानी भाग स्थित है। जो हिमालय से आने वाली नदियों द्वारा पोषित है। यह उपजाऊ मैदानी भाग जलाढ मिट्टी द्वारा निर्मित है। यह मैदानी क्षेत्र कृषि के लिये उपजाऊ भूमि प्रदान करता है। फलस्वरूप यहां कृषि एवं पशुपालन पर आधारित उद्योगों का विकास हुआ है। समतल भूमि के कारण सड़क व रेल परिवहन का विकास अपेक्षाकृत आसान हुआ है। इन क्षेत्र में जहां वर्षा अच्छी होती है। तो वहाँ सदाबहार वन पाये जाते है। जहां वर्षा कम होती है वहां पतझड़ वन पाये जाते है। सदाबहार वनों में नागफनी, रबड़ तथा पतझड़ वनों में साल, सागोन, चीढ़, पीपल, नीम, चन्दन, शीशम आदि मुख्य है। इनमें से बाघ, हिरण, शेर, हाथी, गाय, भैंस, बकरी, कुत्ता, बिल्ली, घोड़ा आदि इन प्रकार के पशु व गोरैया, सारस, कौआ, कबूतर, आदि पक्षी देखने को मिलते है। यहां कृषि आधारित उद्योगों का अच्छा विकास हुआ है।

भारत के पश्चिम में मरूस्थल स्थित है जिसे थार का मरूस्थल कहते है। यह शुष्क गर्म तथा रेतीला भाग है। यह राजस्थान, गुजरात के अधिकांश भाग को घेरे हुए है। यहां की मृदा शुष्क या मरूस्थलीय मृदा कहलाती है। यह रेतीली और नमकीन होती है। यहां पर कृषि योग्य भूमि कम पायी जाती है। कम वर्षा होने के कारण यहां मरूस्थलीय झाडियां पायी जाती है। जिनमें कीकर, खैर, बबूल, खजूर, कैक्टस आदि पाये जाते है। यहां पर पाले जाने वाला जानवरों में ऊँट प्रमुख है।

उत्तर के विशाल मैदान तथा तटीय भागों के बीच दक्षिण का पठार स्थित है। यह पठार कठोर व प्राचीन रवेदार चट्टानों से मिलकर बना है। इसकी आकृति त्रिभुजाकार है। इसका धरातल बहुत ऊँचा–नीचा है। इस क्षेत्र में कई पहाड़ी चोटियां तथा घाटियां है। मालवा का पठार, छोटा नागपुर का पठार, दक्कन का पठार इसके प्रमुख भाग है। यहां पर चम्बल, बेतवा, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि नदियां बहती है। इस क्षेत्र में मिट्टी की विविधता देखने को मिलती है। कहीं काली मिट्टी, कहीं लाल मिट्टी, पीली मिट्टी तो कहीं लटेराइट मिट्टी पायी जाती है। इन क्षेत्रों में पतझड़ वन पाये जाते है। उनमें चन्दन, शीशम, साल, सागौन व अन्य बहुमूल्य वृक्ष शामिल है। यह क्षेत्र प्राचीनतम शैलों से निर्मित होने के साथ खनिज सम्पदा सम्पन्न क्षेत्र है। लोहा, ताँबा, अभ्रक आदि बहुतायत पाए जाते है। यहां जल विद्युत उत्पादन केन्द्रों की स्थापना हुई है।

समुद्र तटीय मैदान, पश्चिम में संकरे है तथा पूर्वी में अपेक्षाकृत चौड़े हैं। भारत के पश्चिम तटीय मैदान में कोई बड़ी नदी नहीं है। जबकि पूर्वी तटीय मैदान में महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी नदियां बहती है। गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियां का सबसे बड़ा डेल्टा सुन्दरवन का निर्माण करती है। भारत के दो प्रायद्वीप समूह है– लक्षद्वीप तथा अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह। लक्षद्वीप अरब सागर में तथा अण्डमान निकोबार द्वीप समूह बंगाल की खाड़ी में स्थित है पूर्वी तटीय मैदान बहुत उपजाऊ है। यहां जलोढ़ मिट्टी पायी जाती है। जिसमें धान की अच्छी उपज होती है। पश्चिम तटीय मैदान में मसाले, नारियल तथा रबड़ की खेती होती है। भारत के व्यापार, पर्यटन

तथा सुरक्षा की दृष्टि से द्वीप समूह का विशेष स्थान रहा है। इन सभी क्षेत्रों की अपनी विशिष्टता के कारण भारत की जलवायु भी प्रभावित होती है। तापमान, वायुदाब और आर्द्रता भारतीय जलवायु व भौगोलिक परिस्थितियों को प्रभावित करते है।

हम देखते है कभी तेज धूप होती है, तो कभी बारिश, कभी सामान्य दिन होता है तो कभी सर्दी। कभी–कभी सभी या इनमें से कुछ परिस्थितियां एक ही दिन में हमारे सामने आती है। इस प्रकार की विभिन्न वातावरणीय स्थितियों को मौसम कहते है। जैसे– गर्म मौसम, सर्द मौसम, बारिश का मौसम आदि। जब एक समान वातावरणी स्थितियां दो–तीन महीने तक बनी रहती है तो इसे हम ऋतु कहते हैं। भारत वर्ष में चार ऋतुएं होती है– शीत ऋतु, ग्रीष्म ऋतु, वर्षा ऋतु, शरद ऋतु।

भारत की जलवायु उसकी भौगोलिक स्थिति समुद तल से ऊँचाई तथा समुद्र से दूरी पर निर्भर करती है। मरूस्थलीय क्षेत्रों में गर्मी, पर्वतीय क्षेत्रों में बर्फ से भरी सर्दी तथा तटीय क्षेत्रों में जलवायु समान्य रहती है। मध्यवर्ती भाग में कभी भीषण गर्मी तो कभी सर्दी देखने को मिलती है। तो इस प्रकार हम पाते है कि भारत की भौगोलिक परिस्थितियां कितनी भिन्न–भिन्न है। भारत के इस भौगोलिक स्वरूप में भारतीय जीवन शैलियों की भव्यता विराजमान है। भारतीय संस्कृति इन अलग–अलग परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न है। भारत में रहने वाले लोगों का खान पान रहन–सहन, पहनावा, बोली, धर्म, रीति रिवाज भाषाएं आदि अलग–अलग है जो भारत की संस्कृति में विविधता लाती है।

परन्तु इस विविधता पूर्ण भौगोलिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों में मानवीय मूल्यों में समरसता देखने को मिलती है। इस विविधतापूर्ण भौगोलिक परिस्थितियों में चाहें किसी भी धर्म, संस्कृति के लोग निवास करते हो उन लोगों के मानवीय मूल्य एक है।

जब हम मूल्य की बात करते है तो मूल्य का शाब्दिक अर्थ है– उपयोगिता, वांछनीयता, महत्व। सामान्यतः किसी समाज में जिन आदर्शों को महत्व दिया जाता है। और जिनसे उस समाज के व्यक्तियों का व्यवहार निर्देशित एवं नियन्त्रित होता है। उन्हें हम मूल्य कहते है मूल्य अपनी प्रकृति में अमूर्त होते है और सभी हमारे बाह्य व्यवहार को नियन्त्रित व निर्देशित करते है।

भारतीय समाज विविधताओं का योग है। इसके लिए मूल्यों की सूची बनाना बहुत कठिन कार्य है। हमारे भारतीय समाज में सर्वाधिक प्रभाव गांधी जी के आर्दशों का रहा है। उन्हीं के द्वारा बताये गए मानवीय मूल्य–सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अवसाद, अस्पर्शता और विनम्रता है। इसके अतिरिक्त एन.सी.ई.आर.टी. ने 83 मूल्यों की सूची तैयार की है जो इस प्रकार है– 1. दूसरों के सांस्कृतिक मूल्यों सराहना 2. अस्पृष्यता विरोध 3. नागरिकता 4. दूसरों की चिन्ता 5. दूसरों का ध्यान रखना 6. सहयोग 7. अच्छाई 8. प्रजातान्त्रिक निर्णय लेना 9. व्यक्ति की महत्ता 10. शारीरिक कार्य का सम्मान 11. साथी भावना 12. अच्छे आचरण 13. राष्ट्रीय

समाकलन 14. आज्ञा पालन 15. समय का सदुपयोग 16. ज्ञान की खोज 17. संयम 18. करूणा 19. सामान्य लक्ष्य 20. शिष्टाचार 21. भक्ति 22. स्वास्थ्यकर जीवन 23. अखण्डता 24. शुचिता 25. निष्कपटता 26. आत्म–नियन्त्रण 27. साधन सम्पन्नता 28. नियमितता 29. दूसरों का सम्मान 30. वृद्धावस्था का सम्मान 31. सादा जीवन 32. सामाजिक न्याय 33. स्वानुशासन 34. स्व सहायता 35. स्व सम्मान 36. आत्मविश्वास 37. स्व समर्थन 38. स्वाध्याय 39. आत्मनिर्भरता 40. आत्मनियन्त्रण 41. समाज सेवा 41. मानव जाति एकात्मकता 43. अच्छे बुरे में विभेद का भाव 44. सामाजिक उत्तरदायित्व का भाव 45. स्वच्छता 46. साहस 47. जिज्ञासा 48. धर्म 49. अनुशासन 50. सहनशीलता 51. समानता 52. भिन्नता 53. वफादारी 54. स्वतन्त्रता 55. दूरदर्शिता 56. सज्जनता 57. कृतज्ञता 58. ईमानदारी 59. सहायकता 60. मानवतावाद 61. न्याय 62. सत्यता 63. सहिष्णुता 64. सार्वभौमिक सत्य 65. सार्वभौमिक प्रेम 66. राष्ट्रीय व जन सम्पत्ति का महत्व 67. पहला 68. दयालुता 69. जीवों के प्रति दया 70. धर्म परायणता 71. नेतृत्व 72. राष्ट्रीय एकता 73. राष्ट्रीय चेतना 74. अहिंसा 75. शान्ति 76. देशभक्ति 77. समाजवाद 78. सहानुभूति 79. धर्मनिरपेक्षता 80. पृच्छा का भाव 81. दल भावना 82. समय की पाबन्दी 83. दल कार्य।

इस प्रकार हम देखते है कि मानवीय मूल्यों की एक लम्बी सूची है। आज यह स्थिति है कि मानव जीवन के जितने पक्ष है उतने ही प्रकार के मूल्य मानव के लिए है जैसे– सामाजिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य धार्मिक मूल्य, नैतिक मूल्य, राजनैतिक मूल्य, आर्थिक मूल्य और सौन्दर्य मूल्य।

हमारे भारतीय समाज में जितनी भौगोलिक परिस्थिति विषम व विभिन्न है उसके विपरित हमारे समाज में मानवीय मूल्यों की समरस्ता है मानवीय मूल्यों का हर एक पहलू हर भौगोलिक परिस्थिति में समान है।

हमारा संविधानिक अधिकार, कर्तव्य व न्याय इन तीन पक्षों के आधार पर सभी लोगों को समान अवसर प्रदान करता है। भारत के सभी नागरिक चाहे वे पूर्वी राज्यों जैसे अरूणाचल प्रदेश, त्रिपुरा, मिजोरम, के हो या पठारी क्षेत्र जैसे मध्य प्रदेश, कर्नाटक, तेलांगना आदि के हो चाहे पर्वतीय क्षेत्र जैसे जम्मू कश्मीर, लद्‌दाख, उत्तराखण्ड या हिमाचल के हो या समुद्र तटीय क्षेत्र के हो सभी समान अधिकार और न्याय के हकदार है।

जहां हमारा संविधान सभी के लिए भेदभाव से रहित है वही मानवीय नागरिकों के भी कुछ कर्तव्य है प्रत्येक व्यक्ति अपने–अपने क्षेत्र व भौगोलिक परिस्थितियों में मानवीय मूल्यों का ध्यान रख कर अच्छे से जीवन निर्वाह कर सकता है। परन्तु कही न कही दुर्भाग्य वश हम पाते है कि मानवीय मूल्य सिर्फ किताबों, उपदेशों व भाषणों तक ही सीमित रह गया है। व्यवाहारिक रूप में नहीं मिलता है। हमारे समाज में विसंगतियों जैसे अपराध, भ्रष्टाचार, बाल–श्रम, यौन अपराध, मुनाफाखोरी, रिश्वतखोरी, महिलाओं का शोषण आादि भी मिलती है। अगर थोड़ा और बारिकी

से देखे तो पता चलता है कि मूल्यों की अवहेलना होने से लोगों का व्यवहार अनिश्चित हो जाता है। लोगों का एक–दूसरे को शंका की दृष्टि से देखने लगते है। समाज में अराजकता का नंगा नृत्य होने लगता है जिनमें मनुष्य जीवन तनावपूर्ण हो जाता है और मनुष्य अपराध की डगर पर भी चल पडता है।

जब हम गौतम बुध द्वारा बताए गए मूल्यों– सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचार्य, की बात करते है तो हम देखते है। ये शब्द हमारे समाज में बच्चे–बच्चे की जुबान पर होते है। परन्तु क्या ये समाज में वस्तविक रूप में है? हमारे देश के विधायक, मंत्री, सांसद व अधिकारी जो राष्ट्रहित के लिए अपने अपने क्षेत्रों में आते है क्या सभी अपने अपने कर्तव्यों का पालन उचित प्रकार से करते है? कुछ अपवाद छोड़ दें तो किसी भी व्यक्ति के व्यवहार में मानवीय मूल्यों का कोई प्रतिबिम्ब लक्षित नहीं होता है।

जहां हम अपने समाज में होने वाले अपराधों की बात करते है तो इन अपराधों के प्रति प्राचीन काल से ही कानून बनते आए है और बनते रहेंगे। परन्तु वे सभी कानून व्यर्थ है जब तक समाज का प्रत्येक व्यक्ति उन्हें मन से अत्मसात न करें। भारतवादी होने के नाते अपने जीवन के अर्थों व व्यवहारों में मानवीय मूल्यों को स्वीकार करे। उन्हें व्यावाहारिकता में परिलक्षित करें। भारत देश में सभी लोगों के लिए समान कर्तव्य, न्याय, अधिकार की व्यवस्था है। सभी लोग न्याय, ईमानदारी, प्रेम, अहिंसा, दया, नैतिकता आदि मानवीय मूल्य के पक्षधर है। सभी का स्वभाव एक समान है। एक त्यौहार या उत्सव किसी घर या परिवार के लिए सीमित नहीं है। पूरा समुदाय आपस में मिलकर एक साथ मनाते है तथा दुख के क्षण में भी एक साथ रहते है।

संक्षेप में कह सकते है भारतवर्ष का भूगोल चाहे कितना ही अलग क्यों न हो यहां के लोग एक दूसरे के धर्म, संस्कृति के प्रति आस्था रखते है। यहां मानवीय मूल्यों में एकरुपता परिलक्षित होती है।

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का अध्ययन

शिव शंकर शुक्ला
शोधकर्ता, ओपीजेएस विश्वविद्यालय, चुरू, राजस्थान

प्रस्तावना

शोधकर्ता द्वारा समय–समय पर देखा जाता रहा है कि किशोर बालकों में बात–बात पर क्रोधित हो जाना, अपराध करना, किसी का सम्मान न करना, समाज में सुसमायोजित प्रवृत्ति के साथ विकसित होना, परिवारों का टूटना, तलाक, अभिभावकों का प्रतिदिन झगड़ना, बच्चों को अधिक समय न देना आदि कारणों से किशोर बालकों का व्यक्तित्व विकास उचित प्रकार से नहीं हो पा रहा है, सभी व्यक्ति आधुनिकता की दौड़ में दौड़ रहे हैं, जहॉ पीछे मूल्य, अपनापन, प्रेम, स्नेह आदि छूटते चले जा रहे हैं, और विकृत व्यक्तित्व तैयार हो रहे हैं। इस परिवेश के आधार पर समाज को बेहद नुकसान पहुॅच रहा है अतः सूक्ष्म एवं विस्तृत स्तर पर इस समस्या का अध्ययन किया जाना आवश्यक है।

क्योंकि वर्तमान समय में आकर्षक व्यक्तित्व भावनात्मक विशिष्टता आदि चिंतन का विषय है कि किस तरह परिवार का वातावरण अनुकूल करके संवेगो में परिपक्वता लाकर, बालक में स्वस्थ व्यक्तित्व का निर्माण किया जाये। वर्तमान में हम 21वीं सदी में पदार्पण कर चुके हैं, जहॉ पर विश्वव्यापीकरण, मीडिया का प्रचार–प्रसार, आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण, इंटरनेट जैसे विभिन्न आयामों के बीच एक व्यक्ति को अपना जीवन यापन करना है। अतः व्यक्तित्व का निर्माण नवीन परिवेश में कैसे हो? संवेगों में परिपक्वता कहॉ से लाई जाये? क्योंकि रेजन परिशोधन करने का समय अभिभावकों के पास नहीं है। पारिवारिक वातावरण दूषित होता जा रहा है, परिवार संयुक्त से एकल हो गये है। इन सभी कारकों के अध्ययन की आवश्यकता है। परिवारों में बच्चों हेतु समय, उन्हें समाज में समायोजित करना, उन्हें बाल्यावस्था से संवेगों हेतु परिपक्व करके एक स्वस्थ व्यक्तित्व का निर्माण कैसे सम्भव हो सकता है।

समस्या कथन

''माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का अध्ययन''

अध्ययन के उद्देश्य

1. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का अध्ययन करना।

2. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में पाये जाने वाले अन्तर का अध्ययन करना।
3. शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में पाये जाने वाले अन्तर का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं

1. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
2. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
3. शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

अध्ययन में प्रयुक्त चर

स्वतंत्र चर – पारिवारिक वातावरण

जनसंख्यात्मक चर – लिंगायत – छात्र/छात्रा

विद्यालय प्रकार –शासकीय/अशासकीय

परिवेश –ग्रामीण/शहरी

शोध सीमांकन

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के अध्ययन की सीमा तथा कार्यक्षेत्र निम्नलिखित स्तर तक परिसीमित है –

1. प्रस्तुत अध्ययन को राजस्थान राज्य के केवल धौलपुर जिले तक सीमित किया गया है।
2. प्रस्तुत अध्ययन को माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों तक ही सीमित किया गया है।
3. प्रस्तुत अध्ययन केवल ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों तक ही सीमित किया गया है।
4. प्रस्तुत अध्ययन केवल शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों तक ही सीमित किया गया है।
5. प्रस्तुत अध्ययन को केवल 400 विद्यार्थियों तक ही सीमित किया गया है।
6. प्रस्तुत अध्ययन विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण तक ही सीमित है।

जनसंख्या

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु राजस्थान राज्य के धौलपुर जिले से 400 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

अध्ययन की विधि

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

उपकरण

प्रस्तुत शोध में स्व निर्मित पारिवारिक वातावरण परिसूची उपकरण का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय विधियॉ

प्रस्तुत शोधकार्य में आंकड़ों के संकलन एवं प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, 'टी' परीक्षण आदि विधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या

परिकल्पना 1

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है। तालिका 1 :–

क0 सं0	समूह	संख्या **N**	मध्यमान **M**	मानक विचलन **SD**	मानक त्रुटि **SEd**	मुक्तांश **df**	''टी'' **t**	सार्थक स्तर
1	छात्र	200	68.5	9.42	2.21	398	0. 97	0.05 असार्थक
2	छात्राएं	200	68.71	8.65				

उपर्युक्त तालिका यह दर्शाती है कि प्राप्त ''टी'' 0.97 का मान 0.05 स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक न्यूनतम टी मान 1.97 से कम है। अतः स्पष्टतः दोनों मध्यमानों के बीच अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है। अतः शून्य परिकल्पना सत्य है एवं स्वीकृत की जाती है। अतः कह सकते है कि छात्र एवं छात्राओं के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परन्तु कालरा 2004 ने शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन में सार्थक अंतर पाया। दोनों अध्ययनों में अंतर का कारण न्यादर्श में अंतर तथा पारिवारिक

वातावरण व शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में अध्ययन के कारण पाया गया। वर्तमान में अभिभावकों के द्वारा छात्र–छात्राओं का एक समान लालन–पालन किया जा रहा है। दोनों को समानान्तर शिक्षा दी जा रही है।

परिकल्पना 2

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण के मध्यमानों का ''टी'' विश्लेषण, तालिका 2:–

क0 सं0	समूह	संख्या N	मध्यमान M	मानक विचलन SD	मानक त्रुटि SEd	मुक्तांश df	''टी'' t	सार्थक स्तर
1	छात्र	200	70.65	8.86	2.22	398	5.16	0.05
2	छात्राएं	200	82.07	9.10				सार्थक

उपर्युक्त तालिका 4.9 यह दर्शाती है कि प्राप्त ''टी'' 5.16 का मान 0.05 स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक न्यूनतम टी मान 1.97 से अधिक है। अतः स्पष्टतः दोनों मध्यमानों के बीच अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना असत्य है एवं अस्वीकृत की जाती है। अतः हम कह सकते हैं कि ग्रामीण विद्यार्थी एवं शहरी विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में सार्थक अन्तर है।

अर्थात हम कह सकते है कि ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के मध्यमान क्रमशः 70.65 एवं 82.07 है को देखने पर ज्ञाता होता है कि ग्रामीण विद्यार्थियों की अपेक्षा शहरी विद्यार्थियों का पारिवारिक वातावरण उच्च है।

परन्तु वर्मा उर्मिला ने 2011 शहरी एवं ग्रामीण छात्र–छात्राओं की संज्ञानात्मक योग्यता सामान्य बुद्धि एवं पारिवारिक वातावरण के अध्ययन में महत्वपूर्ण अन्तर पाया गया है। दोनों अध्ययनों में समानता का कारण है कि परिवेश स्थान, परिवार उपलब्ध साधनों एवं अभिप्रेरणा का प्रभाव व्यक्तित्व विकास में अदभुत रूप से दृष्टिगोचर होता है।

परिकल्पना 3

शासकीय विद्यालय एवं अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत शासकीय एवं अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण के मध्यमानों का ''टी'' विश्लेषण, तालिका 3ः—

क0 सं0	समूह	संख्या N	मध्यमान M	मानक विचलन SD	मानक त्रुटि SEd	मुक्तांश df	''टी'' t	सार्थक स्तर
1	शासकीय विद्यालय के विद्यार्थी	200	73.18	10.84	1.87	398	3.45	0.05 सार्थक
2	अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थी	200	79.65	10.47				

उपर्युक्त तालिका 4.12 यह दर्शाती है कि प्राप्त ''टी'' परीक्षण गणना द्वारा प्राप्त मान 3.45 है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक न्यूनतम टी मान 1.97 से ज्यादा है। इसलिए छात्र एवं छात्राओं के दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर है।

अतः स्पष्टतः दोनों मध्यमानों के बीच अवलोकित अंतर 0.05 स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना असत्य है एवं अस्वीकृत की जाती है। अतः हम कह सकते है कि शासकीय विद्यालय एवं अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में सार्थक अन्तर है।

इस कथन की पुष्टि विक्रम 2011 का अध्ययन करता है इन्होंने शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों की गणित विषय में शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण पाया।

दोनों अध्ययनों में समानता के कारण कह सकते हैं कि शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है क्योंकि यदि उचित देखरेख, सहयोग की भावना, अनुकूल वातावरण आदि मिले तो उच्च शैक्षिक उपलब्धि संवेगों में परिपक्वता एवं उचित व्यक्तित्व का विकास होता है एवं प्रतिकूल वातावरण के कारण ये अविकसित रह जाते हैं।

निष्कर्ष

परिकल्पना 1— माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होने के सन्दर्भ में अध्ययन किया, और सार्थक अन्तर नहीं (मुक्तांश 398 टी 0.97) पाया गया। अर्थात् छात्र एवं छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एक समान पाये गये।

परिकल्पना 2– माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होने के सन्दर्भ में अध्ययन किया और सार्थक अन्तर (मुक्तांश 398 टी 5.16) पाया गया। अर्थात् श्ग्रामीण विद्यार्थियों की तुलना में शहरी विद्यार्थियों का पारिवारिक वातावरण उत्तम पाया गया।

परिकल्पना 3– माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत शासकीय एवं अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं होने के सन्दर्भ में अध्ययन किया और निष्कर्ष रूप में पाया कि सार्थक अन्तर (मुक्तांश 398 टी 3.45) है अर्थात् शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों का पारिवारिक वातावरण उच्च पाया गया, क्योंकि माता–पिता विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में परिवार की अहम् भूमिका के परिप्रेक्ष्य में जागरूक हो रहे हैं।

शैक्षिक महत्व

शोधकार्य में प्राप्त निष्कर्ष एवं परिणामों का समाज एवं राष्ट्र की उन्नति में महत्वपूर्ण स्थान होता है। अनुसंधान द्वारा मूलभूत समस्याओं के उचित समाधान हेतु निष्कर्ष निकाले जाते हैं, जो ज्ञान वृद्धि एवं जनकल्याण में सहायक होते हैं।

परिवार हेतु सुझाव

पारिवारिक वातावरण में जो सबसे महत्वपूर्ण है वो यह कि सभी को बराबरी का सम्मान और स्थान मिले। यह नहीं कि कोई छोटा हो तो उसे कम सुविधायें या कोई कम कमाता हो तो उससे सही वर्ताव न करना। यह असमानता बच्चे के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डालती है, इसलिए बच्चे के सामने सबसे सही व्यवहार करना चाहिए, ताकि उसे गलत शिक्षा न मिले तथा यह परवरिश उसके साथ ताउम्र रहे।

आदर या सम्मान की भावना दिल से किसी के लिए आती है। बच्चों को यह शुरू से समझाना चाहिए कि चाहे छोटा हो या बड़ा, अमीर या गरीब उसे दिल से सम्मान करें। किसी को आप कुछ मत दीजिए लेकिन सम्मान दीजिए और आदर देने की यह शुरूआत परिवार से होती है क्योंकि बच्चा बचपन में जो देखता है वही सीखता है क्योंकि रिश्तों में ईमानदारी और विश्वास जरूरी होता है। बच्चों को बचपन से ही रिश्तों के प्रति विश्वास तथा ईमानदारी का वातावरण दिया जाये तो आगे आने वाले समय में वो जितने भी रिश्ते बनायेंगे वो स्थायी और मजबूत होगे। इससे उनके जीवन में मजबूत रिश्तों के कारण स्थायित्व बना रहेगा। यह भी सही है कि बच्चे देखकर ही सीखते हैं इसलिए घर में रिश्ते की यह आदर्श मिसाल जरूर पेश करें।

इस प्रकार अध्यापक, परिवार यदि सकारात्मक दृष्टिकोंण बनाये रखें व अपनी जिम्मेदारी को समझें तो ऐसे अवसरों की कमी नहीं, जिनका उपयोग करके विद्यार्थियों में मूल्यों का सम्बर्द्धन का बेहतरीन प्रयास करके उनका व्यक्तित्व विकसित किया जा सकता है।

शिक्षकों हेतु सुझाव

विद्यार्थियों में नेतश्त्व गुणों का विकास करने हेतु समूह कार्य, भाषण, वाद–विवाद, समूह गान, नृत्य एवं इन सभी कार्यों से आने वाली समस्याओं का समाधान करने का अवसर व प्रेरणा प्रदान करे।

बाल शिक्षा, बाल व्यवहार, किशोर किशोरियों की अनेक समस्याओं का निदान परामर्श केन्द्र, रैगिंग, शिकायत निवारण कक्ष, यौन समस्या निदान केन्द्र, आदि की व्यवस्था अवश्य की जानी चाहिए जिससे उनका शारीरिक, मानसिक विकास किया जा सके।

कक्षा शिक्षण के अवलोकन द्वारा ज्ञात होने पर पिछड़े छात्र, उग्र छात्र, समस्याग्रसित छात्रों हेतु उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाये।

विद्यार्थियों हेतु सुझाव

शिक्षण जीवन काल बहुमूल्य काल होता है और यह सम्पूर्ण जीवन का आधार है। अतः विद्यार्थियों को समय का मूल्य पहचानना चाहिए।

विद्यालय का वातावरण, शिक्षकों का व्यक्तित्व तथा विद्यालय में उपलब्ध भौतिक सुविधायें, विद्यार्थियों में जीवन मूल्य प्रदान करने में सहायक होते हैं। इन्हें विद्यार्थियों को अपने सर्वांगीण विकास में उपयोग करना चाहिए।

सन्दर्भ

1. *अस्थाना ऊषा (1990). ''बाह्य व आंतरिक नियंत्रयण की स्थितियों में प्रदर्शन के निर्धारक तत्वों के रूप में व्यक्तित्व के गुणों का अध्ययन,'' फिफथ सर्वे ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, 1988–92 वाल्यूम II रा0 शै0 अं0 प्र0 प0 नई दिल्ली पृष्ठ क0 866*
2. *अस्थाना विपिन (2008). ''मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन,'' अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, पृ0 क0 105*
3. *ओझा टीना 2009–10 ''रतलाम नगर के हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों में आत्म प्रत्यय, नैतिक मूल्य, व्यक्तित्व और सृजनात्मकता का अध्ययन'' – राजीव गॉधी महाविद्यालय, भोपाल*
4. *कालरा पियारी 2004 ''पारिवारिक वातावरण एवं आय के निर्धारक द्वारा शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन'' व्हिवेरियल सांइटिस्ट वाल्यूम न0 12 नं0 1, रा0 शै0 अं0 प्र0 प0 जनवरी 2004 पृष्ठ 136.*
5. *कपिल एच0 के0 (2006). ''अनुसंधान विधियॉ,'' एच0 पी0 भार्गव बुक हाऊस, आगरा, पृष्ठ क0 136*
6. *कपिल एच0 के0 (2007). ''अपसामान्य मनोविज्ञान,'' एच0 पी0 भार्गव बुक हाऊस, आगरा, पृष्ठ क0 136।*

कल्याणकारी अर्थशास्त्र एवं मानवीय मूल्य

डॉ. सीमा मलिक
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स डिग्री कॉलेज, मुरादाबाद–244001.

कल्याणकारी अर्थशास्त्र का उदय इंग्लैण्ड में हुआ जो परम्परावादी अर्थशास्त्र विशेषकर ''स्वतंत्रता छोड़ो'' सिद्धांत के खण्डन की ओर एक प्रत्यक्ष प्रयास था परम्परावादी अर्थशास्त्रियों का मुख्य उद्‌देश्य धन एवं उत्पादन को अधिकतम करना था जबकि कल्याणकारी अर्थशास्त्री कल्याण वृद्धि को सभी आर्थिक विचारों एवं नीतियों का लक्ष्य मानते हैं। प्रो० एल्फ्रेड मार्शल कल्याणकारी अर्थशास्त्र का निर्माता कहे जाते है इस विचार को आगे बढ़ने में अनेक लेखकों ने योगदान दिया जैसे हैनरी क्ले, हाट्रे, एजवर्थ, पैरेटोहाबसन और पीगू।

कल्याणकारी अर्थशास्त्र की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि यह परम्परावादी सिद्धांतों का संशोधन करने तथा अर्थशास्त्र को सामाजिक कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु निर्मित की गयी सामाजिक नीतियों का प्रबंध करने योग्य बनाने की ओर एक प्रवृत्ति है। रैडर के अनुसार, ''कल्याणकारी अर्थशास्त्र, अर्थशास्त्र की वह शाखा है, जिसमें आर्थिक नीतियों की उपयोगिता को आँकने के लिये प्रयत्न किये जाते हैं।'' रैडर के विचार में यह चिकित्सा शास्त्र की भांति ही वैज्ञानिक है और इसका माप करना भी कठिन नहीं है। यह कहा जा सकता है कि परम्परावादी लेखकों ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था को एक विज्ञान के रूप में माना जिसका वाह्य मूल्यवान वस्तुओं या आर्थिक वस्तुओं अथवा धन के साथ संबंध है। अर्थशास्त्र को धन के विज्ञान के रूप में परिभाषित करते समय आगे उन्होंने स्थापित किया कि धन मनुष्य के आर्थिक कल्याण को बढ़ावा देता है। अर्थशास्त्र मुख्य रूप से कल्याण या न्यूनतम भौतिक सुख से सम्बन्धित है।

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर के रूप में प्रो. पीगू जो कि मार्शल के उत्तराधिकारी थे, मार्शल के उपरांत नवपरम्परावादी अर्थशास्त्रियों के प्रधान बन गये वह कल्याणकारी अर्थशास्त्र के संस्थापक है। उनके कल्याणअर्थशास्त्र पर मुख्य विचार उनकी पुस्तक Economics of Welfare (1920) में मिलते है। प्रो० पीगू ने कल्याण शब्द को लोकप्रिय बनाया और इसको एक सारभूत अर्थ दिया गया पीगू ने तीन बातों का वर्णन किया–(1) आर्थिक कल्याण की परिभाषा (2) उन दशाओं का वर्णन जिनके अन्तर्गत कल्याण अधिकतम होता है। (3) कल्याणको बढ़ाने के लिए नीतिगत सुझावों का निर्णय।

पीगू के अनुसार व्यक्तिगत कल्याण वस्तुओं और सेवाओं के उपयोग से प्राप्त संतुष्टियों का योग होता है सामाजिक कल्याण समाज में सभी व्यक्तिगत कल्याण का योगदान होता है।

चूँकि सामान्य कल्याण काफी विस्तृत और जटिल हैं। उन्होंने अपने अध्ययन को आर्थिक कल्याण तक सीमित रखा। पीगू आर्थिक कल्याण और राष्ट्रीय आय को समान मानते थे उन्होंने कल्याण के अधिकतम के लिए दो शर्तें बताई (1) रूचि और आय वितरण स्थिर रहने पर, राष्ट्रीय आय में वृद्धि कल्याण में वृद्धि को प्रदर्शित करती है। (2) अधिकतम कल्याण के लिए राष्ट्रीय आय का वितरण समान रूप से महत्वपूर्ण है अगर राष्ट्रीय आय स्थिर है तो धनी से गरीब के बीच आय का हस्तान्तरण कल्याण में सुधार करेगा। अमीर से गरीब को आय का हस्तान्तरण निर्धनों की काफी तीव्र आवश्यकताओं द्वारा समाजकल्याण में वृद्धि करेगा। इस प्रकार यह आर्थिक समानता है जो कल्याण को अधिकतम करती है।

पीगू और उनके अनुयायियों ने जिस कल्याणकारी अर्थशास्त्र को विकसित किया था उसके बिल्कुल भिन्न बिलफ्रेडो, पैरेटो ने कल्याणकारी अर्थशास्त्र प्रस्तुत किया जिसको एजवर्थ, हिक्स, कैलडोर, बैरोन, लर्नर, रैडर, सैम्युलसन इत्यादि लेखकों ने आगे बढ़ाया। नवीन कल्याणकारी अर्थशास्त्र अपने स्वभाव में आदर्शवादी हैंऔर इसके मूल्य सम्बन्धी निर्णयों तथा उपयोगिता के प्रमाप से भी मुक्त है। इसका दावा है कि इनसे विभिन्न व्यक्तियों की उपयोगिता को जोड़े बिना उत्पादन तथा विनिमय की आदर्श स्थितियाँ स्थापित की है। नवीन कल्याणकारी अर्थशास्त्र के तीन उद्देश्य है। (1) धनसम्बन्धी अस्पष्ट विचार को परिमाणात्मक शब्दों में व्यक्त करना (2) यह स्पष्ट करना है कि सार्वजनिक नीतिसम्बन्धी मामलों पर अर्थशास्त्रियों को क्या कहना है, और वे आर्थिक दृष्टिकोण से वांछनीय है अथवा नहीं (3) उन बातों को विकसित करना जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आत्मिक बातों से स्वतंत्र हैं और जो नीतिनिर्माण का आधार बन सकती है। प्रथम उद्देश्य के विषय में बोल्डिंग का कहना है कि अर्थशास्त्र का प्रमुख सम्बन्ध भौतिक एवं अभौतिक वस्तुओं से है, जिनका उत्पादन, विनिमय तथा उपभोग किया जाता है। उनका सम्बन्ध मनुष्य से नहीं जो उत्पादक, वितरक, विनिमयकर्ता और उपभोक्ता है। इस अर्थ में किसी भी देश का आर्थिक कल्याण राष्ट्रीय आय की वृद्धि के अनुपात में बढ़ेगा। दूसरे उद्देश्य का सम्बन्ध आदर्शतम सामाजिक स्थिति से है, जोमानव कल्याणकारी अर्थशास्त्र का आकर्षक बिन्दु है। समाज की आदर्शतम स्थिति से अभिप्राय अधिकतम सामाजिक उपयोगिता से है। जो सभी व्यवस्थाओं की उपयोगिता का योग है। तीसरे उद्देश्य में तीन बातें सम्मिलित हैं। (क) जहाँ तक सम्भव हो सभी कर सीमारहित हो और पिण्डराशि के रूप में वसूल किये जाये। (ख) पूर्ण बाजार अर्थात् एक ऐसा बाजार स्थापित किया जाए जिसमें सभी व्यक्तियों के लिए समान मूल्य हो ऐसी स्थिति में सभी व्यक्ति अपने लाभों तथा सन्तुष्टियों को अधिकतम करने की स्थिति में होंगे (ग) आदर्शतम सामाजिक स्थिति से सम्बन्धित आवश्यक बातें एक सुनियोजित सामाजिक प्रणाली में ही पूरी हो सकती है, पूँजीवादी प्रणाली में नहीं।

इस प्रकार नवीन कल्याण अर्थशास्त्र नीतिनिर्माण के निर्देशन पर बल देता है। जिससे कि मानव जाति के कल्याण एवं सुख को अधिकतम बनाया जा सके, एवं उच्च मानवीय मूल्यों को स्थापित किया जा सके।

शिक्षा में मानवीय मूल्य एवं व्यावसायिक नैतिकता

डॉ. शुचि श्रीवास्तव
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (शिक्षाशास्त्र)
कन्या महाविद्यालय आर्य समाज, भूड़, बरेली।

शिक्षा मानव जीवन में दैवीय वरदान स्वरूप है जिसके माध्यम से मनुष्य पुनः जन्म लेता है, पूर्णता की ओर अग्रसर होता है और जीवन के लक्ष्यों को शिष्टतापूर्ण प्राप्त कर लेता है। वह अपने चतुर्दिक वातावरण को भी परिष्कृत करता है, परन्तु आज का शैक्षिक वातावरण दूषित होता जा रहा है। पढ़ा लिखा युवक भी कभी–कभी अशिक्षित युवकों के समान क्रियाकलाप करता नज़र आ रहा है। मानवीय मूल्य समय की धारा में बहते प्रतीत होने लगे हैं। स्वार्थपरता इतनी हावी होती जा रही है कि मनुष्य अपने मूल्यों को खो रहे हैं। स्त्री हो या पुरुष किसी का भी अपने मूल्यो से भी वंचित रहना उसके अपूर्ण मानसिक विकास का परिचय है। विद्यालयों में हम छात्रों को विविध विषयों का ज्ञान प्रदान करते हैं किन्तु उनके व्यवहार, स्वभाव, आचरण आदि के परिमार्जन के लिये लेशमात्र उपाये नहीं करते। विद्यालय का पाठ्यक्रम भी ऐसा है, जो बालकों को मूल्यों व आदर्शों की जानकारी नहीं देता जिसकी प्रत्येक जागरुक नागरिक को आवश्यकता प्रतीत होती है।

मानवीय मूल्य मनुष्य के जीवन की उत्तम धारणा है। यह मनुष्य के आदर्श, उद्देश्य, लक्ष्य तथा जीवन को साध्य बनाते हैं और मनुष्यों में श्रद्धा, विश्वास तथा प्रेरणा का संचार करते हैं। उत्तम जीवन–यापन हेतु मनुष्य को बुरे व्यसनों व बुरी आदतों को छोड़कर प्रेम, सत्य, धैर्य, दया, क्षमा, न्याय आदि मूल्यों को अपनाना होगा।

मूल्य एक आचार संहिता या सद्गुण समूह है। जिसे अपने संस्कारों तथा पर्यावरण के माध्यम से अपनाकर मनुष्य अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपनी जीवन शैली का निर्माण करता है और अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। यह बहुत कुछ घर के परिवेश तथा माता–पिता द्वारा प्रदत्त संस्कारों पर भी निर्भर करते हैं। अतः अपने–अपने परिवेश तथा संस्कारों से व्यक्ति का अपना–अपना संसार बनता है। इसके अतिरिक्त मूल्यों के निर्माण में काफी कुछ भूमिका शिक्षा अदा करती है।

शिक्षा मानवीय मूल्यों को पोषित करती है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जो हमारे समाज में शाश्वत एवं सर्वव्यापी मूल्यों को प्रोत्साहित करे जिससे भारतीय जन में राष्ट्रीय भावना का प्रादुर्भाव हो और साम्प्रदायिकता, हिंसा, अन्धविश्वास, भ्रष्टाचार समाप्त हो। इस हेतु पाठ्यक्रम में बदलाव आवश्यक है। सामाजिक जीवन से सम्बन्धित नैतिक क्रियाओं को पाठ्यक्रम का प्रमुख केन्द्र मानकर शेष विषयों को इसके अधीन किया जाना चाहिये। प्राथमिक स्तर पर बालकों में बड़ों के प्रति आदर व श्रद्धाभाव का गुण विकसित किया जाना चाहिये जो ऊपरी व दिखावटी न हो बल्कि मन से हो। माध्यमिक स्तर पर राष्ट्र व विश्व के प्रोत एवं मानवता के प्रति श्रद्धाभाव जाग्रत करना होगा। उच्च स्तर पर भी पूर्वाजित प्रेम एवं श्रद्धा की मीमांसा करनी

होगी। तर्क, मनन एवं चिन्तन के आधार पर निष्कर्ष निकालने होगे तथा विभिन्न धर्मों में व्याप्त एकता को ढूँढना होगा। अतः पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसके द्वारा छात्रों में सकारात्मक नैतिक मूल्यों का विकास हो और वे अपनी राष्ट्रीय विरासत एवं राष्ट्रीय धरोहर को समझे। विद्यालय की औपचारिक तथा अनौपचारिक गतिविधियों का संगठन इस प्रकार हो कि वे बालकों में मूल्यों का विकास करें। विद्यालय के चारों वर्गों—प्रधानाचार्य, शिक्षक, छात्र व कर्मचारी के मध्य की परस्पर अन्तःक्रिया इस प्रकार की हों कि कहीं भी वैमनस्य, कटुता व अनुशासनहीनता की झलक न मिले बल्कि मूल्यों का दिग्दर्शन हो।

आज जिस तरह मूल्यों का ह्रास हो रहा है और मनुष्य स्वार्थी होता जा रहा है उसमें कहीं न कहीं शिक्षा भी जिम्मेदार है। मनुष्य को सभ्य एवं सुसंस्कृत नागरिक बनाने हेतु तथा देश के सुखद भविष्य हेतु यह आवश्यक है कि शिक्षा द्वारा उनके मूल्यों का संरक्षण एवं वकास हो।

व्यवसाय जगत की यदि बात की जाये तो आज के प्रतिस्पर्धी युग में मनुष्य में धन कमाने की होड़ है, चाहे वस्तु हो या सेवा उसके विक्रय के माध्यम से अधिक से अधिक लाभ कमाना प्रतयेक व्यापारी का मुख्य उद्देश्य है। जिसके फलस्वरूप व्यावसायिक नैतिकता का भाव धूमिल होता जा रहा है। जिससे सामान्य व्यक्ति के मन में यह धारणा पनप रही है कि मेहनतकस व ईमानदार व्यक्ति पिस रहे हैं और झूठ—फरेब का रोजगार बढ़ रहा है। इस धारणा ने अनुशाासनहीनता, श्रम के प्रति अनास्था, स्वं कर्तव्य के प्रति उदासीनता, अनुत्तरदायित्व आदि को जन्म दिया है।

मनुष्य के मानवीय मूल्य व्यावसायिक नैतिकता की ओर ले जाते हैं। एक ईमानदार व्यक्ति अपने व्यवसाय में भी ईमानदारी से कार्य करेगा। इसी रूप में वह स्वयं व व्यवसाय में भी सन्तुष्टि पायेगा। मनुष्य के सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्य—बोधक, सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक मूल्य न केवल उसके व्यक्तिगत जीवन को पथ—प्रदर्शित करते हैं बल्कि उसके व्यावसायिक जीवन को भी सही राह दिखाते हैं। व्यावसायिक जीवन में ईमानदारी व सन्तुलित ढंग से कार्य करना हमारी व्यावसायिक नैतिकता के अन्तर्गत आता है। यह भाव व्यक्तियों में तभी जागृत हो सकेगा जब सभी व्यक्ति सकारात्मक सोंच रखें व स्वयं व अपने सार्थियों के प्रति, स्वदेश के प्रति, मानवता के प्रति, सभी धर्मों व संस्कृतियों के प्रति, जीवन व पर्यावरण के प्रति समुचित दृष्टिकोण विकसित करें तथा श्रम के प्रति आस्था रखें।

मनुष्य के सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों में आ रही गिरावट को रोकने तथा व्यक्तिों में मानवीय मूल्यों के सृजन तथा व्यावसायिक नैतिकता विकसित करने हेतु हमें अपनी शिक्षा में सुधार व परिवर्तन की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. *पाठक, पी0डी0, ''भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें'', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।*
2. *सिंह रामपाल, ''भावी शिक्षक हेतु अनुसन्धान कार्यक्रम'', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।*
3. *अग्रवाल सौरभ, ''शिक्षा के सिद्धान्त'' एस0बी0पी0डी0 पब्लिशिंग हाउस, आगरा।*
4. *लाल बिहारी रमन, 'शिक्षा दर्शन'' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।*

ISBN: 978-93-93248-08-4 : मूल्यों के विविध आयाम

शिक्षा एवं मानवीय मूल्य

डॉ. विजय सिंह
शिक्षक, भारतीय इण्टर कॉलेज, न्यौराई एटा।

शिक्षा एवं मानवीय मूल्यों का पारस्परिक सम्बन्ध पाया जाता है। शिक्षा में यदि मानवीय मूल्यों को शामिल किया जाता है, तो शिक्षा व्यवस्था को अच्छा बनाया जा सकता है। शिक्षा मूल्यवान तभी समझी जायेगी जब उसमें विभिन्न मानवीय मूल्यों को शामिल किया जायेगा। शिक्षा– प्रक्रिया में जिन क्रियाशीलताओं का विशेष महत्व होता है, वे बहुत मूल्यवान समझी जाती हैं। इनसे विद्यार्थी नई बातें सीखते हैं। इन क्रियाशीलताओं के आधार पर ही विद्यार्थी कुछ गुण, आदत तथा योग्यता और विशिष्ट कौशल अपनाता है। ये शैक्षिक मूल्य कहे जा सकते हैं। मानवीय मूल्यों को कई वर्गो में बाटा जा सकता है जैसे– शिष्टाचार, अनुशासन, करूणा, देशभक्ति, शान्ति, अहिंसा, धर्मनिरपेक्षता, समय की पाबन्दी, न्याय, सत्यता, सहिष्णुता, ईमानदारी, जिज्ञासा, साहस, समाज–सेवा, सहयोग, राष्ट्रीय एकता, आत्म–विश्वास, अखण्डता, स्वतंत्रता, मित्रता, नेतृत्व, दूरदर्शिता आदि हैं। इन सभी मानवीय मूल्यों को विभिन्न पाठ्यक्रम में शामिल करके विद्यार्थियो को सिखाया जाये तो अच्छे विद्यार्थी व अच्छे व्यक्तियों का निर्माण किया जा सकता है।

मूल्य, अभिवृत्तियाँ तथा आदर्श हमारे व्यवहार को निर्देशित तथा नियन्त्रित करते हैं। मूल्यों से अभिप्रेरणा को दिशा मिलती है। हमारे व्यवहार का नियन्त्रण करने में मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये अभिप्रेरणा को शक्ति देते हैं, आवश्यकताओं की सम्पुष्टि के स्वरूप को निर्धारित करते हैं एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के साधनों के चयन में निर्णय लेने में निर्णायक का कार्य करते है। हम सहयोग करेंगे अथवा असहयोग, सहनशील होगे अथवा असहनशील, उदार–हृदय होगें अथवा संकीर्ण हृदय, आत्मविश्वासी होंगे अथवा भयभीत यह हमारे विचारों पर निर्भर नहीं करता। यह हमारे मूल्यों द्वारा हमारे स्थायी भावों तथा अर्जित परिमार्जित मूल प्रवृत्तियों के द्वारा निश्चित होता है। जीवन और संसार को हम जिस अर्थ के सन्दर्भ में समझने की चेष्टा करते हैं उस अर्थ को सामान्य रूप से मूल्य कहा जाता है। कुछ दार्शनिक मूल्यों को वस्तुनिष्ठ अर्थात विषय अथवा पदार्थ पर आधारित मानते हैं तो कुछ अन्य विचारक इन्हें व्यक्तिनिष्ठ अथवा व्यक्ति के अनुभव पर आधारित मानते हैं। मूल्यों का वर्गीकरण ज्ञानशास्त्रीय वर्गीकरण से भिन्न हैं। अतः मूल्यशास्त्र में वस्तुनिष्ठता का तात्पर्य '' देश व काल में अस्तित्व'' से नहीं लगाया जा सकता है। मूल्यों की व्यक्तिनिष्ठ विचारधारायें पदार्थो का मूल्यांकन मनुष्यों की व्यक्तिगत सन्तुष्टि के सन्दर्भ में करती हैं। जबकि वस्तुनिष्ठ विचारधारायें मानवीय सन्तुष्टि का ध्यान रखते हुए भी कुछ वस्तुनिष्ठ सिद्धान्तों पर विश्वास रखती हैं और उन सिद्धान्तों के

अनुसार ही मूल्यशास्त्र के सिद्धान्त को स्थायी करती हैं। ध्यान से देखने पर पता चलता है कि मूल्य को व्यक्तिगत सन्तुष्टि पर आधारित कर देना मूल्यों के मूल्य को ही समाप्त कर देना है। इसलिए शिक्षा की दृष्टि से इन व्यक्तिनिष्ठ विचारधाराओं का अधिक महत्व नहीं है। मूल्य एक न होकर अनेक होते हैं। भौतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों के रूप में भी उनका वर्गीकरण किया जाता हैं। नैतिक, आर्थिक आदि दृष्टियों से भी मूल्यों की श्रेणियाँ बनाई जाती हैं। किन्तु ये वर्गीकरण सुविधा की दृष्टि से ही हैं।

शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत बालक सत्य के आधार पर अंहिसा द्वारा प्रेमपूर्वक जीवन यापन करना सीखें। शिक्षा से ऐसा मनुष्य बनाना है जो स्वयं स्वेच्छा से विभिन्न मानवीय मूल्यों का पालन करें। इसके लिए शिक्षा द्वारा व्यक्ति की आत्मा जाग्रत करना आवश्यक है शिक्षा ऐसी दी जानी चाहिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति यह समझे कि वह स्वयं क्या है? उसके कर्त्तव्य क्या है ? उसे जीवन में किसे प्राथमिकता देनी चाहिए। विद्यार्थियों में अच्छे मानवीय मूल्यों का विकास करने के लिए विद्यालय में विभिन्न महापुरूषो की जयन्तियों, धार्मिक उत्सवों का आयोजन करना चाहिए। शिक्षक का व्यवहार वैयक्तिक मूल्यपरक शिक्षा तभी दे सकता है जब उसमें स्वयं अच्छे मूल्य हो। शिक्षा में विभिन्न मानवीय मूल्यों के विकास में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने महत्वपूर्ण कदम उठाया है। विभिन्न मानवीय मूल्यों को पाठ्यक्रम में शामिल करने का सुझाव दिया है। अतः वर्तमान समय में शिक्षा में मानवीय मूल्यों को शामिल किया जाना चाहिए। जिससे शिक्षा समाज व देश के अनुकूल होगी।

आज समाज में चारों ओर नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों में गिरावट देखने को मिल रही है। इस गिरावट के फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में भी गिरावट देखने को मिलती है। आज समाज में सामान्य आदमी की यह धारणा है कि मेहनकश एवं ईमानदार व्यक्ति पिस रहे हैं और झूठ एवं फरेब का रोजगार करने वाले फल–फूल रहे हैं। ईमानदार व्यक्ति को मूर्ख माना जाता है। इस धारणा ने शिक्षा के क्षेत्र में अनुशासनहीनता, श्रम के प्रति अनास्था, स्वकर्तव्य के प्रति उदासीनता आदि को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

उक्त स्थिति ने आज मानवीय मूल्यों को शामिल करते हुए मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता को अनुभूत कराने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। हमारे कर्णधारों की समझ में यह बात आ गई है कि मानवीय मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा के अभाव में शिक्षा में गुणात्मक सुधार की आशा नहीं की जा सकती है। अतः भारत के कर्णधारो ने नई शिक्षा नीति में इस ओर अपेक्षित ध्यान दिया है। विद्यार्थियों को निम्न मानवीय मूल्य सिखाये जाने चाहिए जो निम्न हैं। जैसे– सच्चाई, सहयोग, साहस, परोपकार, देशभक्ति, ईमानदारी, विनम्रता, अंहिसा, सहानुभूति, प्रेम, क्षमा, मित्रता, सादगी, निर्भीकता, अनुशासन, दान, दया, धैर्य, सहिष्णुता, तत्परता, आत्मविश्वास, आदर, संयम, करूणा, शिष्टाचार, भक्ति, अखण्डता, शूचिता, निष्कपटता, आत्म–नियन्त्रण, साधन– सम्पन्नता, नियमितता, सादा जीवन, सामाजिक न्याय, स्व–सहायता, स्वध्याय,

समाज–सेवा, स्वच्छता, जिज्ञासा, धर्म सहनशीलता, समानता, मित्रता, बफादारी, दूरदर्शिता, सज्जनता, कृतज्ञता, सहायकता, मानवतावाद, सत्यता, नेतृत्व, राष्टीय एकता, राष्ट्रीय सचेतनता, शान्ति, समाजवाद, सहानुभूति, दलभावना, समय की पाबन्दी, दल कार्य, श्रम में निष्ठा, नम्रता, भव्यता, घृणा से मुक्ति, संतोष, सादा जीवन, चोरी न करना आदि है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली NCERT ने 83 मूल्यों का उल्लेख किया है।

विद्यार्थियों को मानवीय मूल्य सीखने के लिए प्रेरिता किया जाना चाहिए। मूल्यपरक शिक्षा में विद्यार्थी को अनुभव से जोड़ना चाहिए। विद्यालय में विभिन्न महापुरूषों की जयन्तियों, धार्मिक उत्सवों का आयोजन करना चाहिए। विद्यालय में समय–समय पर भाषण, संगोष्ठी, निर्देशन आदि को अपनाया जा सकता है। आपसी सहयोग एवं सद्भावना के माध्यम से विद्यार्थियों में विभिन्न मानवीय मूल्यों के प्रति आदर को अधिकाधिक अवसर प्रदान किये जाने चाहिए। शिक्षक का व्यवहार वैयक्तिक मूल्यपरक शिक्षण तभी दे सकता है। जब उसमें स्वयं अच्छे मूल्य विकसित होंगे। यदि शिक्षक में अच्छे मानवीय मूल्य विकसित होंगे। तो विद्यार्थी शिक्षक को उदाहरण के रूप में प्रेरणा बना सकता है। उपदेश से उदाहरण श्रेष्ठ है। शिक्षक का स्वयं का आचरण भी ऐसा होना चाहिए कि उसका व्यक्तित्व विद्यार्थियों के लिए अनुकरणीय बन जाये। हर विद्यार्थी का आदर्श उसका शिक्षक ही होता है। वह वही कार्य करने की चेष्टा करता है जो शिक्षक कहता है। शिक्षक जिन मानवीय मूल्यों को विद्यार्थियों को देना चाहता है वह स्वयं उसमें भी व्यक्त होने चाहिए। मानवीय मूल्यों के विकास हेतु पुरानी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सुधार हेतु नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति सामने आई है। नई शिक्षा नीति ने शिक्षा की प्रक्रिया का पुनः अभिविन्यास करने का प्रयास किया है। युवकों को यह अनुभव कराया जाए कि किस तरह से वे शोषण, असुरक्षा को रोक सकते हैं। शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों में सत्य, सहयोग, कर्त्तव्यपरायणता आदि का विकास हो। बालक सबसे पहली शिक्षा माता–पिता से लेता है। अतः माता–पिता का व्यवहार मानवीय मूल्यों से सम्बन्धित होना चाहिए। वर्तमान पाठ्यक्रम में मानवीय मूल्य सम्बन्धी अंशो को पढ़ाना चाहिए, पाठ्य–पुस्तकों में भी मानवीय एवं नैतिक मूल्यों को शामिल किया जाना चाहिए। वर्तमान समाज में मानवीय मूल्यों का ह्रास शिक्षा के लिए एक गम्भीर चुनौती है, जिसे स्वीकार करके शिक्षा को ही मानवीय मूल्यों के ह्रास को रोका जा सकता है राष्ट्र व समाज के विकास के लिए शिक्षा ही एक प्रमुख साधन है। इसके द्वारा मानव के शिवत्व एवं विनाश दोनों की ही स्थितियाँ उपस्थित हो सकती हैं। कुशिक्षा स्वयं के लिए ही नहीं, अपितु समाज और राष्ट्र के लिए भी हानिकारक होती है। अतः शिक्षा में मानवीय मूल्यों को शामिल किया जाना चाहिए। मानवीय मूल्यों से व्यक्ति अच्छा बनता है।

यदि हम भारत वर्ष के शैक्षिक इतिहास पर मानवीय मूल्यों पर दृष्टिपात करें तो हम यह निः संकोच कह सकते हैं कि विज्ञान व प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारतवर्ष ने सन्तोषजनक प्रगति की है। आज हम गर्व के साथ यह कह सकते है कि भारतवर्ष ने यातायात, संचार व चिकित्सा में

सन्तोषजनक प्रगति की है, परन्तु इसके साथ ही दूसरी ओर जब हम अपनी संस्कृति व मूल्यो पर विचार करते हैं तो हमें बहुत ही शर्म का अनुभव होता है चूँकि मानवीय मूल्यों की दृष्टि से हमारा दिन–प्रतिदिन पतन होता जा रहा है। आज हमारे सामने बहुत ही विषम परिस्थितियाँ है एक तो यह कि हमें यह पता ही नहीं है हमारे भारतवर्ष के मानवीय मूल्य क्या हैं और इस कारण हम मूल्य अनभिज्ञ होकर व्यवहार करते जा रहे हैं। दूसरे हमें भारतवर्ष के मानवीय मूल्यों का ज्ञान तो है परन्तु हम इनके प्रति आस्था नहीं रखते और मूल्यविहीन व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं। तीसरे हमें मानवीय मूल्यों का ज्ञान है और उस पर चलना हम पिछड़ेपन का प्रतीक समझते हैं और आधुनिकता की दौड़ में कही गायब हो जाते हैं। मूल्य परख व्यवहार न करने के लिए हमें आत्मग्लानि तो अवश्य होती है परन्तु आधुनिक बनने की ललक के आगे हम घुटने टेक देते हैं। यह तीनों ही परिस्थितियाँ हैं। जिन्हें हम मूल्य अन्तर्द्वन्द्व की संज्ञा दे सकते हैं। इस कारण आज हमारे लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि हम मानवीय मूल्य शिक्षा के द्वारा विद्यार्थियों को सही मानवीय मूल्यों का ज्ञान करायें।

मुसलमान व अंग्रेजी शासनकाल से पूर्व भारतवर्ष की शिक्षा व्यवस्था मानवीय मूल्यों पर आधारित थी परन्तु मुसलमानों के शासनकाल में शिक्षा का स्वरूप बदल गया व शिक्षा मुस्लिम संस्कृति व इस्लाम धर्म के प्रचार का एक माध्यम बन गई। तत्पश्चात अंग्रेज शासन व्यवस्था का उद्गम हुआ और अंग्रेजो ने शिक्षा को अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया और पूरी भारतीय शिक्षा प्रणाली को शिथिल बना दिया। अंग्रेजो का उद्देश्य भी भारतवर्ष में अपनी संस्कृत व भाषा का प्रचार करना था व ऐसे भारतीयों का विकास करना था जो शरीर से भारतीय हो व व्यवहार व मन से अंग्रेज। उसी समय से प्राचीन भारतीय शिक्षा के मानवीय मूल्यों का पतन शुरू हो गया था। वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था में मानवीय मूल्यों की कमी महसूस की गयी जिस कारण बालको में मानवीय मूल्यों का विकास नहीं हो पाया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय शिक्षा व्यवस्था को लागू करने के लिये विभिन्न शिक्षा आयोगो व समितियों की स्थापना की गई। जिसमें यह सुझाव दिया गया कि विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रमों में मानवीय मूल्यों को शामिल किया जाये। जिससे अच्छे विद्यार्थी व आदर्श नागरिकों का निर्माण किया जा सके।

विद्यार्थियों में अच्छे मानवीय मूल्यों का विकास करने में परिवार, विद्यालय व समाज की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परिवार में रहने वाले विभिन्न व्यक्तियों के मध्य यदि मधुर सम्बन्ध हैं तो विद्यार्थियों में उचित मानवीय मूल्यों का विकास होगा। यदि परिवार में अच्छे सम्बन्ध है तो विद्यार्थियों में प्रेम, आदर, लगाव, आदि मानवीय मूल्यों का विकास होगा। परिवार में भौतिक वातावरण, संवेगात्मक वातावरण, अनुशासन, सांस्कृतिक वातावरण आदि अच्छा होना चाहिए। विद्यार्थियों में मूल्यों के विकास में विद्यालय की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विद्यालय औपचारिक शिक्षा का बहुत ही सशक्त साधन है और जनसाधारण की यह विचारधारा है कि विद्यालय शिक्षा के द्वारा बालक में वांछित परिवर्तन लाने का कार्य करता है और यह वांछित परिवर्तन ही वह है जो

समाज की मान्यताओं व मूल्यों पर आधारित होता है। विद्यालय की सभी शैक्षिक गतिविधियाँ विद्यार्थियों में मानवीय मूल्यों का विकास करती हैं। विद्यालय में पाठ्यक्रम सम्बन्धी क्रियायें व पाठ्यक्रम सहगामी क्रियायें के द्वारा शिक्षा में परिवर्तन करके मानवीय मूल्यों को सिखाया जा सकता है। विद्यालय में पाठ्यक्रम सम्बन्धी क्रियायें जैसे सामाजिक अध्ययन शिक्षण, विज्ञान शिक्षण, भाषा शिक्षण, आदि के द्वारा विभिन्न मानवीय मूल्यों को सिखाया जा सकता है। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत खेलकूद सम्बन्धी क्रियायें, प्रार्थना सभायें, जयन्तीपर्व, राष्ट्रीय पर्व, सामाजिक पर्व, सामाजिक उत्पादक कार्य, वार्षिकोत्सव, छात्र संसद, सहकारी भण्डार संचालन, अभिभावक सम्पर्क, पुस्तकालय संचालन, पर्यावरण सुधार आदि को शामिल किया जाता है। इन सभी क्रियाओं से विद्यार्थियों में शिक्षा के माध्यम से मानवीय मूल्यों को सिखाया जा सकता है।

समाज द्वारा विद्यार्थियों में मानवीय मूल्यों का विकास किया जा सकता है। समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। समाज सम्बन्धों से बना होता है। सम्बन्धों की स्थापना मानवीय मूल्य सीखने से होती है। यदि समाज में व्यक्ति के अन्दर प्रेम, सहानुभूति, त्याग, शान्ति, सद्भाव, भ्रातत्व, सामाजिक एकता आदि मानवीय मूल्यों का विकास होगा। यदि सम्बन्धों में कटुता है तो ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य आदि मूल्यों का विकास होगा। इसलिये समाज में बालकों को अच्छी शिक्षा देकर मानवीय मूल्यों का विकास किया जा सकता है। विद्यालय भी समाज का लघु रूप होता है इसलिये समाज विद्यालयों के माध्यम से मानवीय मूल्यों का विकास कर सकते हैं। समाज निम्न तरीकों के माध्यम से बालको में मानवीय मूल्यों को सिखा सकते है जैसे– दूरदर्शन, टेप रिकार्डर, बी0सी0आर0, समाचार–पत्र, पत्रिकायें, चलचित्र आदि।

अतः विद्यार्थियों के आचरण में जिस तरह से परिवर्तन हो रहा है उससे लगता कि वे देश के आदर्श नागरिक नहीं बन पा रहें। शिक्षा व्यवस्था में मानवीय मूल्यों के पतन के लिये जो नये–नये आविष्कार हो रहे है तथा नई सूचना क्रान्ति आई है वो काफी हद तक मानवीय मूल्यों के पतन के लिये जिम्मेदार हैं। हमें ऐसी शिक्षा नीति बनानी होगी जिससे विद्यार्थी आर्थिक उन्नति के साथ–साथ नैतिक व चारित्रिक उन्नति कर सकें। हम कितने ही योग्य व जीनियस क्यों न हों यदि हमारे अन्दर अच्छे मानवीय मूल्य नहीं हैं, तो हम अपना तो भला कर सकते है लेकिन परिवार समाज व देश का भला नहीं कर सकते हैं। इसलिये आदर्श नागरिक व अच्छे विद्यार्थियों का निर्माण करने के लिये भारतीय शिक्षा व्यवस्था में विभिन्न मानवीय मूल्यों शामिल करना होगा जिनसे हम अच्छे बन सकते हैं। मानवीय मूल्यों के सिखाने की शुरूआत परिवार व विद्यालय से होनी चाहिए। वर्तमान समय में जो भी बड़े–बड़े अपराध हत्या, चोरी, डकैती, बलात्कार, भ्रष्टाचार आदि हो रहे हैं इनको कम करने के लिये शिक्षा व्यवस्था के विभिन्न पाठ्यक्रमों में विभिन्न मानवीय मूल्यों को शामिल करना होगा। अच्छे मानवीय मूल्य सिखाने होगे और प्रेरित करना होगा। जिससे हमारी शिक्षा मानवीय मूल्यों से ओत–प्रोत होगी। मानवीय मूल्य हमारी

शिक्षा व्यवस्था से जुडे होने चाहिए। जिनसे विद्यार्थी परीक्षा पास करने के साथ–साथ मानवीय मूल्यों को अपने जीवन में अपनाये।

सन्दर्भ

1. *पी0डी0 पाठकः भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याऐं, पब्लिकेशन्स 2008*
2. *एन0आर0 स्वरूप सक्सैनाः शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, पब्लिकेशन्स 2005*
3. *डॉ0 सरोज सक्सेनाः शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार।*
4. *डॉ0 राम सिंह शर्मा व डॉ0 रुपाली श्रीवास्तवः शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार पब्लिकेशन्स 2008*
5. *डॉ0 आर0ए0 शर्माः मानव मूल्य एवं शिक्षा, पब्लिकेशन्स 2008*
6. *डॉ0 गिरीश पचौरीः शिक्षा के सामाजिक आधार, पल्लिकेशन्स–2009*

पर्यावरण संरक्षण एवं मानवीय मूल्य

विनोद कुमार
शोधार्थी
एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली।

परिचय

सामान्यतः पर्यावरण को मनुष्य के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है और मनुष्य को एक अलग इकाई और उसके चारों ओर व्याप्त अन्य समस्त चीजों को उसका पर्यावरण घोषित कर दिया जाता है। किन्तु यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि अभी भी इस धरती पर बहुत सी मानव सभ्यताएँ हैं, जो अपने को पर्यावरण से अलग नहीं मानतीं और उनकी नजर में समस्त प्रकृति एक ही इकाई है। जिसका मनुष्य भी एक हिस्सा है। वस्तुतः मनुष्य को पर्यावरण से अलग मानने वाले वे हैं जो तकनीकी रूप से विकसित हैं और विज्ञान और तकनीक के व्यापक प्रयोग से अपनी प्राकृतिक दशाओं में काफी बदलाव लाने में समर्थ हैं।

मानव हस्तक्षेप के आधार पर पर्यावरण को दो प्रखण्डों में विभाजित किया जाता है – प्राकृतिक या नैसर्गिक पर्यावरण और मानव निर्मित पर्यावरण। हालाँकि पूर्ण रूप से प्राकृतिक पर्यावरण (जिसमें मानव हस्तक्षेप बिल्कुल न हुआ हो) या पूर्ण रूपेण मानव निर्मित पर्यावरण (जिसमें सब कुछ मनुष्य निर्मित हो), कहीं नहीं पाए जाते। यह विभाजन प्राकृतिक प्रक्रियाओं और दशाओं में मानव हस्तक्षेप की मात्रा की अधिकता और न्यूनता का द्योतक मात्र है। पारिस्थितिकी और पर्यावरण भूगोल में प्राकृतिक पर्यावरण शब्द का प्रयोग पर्यावास (habitat) के लिये भी होता है।

तकनीकी मानव द्वारा आर्थिक उद्देश्य और जीवन में विलासिता के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्रकृति के साथ व्यापक छेड़छाड़ के क्रियाकलापों ने प्राकृतिक पर्यावरण का संतुलन नष्ट किया है, जिससे प्राकृतिक व्यवस्था या प्रणाली के अस्तित्व पर ही संकट उत्पन्न हो गया है। इस तरह की समस्याएँ पर्यावरणीय अवनयन कहलाती हैं।

पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन इत्यादि मनुष्य को अपनी जीवनशैली के बारे में पुनर्विचार के लिये प्रेरित कर रही हैं और अब पर्यावरण संरक्षण और पर्यावरण प्रबंधन की चर्चा है। मनुष्य वैज्ञानिक और तकनीकी रूप से अपने द्वारा किये गये परिवर्तनों से नुकसान को कितना कम करने में सक्षम है, आर्थिक और राजनैतिक हितों की टकराव में पर्यावरण पर कितना ध्यान दिया जा रहा है और मनुष्यता अपने पर्यावरण के प्रति कितनी जागरूक है, यह आज के ज्वलंत प्रश्न हैं।

नामोत्पत्ति

पर्यावरण शब्द संस्कृत भाषा के 'परि' उपसर्ग (चारों ओर) और 'आवरण' से मिलकर बना है जिसका अर्थ है ऐसी चीजों का समुच्चय जो किसी व्यक्ति या जीवधारी को चारों ओर से आवृत्त किये हुए हैं। पारिस्थितिकी और भूगोल में यह शब्द अंग्रेजी के environment के पर्याय के रूप में इस्तेमाल होता है।

अंग्रेजी शब्द environment स्वयं उपरोक्त पारिस्थितिकी के अर्थ में काफी बाद में प्रयुक्त हुआ और यह शुरूआती दौर में आसपास की सामान्य दशाओं के लिये प्रयुक्त होता था। यह फ्रांसीसी भाषा से उद्‌भूत है जहाँ यह "state of being environed" (see environ + ment) के अर्थ में प्रयुक्त होता था और इसका पहला ज्ञात प्रयोग कार्लाइल द्वारा जर्मन शब्द Umgebung के अर्थ को फ्रांसीसी में व्यक्त करने के लिये हुआ।

पर्यावरण का ज्ञान

आज पर्यावरण एक जरूरी सवाल ही नहीं बल्कि ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है लेकिन आज लोगों में इसे लेकर कोई जागरूकता नहीं है। ग्रामीण समाज को छोड़ दें तो भी महानगरीय जीवन में इसके प्रति खास उत्सुकता नहीं पाई जाती। परिणामस्वरूप पर्यावरण सुरक्षा महज एक सरकारी एजेण्डा ही बन कर रह गया है। जबकि यह पूरे समाज से बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाला सवाल है। जब तक इसके प्रति लोगों में एक स्वाभाविक लगाव पैदा नहीं होता, पर्यावरण संरक्षण एक दूर का सपना ही बना रहेगा।

पर्यावरण का सीधा सम्बन्ध प्रकृति से है। अपने परिवेश में हम तरह–तरह के जीव–जन्तु, पेड़–पौधे तथा अन्य सजीव–निर्जीव वस्तुएँ पाते हैं। ये सब मिलकर पर्यावरण की रचना करते हैं। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं जैसे–भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान तथा जीव विज्ञान, आदि में विषय के मौलिक सिद्धान्तों तथा उनसे सम्बन्ध प्रायोगिक विषयों का अध्ययन किया जाता है। परन्तु आज की आवश्यकता यह है कि पर्यावरण के विस्तृत अध्ययन के साथ–साथ इससे सम्बन्धित व्यावहारिक ज्ञान पर बल दिया जाए। आधुनिक समाज को पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं की शिक्षा व्यापक स्तर पर दी जानी चाहिए। साथ ही इससे निपटने के बचावकारी उपायों की जानकारी भी आवश्यक है। आज के मशीनी युग में हम ऐसी स्थिति से गुजर रहे हैं। प्रदूषण एक अभिशाप के रूप में सम्पूर्ण पर्यावरण को नष्ट करने के लिए हमारे सामने खड़ा है। सम्पूर्ण विश्व एक गम्भीर चुनौती के दौर से गुजर रहा है। यद्यपि हमारे पास पर्यावरण सम्बन्धी पाठ्य–सामग्री की कमी है तथापि सन्दर्भ सामग्री की कमी नहीं है। वास्तव में आज पर्यावरण से सम्बद्ध उपलब्ध ज्ञान को व्यावहारिक बनाने की आवश्यकता है ताकि समस्या को जनमानस सहज रूप से समझ सके। ऐसी विषम परिस्थिति में समाज को उसके कर्त्तव्य तथा दायित्व का एहसास होना आवश्यक है। इस प्रकार समाज में पर्यावरण के प्रति जागरूकता पैदा की जा

सकती है। वास्तव में सजीव तथा निर्जीव दो संघटक मिलकर प्रकृति का निर्माण करते हैं। वायु, जल तथा भूमि निर्जीव घटकों में आते हैं जबकि जन्तु–जगत तथा पादप–जगत से मिलकर सजीवों का निर्माण होता है। इन संघटकों के मध्य एक महत्वपूर्ण रिश्ता यह है कि अपने जीवन–निर्वाह के लिए परस्पर निर्भर रहते हैं। जीव–जगत में यद्यपि मानव सबसे अधिक सचेतन एवं संवेदनशील प्राणी है तथापि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वह अन्य जीव–जन्तुओं, पादप, वायु, जल तथा भूमि पर निर्भर रहता है। मानव के परिवेश में पाए जाने वाले जीव–जन्तु पादप, वायु, जल तथा भूमि पर्यावरण की संरचना करते है।

शिक्षा के माध्यम से पर्यावरण का ज्ञान शिक्षा मानव–जीवन के बहुमुखी विकास का एक प्रबल साधन है। इसका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के अन्दर शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संस्कृतिक तथा आध्यात्मिक बुद्धी एवं परिपक्वता लाना है। शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्राकृतिक वातावरण का ज्ञान अति आवश्यक है। प्राकृतिक वातावरण के बारे में ज्ञानार्जन की परम्परा भारतीय संस्कृति में आरम्भ से ही रही है। परन्तु आज के भौतिकवादी युग में परिस्थितियाँ भिन्न होती जा रही हैं। एक ओर जहां विज्ञान एवं तकनीकी के विभिन्न क्षेत्रों में नए–नए अविष्कार हो रहे हैं। तो दूसरी ओर मानव परिवेश भी उसी गति से प्रभावित हो रहा है। आने वाली पीढ़ी को पर्यावरण में हो रहे परिवर्तनों का ज्ञान शिक्षा के माध्यम से होना आवश्यक है। पर्यावरण तथा शिक्षा के अन्तर्सम्बन्धों का ज्ञान हासिल करके कोई भी व्यक्ति इस दिशा में अनेक महत्वपूर्ण कार्य कर सकता है। पर्यावरण का विज्ञान से गहरा सम्बन्ध है, किन्तु उसकी शिक्षा में किसी प्रकार की वैज्ञानिक पेचीदगियाँ नहीं हैं। शिक्षार्थियों को प्रकृति तथा पारिस्थितिक ज्ञान सीधी तथा सरल भाषा में समझायी जानी चाहिए। शुरू–शुरू में यह ज्ञान सतही तौर पर मात्र परिचयात्मक ढंग से होना चाहिए। आगे चलकर इसके तकनीकी पहलुओं पर विचार किया जाना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में पर्यावरण का ज्ञान मानवीय सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

पर्यावरण और पारितंत्र

पर्यावरण अपनी सम्पूर्णता में एक इकाई है जिसमें अजैविक और जैविक संघटक आपस में विभिन्न अन्तर्क्रियाओं द्वारा संबद्ध और अंतर्गुम्फित होते हैं। इसकी यह विशेषता इसे एक पारितंत्र का रूप प्रदान करती है क्योंकि पारिस्थितिक तंत्र या पारितंत्र पृथ्वी के किसी क्षेत्र में समस्त जैविक और अजैविक तत्वों के अंतर्सम्बंधित समुच्चय को कहते हैं। अतः पर्यावरण भी एक पारितंत्र है।

पृथ्वी पर पैमाने (scale) के हिसाब से सबसे वृहत्तम पारितंत्र जैवमंडल को माना जाता है। जैवमंडल पृथ्वी का वह भाग है जिसमें जीवधारी पाए जाते हैं और यह स्थलमंडल, जलमण्डल तथा वायुमण्डल में व्याप्त है। पूरे पार्थिव पर्यावरण की रचना भी इन्हीं इकाइयों से हुई है, अतः इन अर्थों में वैश्विक पर्यावरण, जैवमण्डल और पार्थिव पारितंत्र एक दूसरे के समानार्थी हो जाते हैं।

माना जाता है कि पृथ्वी के वायुमण्डल का वर्तमान संघटन और इसमें ऑक्सीजन की वर्तमान मात्रा पृथ्वी पर जीवन होने का कारण ही नहीं अपितु परिणाम भी है। प्रकाश–संश्लेषण, जो एक जैविक (या पारिस्थितिकीय अथवा जैवमण्डलीय) प्रक्रिया है, पृथ्वी के वायुमण्डल के गठन को प्रभावित करने वाली महत्वपूर्ण प्रक्रिया रही है। इस प्रकार के चिंतन से जुड़ी विचारधारा पूरी पृथ्वी को एक इकाई गया या सजीव पृथ्वी (living earth) के रूप में देखती है।

इसी प्रकार मनुष्य के ऊपर पर्यवारण के प्रभाव और मनुष्य द्वारा पर्यावरण पर डाले गये प्रभावों का अध्ययन मानव पारिस्थितिकी और मानव भूगोल का प्रमुख अध्ययन बिंदु है।

पर्यावरणीय समस्याएँ

ज्यादातर पर्यावरणीय समस्याएँ पर्यावरणीय अवनयन और मानव जनसंख्या और मानव द्वारा संसाधनों के उपभोग में वृद्धि से जुड़ी हैं। पर्यावरणीय अवनयन के अंतर्गत पर्यावरण में होने वाले वे सारे परिवर्तन आते हैं जो अवांछनीय हैं और किसी क्षेत्र विशेष में या पूरी पृथ्वी पर जीवन और संधारणीयता को खतरा उत्पन्न करते हैं। अतः इसके अंतर्गत प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता का क्षरण और अन्य प्राकृतिक आपदाएं, इत्यादि शामिल की जाती हैं। पर्यावरणीय अवनयन के साथ मिलकर जनसंख्या में चरघातांकी दर से हो रही वृद्धि तथा मानव द्वारा उपभोग के बदलते प्रतिरूप लगभग सारी पर्यावरणीय समस्याओं के मूल कारण हैं।

संसाधन न्यूनीकरण

संसाधन न्यूनीकरण का अर्थ है प्राकृतिक संसाधनों का मनुष्य द्वारा अपने आर्थिक लाभ हेतु इतनी तेजी से दोहन कि उनका प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा पुनर्भरण (replenishment) न हो पाए। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संसाधन क्षरण के लिये जनसंख्या के दबाव, तेज वृद्धि दर और लोगों के उपभोग प्रतिरूप का भी प्रभाव जिम्मेवार माना जा रहा है।

संसाधनों को दो वर्गों में विभक्त किया जाता है – नवीकरणीय संसाधन और अनवीकरणीय संसाधन। इसके आलावा कुछ संसाधन इतनी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं कि उनका क्षय नहीं हो सकता उन्हें अक्षय संसाधन कहते हैं जैसे सौर ऊर्जा।

अनवीकरणीय संसाधनों का तेजी से दोहन उनके भण्डार को समाप्त कर मानव जीवन के लिये कठिन परिस्थितियां पैदा कर सकता है। कोयला, पेट्रोलियम, या धत्वित्क खनिजों के भण्डारों का निर्माण एक दीर्घ अवधि की घटना है और जिस तेजी से मनुष्य इन का दोहन कर रहा है ये एक न एक दिन समाप्त हो जायेंगे। वहीं दूसरी ओर कुछ नवीकरणीय संसाधन भी मनुष्य द्वारा इतनी तेजी से प्रयोग में लाये जा रहे हैं कि उनका प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा पुनर्भरण उतनी तेजी से संभव नहीं और इस प्रकार वे भी अनवीकरणीय संसाधन की श्रेणी में आ जायेंगे।

प्रदूषण

प्रदूषण अथवा पर्यावरणीय प्रदूषण पर्यावरण में किसी पदार्थ (ठोस, द्रव या गैस) अथवा ऊर्जा (ऊष्मा, ध्वनि, रेडियोधर्मिता इत्यादि) के प्रवेश को कहते हैं यदि इसकी गति इतनी तेज हो

कि सामान्य और प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा इसका परिक्षेपण, मंदन, वियोजन, पुनर्चक्रण अथवा अहानिकारक रूप में संरक्षण न हो सके।इस प्रकार प्रदूषण के दो स्पष्ट सूचक हैं, किसी पदार्थ या ऊर्जा का पर्यावरण में प्रवेश और उसका प्राकृतिक पर्यावरण के प्रति हानिकारक या अवांछित होना। इस तरह के अवांछित तत्व को प्रदूषक या दूषक कहते हैं।

प्रदूषण का वर्गीकरण प्रदूषक के प्रकार, स्रोत अथवा पारितंत्र के जिस हिस्से में उसका प्रवेश होता है, के आधार पर किया जाता है। उदाहरण के तौर पर वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, इत्यादि प्रकार इस आधार पर निश्चित किये जाते हैं कि पारितंत्र के इस हिस्से में दूषक तत्व का प्रवेश होता है। वहीं दूसरी ओर रेडियोधर्मी प्रदूषण, प्रकाश प्रदूषण, ध्वनि या रव प्रदूषण इत्यादि प्रकार प्रदूषक के खुद के प्रकार पर आधारित वर्गीकरण हैं।

जलवायु परिवर्तन

हमारे जीवन मे हमने बहुत सारे परिवर्तन देखे है जल वायु परिवर्तन उन्ही मे से एक है जल वायु परिवर्तन के कारण ही पृथ्वी पर मौसम परिवर्तन होता है मौसम से हमे बहुत लाभ हो ता है मोसम के बिना कोई फसल नही उगाई जा सकती एवं ना ही मनुष्य जीवन एक मौसम मे गुजार सकता है समस्त जीव धारी को को मौसम की जरूरत होती है जलवायु परिवर्तन से हमे लाभ भी है तो नुकसान भी क्योंकि

जैवविविधता ह्रास

जैव विविधता जीवन और विविधता के संयोग से निर्मित शब्द है जो आम तौर पर पृथ्वी पर मौजूद जीवन की विविधता और परिवर्तनशीलता को संदर्भित करता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (युएनईपी), के अनुसार जैवविविधता biodiversity विशिष्टतया अनुवांशिक, प्रजाति, तथा पारिस्थितिकि तंत्र के विविधता का स्तर मापता है।

प्राकृतिक आपदाएँ

इनमें चक्रवात, तेज तूफान, अत्यधिक बारिश,ओला आदि शामिल है।

पर्यावरण संरक्षण

पर्यावरण प्रबंधन

पर्यावरण प्रबंधन का तात्पर्य पर्यावरण के प्रबंधन से नहीं है, बल्कि आधुनिक मानव समाज के पर्यावरण के साथ संपर्क तथा उस पर पड़ने वाले प्रभाव के प्रबंधन से है। प्रबंधकों को प्रभावित करने वाले तीन प्रमुख मुद्दे हैं राजनीति (नेटवर्किंग), कार्यक्रम (परियोजनायें) और संसाधन (धन, सुविधाएँ, आदि)। पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता को कई दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण को विशेष महत्त्व दिया गया है। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के अनेक घटकों जैसे वृक्षों को पूज्य मानकर उन्हें पूजा जाता है। तुलसी

को पवित्र मानकर पूजा की जाती है पीपल के वृक्ष को पवित्र माना जाता है। वट के वृक्ष की भी पूजा होती है। जल, वायु, अग्नि को भी देव मानकर उनकी पूजा की जाती है। समुद्र, नदी को भी पूजन करने योग्य माना गया है। गंगा, सिंधु, सरस्वती, यमुना, गोदावरी, नर्मदा जैसी नदीयों को पवित्र मानकर पूजा की जाती है। धरती को भी माता का दर्जा दिया गया है। प्राचीन काल से ही भारत में पर्यावरण के विविध स्वरुपों की पूजा होती है।

पर्यावरण विज्ञान

पर्यावरणीय विधि अथवा पर्यावरण विधि समेकित रूप से उन सभी अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय अथवा क्षेत्रीय सन्धियों, समझौतों और संवैधानिक विधियों को कहा जाता है जो प्राकृतिक पर्यावरण पर मानव प्रभाव को कम करने और पर्यावरण की संधारणीयता बनाये रखने हेतु हैं।

भारत में पर्यावरण कानून पर्यावरण (रक्षा) अधिनियम 1986 से नियमित होता है जो एक व्या पक विधान है। इसकी रूप रेखा केन्द्री य सरकार के विभिन्नै केन्द्री य और राज्यक प्राधिकरणों के क्रियाकलापों के समन्वैयन के लिए तैयार किया गया है जिनकी स्थानपना पिछले कानूनों के तहत की गई है जैसा कि जल अधिनियम और वायु अधिनियम।

अन्य विधियों में भारतीय वन अधिनियम, 1927 और वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, 1972 प्रमुख हैं। एक राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण का भी गठन किया गया है।

पर्यावरण संरक्षण का सारांश

भौतिक विकास के पीछे दौड़ रही दुनिया ने आज जरा ठहरकर सांस ली तो उसे अहसास हुआ कि चमक–धमक के फेर में क्या कीमत चुकाई जा रही है। आज ऐसा कोई देश नहीं है जो पर्यावरण संकट पर मंथन नहीं कर रहा हो। भारत भी चिंतित है। लेकिन, जहां दूसरे देश भौतिक चकाचौंध के लिए अपना सबकुछ लुटा चुके हैं, वहीं भारत के पास आज भी बहुत कुछ बाकि है। पश्चिम के देशों ने प्रकृति को हद से ज्यादा नुकसान पहुंचाया है। पेड़ काटकर जंगल के कांक्रीट खड़े करते समय उन्हें अंदाजा नहीं था कि इसके क्या गंभीर परिणाम होंगे? प्रकृति को नुकसान पहुंचाने से रोकने के लिए पश्चिम में मजबूत परंपराएं भी नहीं थीं। प्रकृति संरक्षण का कोई संस्कार अखण्ड भारतभूमि को छोड़कर अन्यत्र देखने में नहीं आता है। जबकि सनातन परम्पराओं में प्रकृति संरक्षण के सूत्र मौजूद हैं। हिन्दू धर्म में प्रकृति पूजन को प्रकृति संरक्षण के तौर पर मान्यता है। भारत में पेड़–पौधों, नदी–पर्वत, ग्रह–नक्षत्र, अग्नि–वायु सहित प्रकृति के विभिन्न रूपों के साथ मानवीय रिश्ते जोड़े गए हैं। पेड़ की तुलना संतान से की गई है तो नदी को मां स्वरूप माना गया है। ग्रह–नक्षत्र, पहाड़ और वायु देवरूप माने गए हैं। प्राचीन समय से ही भारत के वैज्ञानिक ऋषि–मुनियों को प्रकृति संरक्षण और मानव के स्वभाव की गहरी जानकारी थी। वे जानते थे कि मानव अपने क्षणिक लाभ के लिए कई मौकों पर गंभीर भूल कर सकता है। अपना ही भारी नुकसान कर सकता है। इसलिए उन्होंने प्रकृति के साथ मानव के संबंध विकसित

कर दिए। ताकि मनुष्य को प्रकृति को गंभीर क्षति पहुंचाने से रोका जा सके। यही कारण है कि प्राचीन काल से ही भारत में प्रकृति के साथ संतुलन करके चलने का महत्वपूर्ण संस्कार है। यह सब होने के बाद भी भारत में भौतिक विकास की अंधी दौड़ में प्रकृति पददलित हुई है। लेकिन, यह भी सच है कि यदि ये परंपराएं न होतीं तो भारत की स्थिति भी गहरे संकट के किनारे खड़े किसी पश्चिमी देश की तरह होती। हिन्दू परंपराओं ने कहीं न कहीं प्रकृति का संरक्षण किया है। हिन्दू धर्म का प्रकृति के साथ कितना गहरा रिश्ता है, इसे इस बात से समझा जा सकता है कि दुनिया के सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद का प्रथम मंत्र ही अग्नि की स्तुति में रचा गया है।

हिन्दुत्व वैज्ञानिक जीवन पद्धति है। प्रत्येक हिन्दू परम्परा के पीछे कोई न कोई वैज्ञानिक रहस्य छिपा हुआ है। इन रहस्यों को प्रकट करने का कार्य होना चाहिए। हिन्दू धर्म के संबंध में एक बात दुनिया मानती है कि हिन्दू दर्शन 'जियो और जीने दो' के सिद्धांत पर आधारित है। यह विशेषता किसी अन्य धर्म में नहीं है। हिन्दू धर्म का सह अस्तित्व का सिद्धांत ही हिन्दुओं को प्रकृति के प्रति अधिक संवेदनशील बनाता है। वैदिक वाङ्मयों में प्रकृति के प्रत्येक अवयव के संरक्षण और सम्वर्द्धन के निर्देश मिलते हैं। हमारे ऋषि जानते थे कि पृथ्वी का आधार जल और जंगल है। इसलिए उन्होंने पृथ्वी की रक्षा के लिए वृक्ष और जल को महत्वपूर्ण मानते हुए कहा है– 'वृक्षाद् वर्षति पर्जन्यः पर्जन्यादन्न सम्भवः' अर्थात् वृक्ष जल है, जल अन्न है, अन्न जीवन है। जंगल को हमारे ऋषि आनंददायक कहते हैं– 'अरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु।' यही कारण है कि हिन्दू जीवन के चार महत्वपूर्ण आश्रमों में से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास का सीधा संबंध वनों से ही है। हम कह सकते हैं कि इन्हीं वनों में हमारी सांस्कृतिक विरासत का सम्वर्द्धन हुआ है। हिन्दू संस्कृति में वृक्ष को देवता मानकर पूजा करने का विधान है। वृक्षों की पूजा करने के विधान के कारण हिन्दू स्वभाव से वृक्षों का संरक्षक हो जाता है। सम्राट विक्रमादित्य और अशोक के शासनकाल में वन की रक्षा सर्वोपरि थी। चाणक्य ने भी आदर्श शासन व्यवस्था में अनिवार्य रूप से अरण्यपालों की नियुक्ति करने की बात कही है।

हमारे महर्षि यह भली प्रकार जानते थे कि पेड़ों में भी चेतना होती है। इसलिए उन्हें मनुष्य के समतुल्य माना गया है। ऋग्वेद से लेकर बृहदारण्यकोपनिषद्, पद्मपुराण और मनुस्मृति सहित अन्य वाङ्मयों में इसके संदर्भ मिलते हैं। छान्दोग्यउपनिषद् में उद्दालक ऋषि अपने पुत्र श्वेतकेतु से आत्मा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वृक्ष जीवात्मा से ओतप्रोत होते हैं और मनुष्यों की भाँति सुख–दुःख की अनुभूति करते हैं। हिन्दू दर्शन में एक वृक्ष की मनुष्य के दस पुत्रों से तुलना की गई है–

'दशकूप समावापीः दशवापी समोह्रदः।
दशह्रद समःपुत्रो दशपत्र समोद्रुमः।।'

घर में तुलसी का पौधा लगाने का आग्रह भी हिन्दू संस्कृति में क्यों है? यह आज सिद्ध हो गया है। तुलसी का पौधा मनुष्य को सबसे अधिक प्राणवायु ऑक्सीजन देता है। तुलसी के पौधे में अनेक औषधीय गुण भी मौजूद हैं। पीपल को देवता मानकर भी उसकी पूजा नियमित इसीलिए की जाती है क्योंकि वह भी अधिक मात्रा में ऑक्सीजन देता है। परिवार की सामान्य गृहिणी भी अपने अबोध बच्चे को समझाती है कि रात में पेड़–पौधे को छूना नहीं चाहिए, वे सो जाते हैं, उन्हें परेशान करना ठीक बात नहीं।

वह गृहिणी परम्परावश ऐसा करती है। उसे इसका वैज्ञानिक कारण नहीं मालूम। रात में पेड़ कार्बन डाइ ऑक्साइड छोड़ते हैं, इसलिए गांव में दिनभर पेड़ की छांव में बिता देने वाले बच्चे–युवा–बुजुर्ग रात में पेड़ों के नीचे सोते भी नहीं हैं। देवों के देव महादेव तो बिल्व–पत्र और धतूरे से ही प्रसन्न होते हैं। यदि कोई शिवभक्त है तो उसे बिल्वपत्र और धतूरे के पेड़–पौधों की रक्षा करनी ही पड़ेगी।

वट पूर्णिमा और आंवला नवमी का पर्व मनाना है तो वटवृक्ष और आंवले के पेड़ धरती पर बचाने ही होंगे। सरस्वती को पीले फूल पसंद हैं। धन–सम्पदा की देवी लक्ष्मी को कमल और गुलाब के फूल से प्रसन्न किया जा सकता है। गणेश दूर्वा से प्रसन्न हो जाते हैं। हिन्दू धर्म के प्रत्येक देवी–देवता भी पशु–पक्षी और पेड़–पौधों से लेकर प्रकृति के विभिन्न अवयवों के संरक्षण का संदेश देते हैं।

जलस्रोतों का भी हिन्दू धर्म में बहुत महत्व है। ज्यादातर गांव–नगर नदी के किनारे पर बसे हैं। ऐसे गांव जो नदी किनारे नहीं हैं, वहां ग्रामीणों ने तालाब बनाए थे। बिना नदी या ताल के गांव–नगर के अस्तित्व की कल्पना नहीं है। हिन्दुओं के चार वेदों में से एक अथर्ववेद में बताया गया है कि आवास के समीप शुद्ध जलयुक्त जलाशय होना चाहिए। जल दीर्घायु प्रदायक, कल्याणकारक, सुखमय और प्राणरक्षक होता है। शुद्ध जल के बिना जीवन संभव नहीं है। यही कारण है कि जलस्रोतों को बचाए रखने के लिए हमारे ऋषियों ने इन्हें सम्मान दिया। पूर्वजों ने कल–कल प्रवाहमान सरिता गंगा को ही नहीं वरन सभी जीवनदायनी नदियों को मां कहा है। हिन्दू धर्म में अनेक अवसर पर नदियों, तालाबों और सागरों की मां के रूप में उपासना की जाती है।

छान्दोग्योपनिषद् में अन्न की अपेक्षा जल को उत्कृष्ट कहा गया है। महर्षि नारद ने भी कहा है कि पृथ्वी भी मूर्तिमान जल है। अन्तरिक्ष, पर्वत, पशु–पक्षी, देव–मनुष्य, वनस्पति सभी मूर्तिमान जल ही हैं। जल ही ब्रह्मा है। महान ज्ञानी ऋषियों ने धार्मिक परंपराओं से जोड़कर पर्वतों की भी महत्ता स्थापित की है। देश के प्रमुख पर्वत देवताओं के निवास स्थान हैं। अगर पर्वत देवताओं के वासस्थान नहीं होते तो कब के खनन माफिया उन्हें उखाड़ चुके होते। विन्ध्यगिरि महाशक्तियों का वासस्थल है, कैलाश महाशिव की तपोभूमि है। हिमालय को तो भारत का

किरीट कहा गया है। महाकवि कालिदास ने 'कुमारसम्भव' में हिमालय की महानता और देवत्व को बताते हुए कहा है– 'अस्तुस्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः। ' भगवान श्रीकृष्ण ने गोवर्धन की पूजा का विधान इसलिए शुरू कराया था क्योंकि गोवर्धन पर्वत पर अनेक औषधि के पेड़–पौधे थे, मथुरा के गोपालकों के गोधन के भोजन–पानी का इंतजाम उसी पर्वत पर था। मथुरा–वृन्दावन सहित पूरे देश में दीपावली के बाद गोवर्धन पूजा धूमधाम से की जाती है।

इसी तरह हमारे महर्षियों ने जीव–जन्तुओं के महत्व को पहचानकर उनकी भी देवरूप में अर्चना की है। मनुष्य और पशु परस्पर एक–दूसरे पर निर्भर हैं। हिन्दू धर्म में गाय, कुत्ता, बिल्ली, चूहा, हाथी, शेर और यहां तक की विषधर नागराज को भी पूजनीय बताया है। प्रत्येक हिन्दू परिवार में पहली रोटी गाय के लिए और आखिरी रोटी कुत्ते के लिए निकाली जाती है। चींटियों को भी बहुत से हिन्दू आटा डालते हैं। चिड़ियों और कौओं के लिए घर की मुंडेर पर दाना–पानी रखा जाता है। पितृपक्ष में तो काक को बाकायदा निमंत्रित करके दाना–पानी खिलाया जाता है। इन सब परम्पराओं के पीछे जीव संरक्षण का संदेश है। हिन्दू गाय को माँ कहता है। उसकी अर्चना करता है। नागपंचमी के दिन नागदेव की पूजा की जाती है। नाग–विष से मनुष्य के लिए प्राणरक्षक औषधियों का निर्माण होता है। नाग पूजन के पीछे का रहस्य ही यह है। हिन्दू धर्म का वैशिष्ट्य है कि वह प्रकृति के संरक्षण की परम्परा का जन्मदाता है। हिन्दू संस्कृति में प्रत्येक जीव के कल्याण का भाव है। हिन्दू धर्म के जितने भी त्योहार हैं, वे सब प्रकृति के अनुरूप हैं। मकर संक्रान्ति, वसंत पंचमी, महाशिवरात्रि, होली, नवरात्र, गुड़ी पड़वा, वट पूर्णिमा, ओणम्, दीपावली, कार्तिक पूर्णिमा, छठ पूजा, शरद पूर्णिमा, अन्नकूट, देव प्रबोधिनी एकादशी, हरियाली तीज, गंगा दशहरा आदि सब पर्वों में प्रकृति संरक्षण का पुण्य स्मरण है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में नैतिकता एवं मानवीय मूल्य

ज़फर अली
शोध छात्र,
वी.आर.ए.एल. राजकीय महिला महाविद्यालय, बरेली।

भारतीय वाङ्मय में नैतिक मूल्यों की अवधारणा लोक मंगल है। प्राचीन काल से ही भारतीय साहित्य में नैतिक मूल्यों की परिचर्चा होती रही है। नैतिक मूल्यों के वास्तविक स्वरूप को समझना ब्रह्मविज्ञान की ही तरह अत्यन्त कठिन है। श्रुति भी नैतिक मूल्यों से प्रभावित है, किन्तु नैतिकता के स्वरूप की मीमांसा आचार्यों ने विविध प्रकार से की है। अतएव नैतिकता के स्वरूप को किसी एक दृष्टि से निरूपित नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार परमात्मा की सत्ता अत्यधिक व्यापक है ठीक उसी प्रकार नैतिकता की सत्ता भी अत्यन्त व्यापक है।

भारतीय नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का दृष्टिकोण प्रारम्भ से ही सार्वभौमिक रहा है, परन्तु यह सूत्रबद्ध नहीं है। वैदिक काल से लेकर वर्तमान काल तक यत्र–तत्र बिखरे मोतियों की भाँति मानवीय मूल्यों की अवधारण दृष्टिगोचर होती है। परन्तु अब आवश्यकता है, इन सम्पूर्ण मोतियों को सूत्रबद्ध कर एक माला में अवगुंठित करने की, जिसे समग्र मानव–जाति के हृदय में अवधारित कर, मानवीय मूल्यों में वैचारिक व व्यावहारिक क्रान्ति ला सकें। कारण है कि वर्तमान समय में मानवीय मूल्य पूर्णतः विकश्त रूप धारण कर चुके हैं। आज के मानव में स्वार्थ की भावना घर कर चुकी है। आज का मानव पूर्ण रूपेण स्वार्थी हो चुका है। परार्थ की भावना मानव हृदय से लुप्त हो चुकी है।

आधुनिक युग में कतिपय मानवीय मूल्यों के व्याख्याता नैतिकता को किसी सम्प्रदायगत पूजा पाठ विशेष से जोड़कर उसे परिसीमित करने की कुचेष्ठा कर रहे हैं। वस्तुतः वे मानवता के स्वरूप एवं रहस्य को नहीं जानते। आज सम्पूर्ण विश्व में वैमनस्य की भावना अपनी चरम सीमा पर है कहाँ गयी वो विश्व–बन्धुत्व की भावना? हमारी संस्कृति में ''वसुधैव कुटुम्बकुम''[1] को महत्ता प्रदान की गई है, किन्तु आज इस भावना का अभाव दिखाई देता है।

स्वार्थी मानव अपने मानवीय कर्तव्य से च्युत हो चुका है। उसके सम्पूर्ण सुख की कल्पना ने 'सर्वे भवन्तु सुखिन :' की भावना को अत्यधिक आघात पहुँचाया है। आज का मानव अपने क्षुद्र स्वार्थ सिद्धि के लिये दूसरों का सहजता से ही अपकार करता रहता है। परोपकार की भावना उसके अन्तःकरण से लुप्त हो चुकी है। मानवों में इस भावना का विकास करने के लिए मानवीय मूल्यों को अपनी जीवन चर्चा में समाहित करना चाहिए। जैसा कि हम बृहदारण्यक उपनिषद् में याज्ञवल्क्य की पत्नी को उच्च से उच्चतर मूल्यों की ओर अग्रसर होते देखते हैं, उन्होंने धन का

त्याग किया, सांसारिक सुख आदि का त्याग कर दिया। इस प्रकार उन्होंने भौतिक मूल्यों की तुलना में धार्मिक मूल्यों को सर्वोपरि स्थान दिया2।

श्रेयश्च प्रेयश्च च मनुष्यमेत,

स्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः। श्रेयोहि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते

प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीत।[3]

कठोपनिषद् में नचिकेता ने भी प्रेय अर्थात् बौद्धिक सुख वैभव को त्यागकर श्रेय अर्थात् धार्मिक मूल्यों का चयन किया। उसने अध्यात्म ज्ञान के लिए वर्तमान जीवन को भी समर्पित कर दिया। इन उदाहरणों से परिलक्षित होता है कि धार्मिक मूल्य ही श्रेष्ठ एवं स्थायी है जिन्हें पाकर फिर कुछ भी पाना शेष नहीं रह जाता।

आत्मसिद्धि के लिए भी एक मानवीय मूल्य पर्याप्त नहीं है अपितु अनेकानेक मानवीय मूल्यों का विकास करना पड़ता है। इसी श्रेणी में मानव के चारित्रिक मूल्य भी व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः उसमें सहयोग की भावना, प्रेम की भावना, उपकार की भावना, साहस, संयम आदि गुणों का होना परमावश्यक है। क्योंकि जब व्यक्ति में नैतिक मूल्यों का विकास होता है तो वह अतिशीघ्र चारित्रिक उत्कश७टता की ओर अग्रसर हो जाता है। चरित्र एक ऐसी कुँजी है जो व्यक्ति के सारे गुणों का विकास करती जाती है। चरित्र के विषय में आंग्ल भाषा में कहा भी गया है –

If wealth is lost, nothing is lost, If health is lost, something is lost,

If Character is lost, everything is lost,

मानवीय मूल्यों की अवधारण के विषय में ऋग्वेद का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें बताया गया है कि अतिथि, गुरू माता–पिता एवं स्त्रियों के प्रति आदर रखना चाहिए। ऋग्वेद में मन तथा हृदयों के विचार ज्ञान प्रेम संकल्प तथा परस्परिक व्यवहार का विश्लेषण करते हुए कहा है–

''हे मनुष्यों आपस में मिलो प्रेमपूर्वक बोलो, तुम्हारे मन एक ज्ञान वाले हों। सब मनुष्यों का विचार एक सा हो, सभी एक हों, मन एक हो, चिन्तन एक हो। मैं तुम सबकों एक मन्त्र देता हूँ और एक यज्ञ कर्म में लगाता हूँ। तुम सब का संकल्प एक हो। तुम सब का मन एक हो, जिसमें तुम्हारा अच्छा ऐक हों।''

समानी व आकूतिः आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।[4]

इस प्रकार नैतिक व मानवीय मूल्यों का ऋग्वेद में महत्वपूर्ण स्थान बतलाया गया है। यजुर्वेद में भी नैतिक मूल्यों पर प्रकाश डाला गया है।

''यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति।[5]

'' जो विद्वान सब भूतों को उस परमात्मा में ही स्थित देखता है और सब भूतों में अवस्थित उस परमात्मा को जानता है। जब किसी विषय में वह कोई संदेह नहीं करता है। अर्थात् जो समस्त प्राणियों को स्वात्मवत् में आत्मवत् व्यवहार को स्थापित करता है, उससे छिपा हुआ भेदभाव किसी का नहीं रहता।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि यजुर्वेद में मानवीय मूल्य अवधारणा अत्यधिक उत्कृष्ट थी।

सामवेद में भी मानवीय मूल्यों पर प्रकाश डाला गया है। सामवेद में तो स्वंय भगवान श्री कृष्ण मानवीय मूल्यों के उपासक रहे हैं। इसके प्रथम अध्याय, द्वितीय दशार्त के मन्त्र तीन में कहा गया है कि –

''हे जगत्पति ! आपके भक्तों की वाणी, जो यज्ञादि कर्मों में अत्यन्त दक्षिणादि द्वारा दान व त्याग के विरक्त भाव को उच्चारती है, उसी से यह समग्र वायु मण्डल भरा हुआ है। आगे बतलाया गया है कि परमात्मा की भक्ति की ओर झुकने से क्रमशः सांसारिक धनादि पदार्थों में वैराग्य भाव पैदा होता है। वे सत्पात्रों को दान देते हैं, इससे परमात्मा का समीप्य प्राप्त होता है। आगे कामना की गई है कि वाणी वायु मण्डल में अग्नि के समीप गूंजती हुई वायुमण्डल को अलंकृत करें। इस मन्त्र द्वारा विज्ञान का अंश दर्शाया गया है कि वाणी आग्नेय है और वह वायु के आधार पर एक मनुष्य से श्रोत द्वारा मनुष्य को प्राप्त होती है। मनुष्यों को परस्पर मित्र होकर उक्त गुण युक्त परमात्मा की उपासना पर ज़ोर दिया गया है। चूँकि परमात्मा ज्ञानमय है अतः उसकी प्राप्ति के लिए ध्यान एवं प्रार्थना करनी चाहिए कि यह जो हमारा हृदयदेश यज्ञस्थल के समान सुन्दर व स्वच्छ है उसमें परमात्मा की प्राप्ति हो।[6]

इस प्रकार हमें ज्ञात होता है कि सामवेद में भी मानवीय मूल्यों की अवधारणा को उत्कृष्ट स्वीकार किया गया है।

अथर्ववेद में नैतिक मूल्य अवधारणा पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है। इसमें बताया गया है कि मानव जाति को आज के विषाक्त वातावरण से मुक्ति दिलाने के लिए भावनाओं के उद्दीपक स्वरूप मन्त्र दिए गए हैं। जो कि निम्न है –

''मैं देवों में विद्वान जनों में, श्रेष्ठ कर्म करने वालों में अपने श्रेष्ठ विचार एवं विद्वता से प्रिय बनूँ। मेरे समान जो विद्या बुद्धि कर्मादि के द्वारा सब के प्रिय बने हुए हैं, उनमें मैं भी प्रिय बनूँ।''[7]

अथर्ववेद में असंभूति के मार्ग का बड़े बलपूर्वक समर्थन किया है परन्तु इसके साथ वेद, ने संभूति के मार्ग के लिए कहा है –

''मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार की छवि से हम ज्ञान शक्ति, श्रावण शक्ति और दर्शनशक्ति की उन्नति के लिए यज्ञादि कर्मों को करें। अन्तःकरण चतुष्ट्य की छवि जो यज्ञ सम्पन्न होगा उसका ज्ञान, उसका शब्द और उसका रूप भी आध्यात्मिक पक्ष का ही होगा।''[8]

मनुष्यों को अपनी कर्मठता एवं परिश्रम से सामर्थ्य बढ़ाकर किस प्रकार से दूसरों का उपकार करने के योग्य बनाना चाहिए इसका उदाहरण हमें अथर्ववेद के प्रथम काण्ड सूक्त 6 के मन्त्र 2 में मिलता है –

''जैसे परमेश्वर सब विद्याओं का प्रकाशक है। चन्द्रमा औषधियों को पुष्ट करता है और सेमलता मुख्य औषधि है। यह सब पदार्थ जैसे जल द्वारा औषधि अन्न आदि और शरीरों को बढ़ाने बिजली और पाचन शक्ति पहुँचने और तेजस्वी करने में मुख्य कारण होते हैं, ठीक वैसे ही मनुष्यों को परस्पर सामर्थ्य बढ़ाकर उपकार करना चाहिए।''[9]

भारतीय वाङ्मय के ब्राह्मण ग्रन्थों में भी मानवीय मूल्यों की अवधारणा पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों में ऐतरेय, शाङ्खायन, शतपथ, तैत्तिरीय, गोपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थ प्रमुख हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में तैंतीस देवताओं की गणना मिलती है। अग्नि को प्रथम वरीयता दी गयी है तथा विष्णु को देवाधिदेव माना है और इन्हीं के मध्य अन्य सभी देवताओं का समावेशीकरण हो जाता है।[10] इसी प्रकार शांखायन ब्राह्मण में भी मानवीय व्यवहार के तत्व प्रचुरता में उपलब्ध होते हैं। वाणी संयमन की उपादेयता का व्याख्याकारक कथन शांखायन में दृष्टिगोचर होता है।[11] तैत्तिरीय ब्राह्मण में मैत्री भाव पर ज़ोर दिया गया है। सात पगों की भी यात्रा जिनके साथ हो चुकी है। वे सभी मित्र कहलाते हैं उनके प्रति सखाभाव को कभी हानि नहीं पहुँचनी चाहिए।[12]

माता पिता पुत्र के प्रति आदर रखना चाहिए। सम्पूर्ण विश्व भी उसी पर आधारित है इसीलिय वह सबसे अधिक पूजनीय हैं, सम्मानीय है।[13]

गोपथ ब्राह्मण में भी सृष्टि हेतु श्रम तथा तप पर बल दिया गया है। इसीलिए भृगु तथा अथर्वा आदि ऋषियों ने भी तपस्या का अनुष्ठान किया।

देव सृष्टि तथा लोक सृष्टि भी श्रम तथा तप से ही सम्पादित हुई और इन्हीं से वेदों तथा महाकृतियों का भी निर्माण हुआ।[14] मन को बलवान यहाँ पर भी बताया गया है। मनुष्य जैसा सोचता है वैसा करता है।[15]

इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्राह्मण ग्रन्थों में नैतिक मूल्यों की अवधारणा पर विशेष बल दिया गया है। इनमें सत्य, दम, शम, दान, धर्म, सन्तान, अग्निहोत्र आदि पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है। उनके कहने का तात्पर्य था कि घर की शुद्धि के साथ यह स्वर्ग की प्राप्ति में भी सहायक होता है। ऐतरेय ब्राह्मण में पाप के विषय में बताते हुए कहा है कि जो एक बार पाप कर लेता है वह पुनः दूसरे पापों में प्रवृत्त हो जाता है :–

''यः सकृत्पातकं कुर्यात् कुर्यादेनन्ततो ऽपरम्।''[16]

ऐतरेय ब्राह्मण में ही कहा गया है कि जो व्यक्ति सम्पूर्ण वाणी और सम्पूर्ण ब्रह्म को ग्रहण करके श्रेष्ठता को प्राप्त हो जाता है, लोग उसकी कही हुई वाणी का ही अनुकरण करते हैं।

'' सर्वस्यै वाचः सर्वस्य ब्राह्मणः परिगृहीत्यै

यो वै भवति यः श्रेष्ठतामृनुते तस्य वाचं प्रोदितामनुप्रवदन्ति ।''[17]

श्रम के विषय में ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है कि जो व्यक्ति श्रम नहीं करता है उसे लक्ष्मी की प्राप्ति नहीं होती। जो व्यक्ति बिना श्रम के खाली बैठा रहता है वह पापी समझा जाता है। इन्द्र भी श्रम शील व्यक्ति का ही मित्र है। अतः सदैव श्रम करते रहना चाहिए क्योंकि बिना श्रम के संसार में कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

''नानाश्रान्ताय श्रीरस्तीति रोहित ! शुश्रुम। पापो नृषद्वरो जन इन्द्र इच्चरतः सखा।।''

चरैवेति ।[18]

व्यक्ति जब श्रमशील होता है तो वह पापों में संलिप्त नहीं होता है तथा मानवीय मूल्यों का पालन करने वाला भी बन जाता है इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है–

पुष्पिण्यौ चरतो जङ्घे भूष्णुरात्मा फलग्रहिः। शेरेऽस्य सर्वे पाप्मानः श्रमेण प्रपथे हताः।।

चरैवेति ।[19]

अर्थात् चिरणशील व्यक्ति की जाँघे स्फूर्ति के पुष्पों से और आत्मा स्वास्थ्य के फल से युक्त होती है। उसके सभी पाप परिश्रम करने से मानो मश्त्यु को प्राप्त हुए सोते रहते हैं, अतः श्रम करते रहो।

आस्ते भग आसीनस्योर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः। शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगः।।

चरैवेति ।[20]

अर्थात् बैठे हुये पुरूष का भाग्य बैठा रहता है। खड़े हुए का भाग्य खड़ा रहता है और विचरण करने वाले का भाग्य गतिशील रहता है, अतः श्रम करते रहों।

कलिः शयानो भवति संजिहानस्तु द्वापरः। उत्तिष्ठस्त्रेता भवति कृतं संपद्यते चरन्।।

चरैवेति ।[21]

सोया हुआ मनुष्य कलि है, नींद को त्यागने वाला द्वापर, उठा कर खड़े होने वाला त्रेता और परिश्रम करने वाला कृत होता है। अतः श्रम करते रहो।

चरन्वै मधु विन्दति चरन्स्वादुमुदुम्बरम्। सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरन्।।

चरैवेति ।[22]

विचरणशील व्यक्ति मधु प्राप्त करता है। विचरण करने वाले को ही स्वादिष्ट उदुम्बर फल मिलता है। सूर्य का परिश्रम देखो जो चलते हुए कभी आलस्य नहीं करता, अतः श्रम करते रहो।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि ऐतरेय ब्राह्मण में श्रम के महत्व को प्रकाशित करते हुए मानवीय मूल्यों की अवधारणा पर व्यापक प्रकाश डाला गया है। ऐतरेय ब्राह्मण में मानवीय मूल्यों की व्यापकता का उत्कृष्ट वर्णन मिलता है।

इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण में कभी मानवीय मूल्यों एवं नैतिकता पर प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि जो होना है वह तो होकर ही रहेगा अतः मानव को कभी नैतिकता को त्यागना नहीं चाहिए।

अद्धा हि तद् यद् भूतम्। अनद्ध हि तद् यद् भविष्यत्।[23]

अर्थात् जो हो चुका है वह तो निश्चित ही है और जो भविष्य में होगा वह अनिश्चित है।

शतपथ ब्राह्मण में बताया गया है कि यज्ञ करने से मन पवित्र होता है तथा पर्यावरण भी पवित्र होता है। यदि मनुष्य का मन पवित्र है तो वह पाप करने से घृणा करने लगता है। अतः मानवीय मूल्यों के पालन के लिए मन का पवित्र होना अत्यावश्यक है।

यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म यज्ञाप हि तस्मादाह श्रेष्ठतमापय कर्मण इति।[24]

अर्थात् यज्ञ ही सर्वश्रेष्ठ कर्म है। 'श्रेष्ठतम कर्म करने के लिए' कहने का तात्पर्य है यज्ञ करने के लिए कहना।

मनुष्य अपने भविष्य को लेकर अत्यधिक चिंतित रहता है वह भविष्य की अनेक योजनाओं को बनाता है और अपने अनेक कार्य आने वाले कल के लिए छोड़ता है। इसी तथ्य को शतपथ में दर्शाते हुए कहा गया है कि कल के ऊपर कोई कार्य नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि मनुष्य के कल को कौन जानता है? अर्थात् कोई नहीं।

''न श्वः श्वमुपासीत को हि मनुष्यस्य श्वो वेद।''[25]

शतपथ ब्राह्मण में सत्य की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि सत्य ही दृष्टि है और सत्य ही प्रजापति।

''सत्यं वै चक्षुः सत्यं प्रजापति :।''[26]

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि संसार में सत् और असत् दो ही बातें हैं। कोई तीसरी बात नहीं है। परमात्मा तथा देवताओं को सत्य स्वरूप कहा गया है तथा मनुष्य को असत्य स्वरूप। जब मनुष्य असत्य का ही स्वरूप है तो संसार में कोई पाप नहीं करना चाहिए। अतः मानव को अपने मूल्य कभी नहीं त्यागने चाहिए।

द्वयं वा इदं न तृतीयमस्ति। सत्यं चैवानृतं च। सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्याः।[27]

संसार सत्य पर ही आधारित है अतः मनुष्य को अपने मानवीय मूल्यों की रक्षा करने हेतु सदैव सत्य भाषण करना चाहिए। देवता सत्य स्वरूप व्रत का ही पालन करते हैं और इसी कारण यश को प्राप्त करते हैं इस प्रकार जो विद्वान सत्य भाषण करता है वह यश रूप ही हो जाता है।

यथा –

''स वै सत्यमेव वदेत्। एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति
यत्सत्यं तस्मात्ते यशो यशो ह भवति य एवं विद्वांत्सत्यं वदति।''[28]

जो सत्य बोलता है वह मानो अग्नि पर घी डालता है, उसको प्रज्ज्वलित करता है, उद्दीप्त करता है। उसका तेज दिन प्रतिदिन बढ़ता है। उसका उत्तरोत्तर कल्याण होता है और जो असत्य कथन कहता है वह मानो प्रज्ज्वलित अग्नि पर जल छिड़कता है और इस तरह उसे क्षीण कर देता है। उसका तेज दिन–प्रतिदिन कम होता जाता है और वह पापी होता जाता है। अतः सदैव सत्य ही बोलना चाहिए।

'स यः सत्यं वदति यथाग्निं समिद्ध तं घृतेनाभिषि चेदेवं हैनं स उद्यीपयति तस्य
भूयो भूय एव तेजो भवति श्वः श्वः श्रेयान्भवत्यथ योऽनृतं वदति
यथाग्निं समिद्धं तमुदकेनाभिषि चेदेवं हैनं स जासयति तस्य कनीयः कनीय
एवं तेजो भवति श्वः श्वः पापीयान् भवति। तस्मादु सत्यमेव वदेत्।[29]

मनुष्य चाहे बिलकुल कुछ न बोले परन्तु असत्य न कहे, अतः सत्य ही उपचार है।

न वदन्जातु नानृतं वदेत्तावत्सत्यमेवोपचारः।[30]

जो असत्य भाषण करता है वह पुरूष अपवित्र होता है।

''अमेध्यो वै पुरूषो यदनृतं वदति।''[31]

इस प्रकार शतपथ ब्राह्मण में मानवीय मूल्यों की आधारशिला सत्य की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है। सत्य को ही सर्वोपरि बताया गया है। सत्य बोलने पर ही विशेष बल दिया गया है असत्य के लिए मना किया गया है। साथ ही कहा गया है कि यदि कुछ भी बोलना है तो सत्य ही बोलो असत्य नहीं। साथ ही असत्य भाषण करने वाले पुरूष को अपवित्र घोषित कर दिया गया है।

इस प्रकार मानवीय मूल्यों की कसौटी पर ब्राह्मण ग्रन्थ शत प्रतिशत खरे उतरते हैं। संस्कृत वाङ्मय के ब्राह्मण ग्रन्थों में नैतिकता एवं मानवीय मूल्यों को उत्कृष्ट रूप से वर्णित किया गया है। अतः हम कह सकते है कि संस्कृत वाङ्मय के ब्राह्मण ग्रन्थों में मानवीय मूल्य के विषय में व्यापक दृष्टि डाली गयी है तथा इन ग्रन्थों से मनुष्य को सही दिशा का ज्ञान प्राप्त होता है।

मानव अपने नित्य दैनिक जीवन में विभिन्न प्रकार से सामाजिक प्राणियों के साथ जिस प्रकार का व्यवहार करता है, वहीं उसका आचरण कहलाता है। शतपथ ब्राह्मण में एक स्थान पर कथन प्राप्त होता है कि कोई भी ब्राह्मण म्लेच्छ वाणी का प्रयोग न करे, क्योंकि ये आसुरी भाषा है। शतपथ ब्राह्मण में हमें चतुर्वर्णों का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। एक स्थान पर पति पत्नी के

जीवन को दाने के दो दलों की भाँति माना गया है। मानवीय व नैतिक मूल्यों के अन्तर्गत स्त्री के लिए कथन प्राप्त होता है कि यदि वह अपने किसी पाप कर्म को छिपायेगी तो उससे स्वजनों का अहित होगा। व्यक्ति को चाहिए कि वह समाज में स्तुति योग्य व्यक्ति की ही स्तुति करे, पितरों पूर्वजों को नमस्कार करें तथा देवों का यजन करें, समाज में किसी को भी दुष्टता का व्यवहार नहीं करना चाहिए। क्योंकि ऐसे व्यवहार से दरिद्रता, रोग, संतानहीनता, पशुहीनता तथा अप्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है। समाज में

एक दूसरे को हानि न पहुँचाने का भी शतपथ ब्राह्मण में स्पष्टतः निर्देश प्राप्त होता है। सामाजिकता की श्रेणी के अन्तर्गत शतपथ ब्राह्मण में रीछ, व्याघ्र, नीच पुरूष, चोर, डाकू आदि से सुरक्षित रहने के लिए कहा गया है। सामाजिक नैतिकता के अन्तर्गत शतपथ ब्राह्मण में कथन प्राप्त होता है कि लोगों को उनके शुभ नामों से ही बुलाना चाहिए। शतपथ ब्राह्मण में मानवता की दृष्टि से स्त्री की हत्या को वर्जित किया गया है क्योंकि स्त्री को साक्षात् करूणा की देवी 'श्री' का अवतार माना गया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानवीय मूल्य अवधारणा अति प्राचीन है। वैदिक काल से लेकर वर्तमान काल तक इस सम्बन्ध में अत्यन्त विचार हुए हैं। भारतीय एवं पाश्चात्य मनीषियों ने भी मानवीय मूल्यों को व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की कुँजी बताया है। नैतिक मूल्यों के साथ भी मनुष्य का घनिष्टम सम्बन्ध है। मनुष्य इन मूल्यों का पालक है। मनुष्य संयम, सत्य, अहिंसा, पवित्रता, सदाचार, परोपकार, दया, त्याग आदि मूल्यों का संरक्षक व पालक है। वस्तुतः इन समस्त मूल्यों का उचित रूपेण पालन करने से मनुष्य अपना व समाज का उत्कृष्ट विकास करने में सहायक होता है।

सन्दर्भ

1. *महोपनिषद 4.71*
2. *याज्ञवल्क्य–मैत्रेयी संवाद, वृहदारण्यक उपनिषद् 24.2.5*
3. *कठोपनिषद् 1.2.2*
4. *ऋग्वेद 191.4*
5. *ईशावास्योपनिषद् 6*
6. *सामवेद 1.2.3*
7. *अथर्ववेद 17.1.1*
8. *अथर्ववेद 17.1.3*
9. *अथर्ववेद 1.6.2*
10. *ऐतरेय ब्राह्मण पृष्ठ – 14*
11. *शतपथ ब्राह्मण पृष्ठ – 14*

12. *तैत्तिरीय ब्राह्मण 3.7.7.11*
13. *तैत्तिरीय ब्राह्मण 3.12.3.2*
14. *ऋग्वेदानुक्रमणी 8.1.13*
15. *गोपथ ब्राह्मण 1.1.1*
16. *ऐतरेय ब्राह्मण 7.17*
17. *ऐतरेय ब्राह्मण 2.15*
18. *ऐतरेय ब्राह्मण 7.15*
19. *ऐतरेय ब्राह्मण 7.15*
20. *ऐतरेय ब्राह्मण 7.15*
21. *ऐतरेय ब्राह्मण 7.15*
22. *ऐतरेय ब्राह्मण 7.15*
23. *शतपथ ब्राह्मण 2.3.1.25*
24. *शतपथ ब्राह्मण 1.7.1.5*
25. *शतपथ ब्राह्मण 2.1.3.9*
26. *शतपथ ब्राह्मण 4.2.1.26*
27. *शतपथ ब्राह्मण 1.1.1.4*
28. *शतपथ ब्राह्मण 1.1.1.5*
29. *शतपथ ब्राह्मण 2.2.2.19*
30. *शतपथ ब्राह्मण 2.2.2.20*
31. *शतपथ ब्राह्मण 1.1.1.1.*

शोध–सार

वर्तमान परिपेक्ष्य में यदि हम मानवीय मूल्यों की बात करें तो इनमें अत्यधिक गिरावट आयी है आज मनुष्य में परार्थ के स्थान पर स्वार्थ की भावना घर कर गयी है। अपने स्वार्थ के वशीभूत होने के कारण मानव–मानव के कष्टों का निवारण नहीं कर रहा है, बल्कि उसकी मजबूरी का लाभ प्राप्त करना चाहता है। मानवीय मूल्य विघटन का क्षेत्र दिन–प्रतिदिन समाज को खोखला बना रहा है। अतः मनुष्य को अपने प्राचीन ग्रन्थों को अध्ययन करने की परम आवश्यकता है। इन प्राचीन ग्रन्थों में ब्राह्मण ग्रन्थों का स्थान सर्वोपरि है। ब्राह्मण ग्रन्थों में मनुष्य के व्यवहार करने की प्रक्रिया वर्णित है। अतः ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुशीलन से मानव जाति को सही दिशा प्राप्त हो सकती है और उसके व्यवहार में परिवर्तन आ सकता है। साथ ही वह स्वार्थ से परार्थ की भारतीय साहित्य विश्व के समस्त साहित्यों में सर्वाधिक प्राचीन है। इनमें भी प्राचीन संस्कृत साहित्य है। संस्कृत साहित्य में मानवीय मूल्यों का उत्कृष्ट वर्णन हुआ है। वैदिक

साहित्य से लेकर लौकिक साहित्य तक मानवता तथा नैतिकता का व्यापक वर्णन किया गया है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः समाज में उसे ऐसा आचरण करना चाहिए जिससे कि किसी को कोई दुःख ना हो। प्राचीन काल का वैदिक मानव 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से अनुप्राणित था। वह समस्त क्रियायें एक दूसरे के सहयोग से करता था। सत्य बोलता था, नैतिक व्यवहार करता था, चरित्रवान था, किन्तु आज का मानव इन समस्त भावनाओं से दूर होता जा रहा है। परोपकार की भावना आज के मनुष्य के हृदय से लुप्त हो चुकी है।

हम देखते है कि वेद, आरण्यक, उपनिषद् व ब्राह्मण ग्रन्थों में मानवीय मूल्यों पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त लौकिक साहित्य में भी विभिन्न ग्रन्थों के माध्यम से मानवीय मूल्यों का व्यापक वर्णन किया गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों में ऐतरेय, शांखायन, तैत्तिरीय, शतपथ, गोपथ आदि प्रमुख हैं जिनमें मानवीय मूल्यों पर व्यापक प्रकाश डाला गया है। शतपथ ब्राह्मण में तो सत्य को सर्वश्रेष्ठ मूल्य सिद्ध किया गया है और कहा गया है कि सदैव सत्य भाषण ही करना चाहिए कभी भी असत्य भाषण नहीं करना चाहिए।

शांखायन ब्राह्मण में भी मानवीय व्यवहार के नियामक तत्व प्रचुरता में उपलब्ध हैं। वाणी संयमन की उपादेयता का व्याख्यान शांखायन मे ंदृष्टिगोचर होता है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में मैत्रीभाव पर विशेष बल दिया गया है इसमें बताया गया है कि जिनके साथ सात पगों की भी यात्रा हो चुकी है वे सब मित्र कहलाते हैं। उनके प्रति सखाभाव को कभी हानि नहीं पहुँचनी चाहिए। माता, पिता, पुत्र आदि के प्रति सदैव आदर रखना चाहिए। गोपथ ब्राह्मण में भी सृष्टि हेतु श्रम तथा तप पर बल दिया गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्राह्मण ग्रन्थों में मानवीय मूल्य अवधारणा पर विशेष बल दिया गया है। इनमें सत्य, दम, शम, दान, त्याग, धर्म, सन्तान आदि पर सम्यक प्रकाश डाला गया है। अतः ब्राह्मण ग्रन्थ मानवीय मूल्यों की आधार शीला हैं।

मानवीय मून्यों के सन्दर्भ में चित्रकला का दायित्व

डॉ. मनीषा शर्मा
सहायक अध्यापक, ड्राइंग एण्ड पेंटिंग
किशोरी रमन गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, मथुरा।

साहित्य संगीत कलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः।
तृणं न खादन्नपि जीवमानस्त द्वागधेयं परमं पशुनाम्।

अर्थात् साहित्य, संगीत और कला से विहीन मनुष्य साक्षात नाखून और सींग रहित पशु के समान है।

वास्तव में कला समाज के लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी हमारी प्राथमिक आवश्यकताऐं जैसे खाना पानी सोना आदि। कला समाज का दर्पण है। प्रत्येक काल की कला उस समय के समाज, वातावरण, पहनावा, रहन सहन आदि का प्रतिनिधित्व करती है। कला आलोचनाओं तथा कला शास्त्रों में मानव कल्याण को कलाओं का सबसे बड़ा कार्यमाना गया है। चित्रसूत्र में कहा गया है कि कला धर्म, अर्थ काम मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों को प्रदान करने वाली होती है।

नीति शास्त्र में मूल्य का अर्थ किसी वस्तु या क्रिया के महत्व को दर्शाता है जिससे उसकी श्रेष्ठता का पता चलता है। प्लेटो के अनुसार कला को केवल आनन्ददायी ही नहीं बल्कि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिये उपयोगी भी होना चाहिये। प्रागैतिहासिक मनुष्य ने चट्टानों पर तत्कालीन जनजीवन को चित्रित किया।

प्राचीन सभ्यताओं के जो अवशेष मिले हैं उनसे यह स्पष्ट है कि विश्व के प्रायः सभी भागों में कलाओं ने लोगों की धार्मिक आवश्यकताओं को पूर्ण किया। धर्म के साथ साथ राष्ट्रभक्ति भी कलाओं का दायित्व रही। प्रत्येक देश की संस्कृति और सभ्यता में कला का सीधा सम्बन्ध हम धर्म के साथ देखते हैं जैसे ईसाई कला, बौद्ध कला, इस्लामिक कला आदि। राज्यों के संरक्षण में कला का पालन पोषण हुआ और कला उन्हीं शासकों या शासन कालों के नाम से जानी गयी जैसे मौर्य कला, गुप्तकला, वाकाटक कला, पल्लव कला, मुगल कला आदि आदि।

कला मूलरूप से सत्यमं शिवं सुन्दरम् पर आधारित होती है। कला का प्रधान लक्ष्य सौन्दर्य की अनुभूति है, जो रूप के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है, इसकी प्रेरणा कलाकार अपने चारों ओर फैली हुई प्रकृति से लेता है। सत्यम शिवम सुन्दरम के शिवम का अर्थ है नैतिक या कल्याणकारी। कलाओं में इसका विचार दो प्रकार से किया जाता है–एक विषय की दृष्टि से, दूसरा प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से।

कलाकार समाज के साधारण सदस्यों से भिन्न और कुछ ऊपर उठा हुआ होता है अर्थात विशिष्ट होता है।

प्रत्येक कलाकार अपने देश की राजनीतिक व्यवस्था का प५्७ठ पोषक होता है। सभी कलाओं में चित्रकला का एक विशिष्ट स्थान है। विष्णु धर्मोत्तर पुराण के चित्रसूत्र में चित्रकला का महत्व इस श्लोक में प्रस्तुत किया गया है—

— कलानां प्रवंर चित्रम् धर्मार्थ काम मोक्षाद्।

मांगल्य प्रथम् दोतद् गृह यत्र प्रतिष्ठितिभ।।

विश्व की सभी सभ्यताओं में प्रागैतिहासक चित्र मिले हैं जो उस समय के मानवीय मूल्यों—आध्यात्मिकता, नैतिकता, न्याय, प्रकृति, मानवीय प्रेम आदि को प्रदर्शित करते हैं।

भारत में भी जोगीमारा और अजन्ता के चित्रों से भारतीय चित्रकला का इतिहास पता चलता है। जोगीमारा के चित्र लगभग 300 ईसा पूर्व के हैं सम्भवतः अशोक कालीन। अब वह बिल्कुल जर्जर अवस्था में है लेकिन जिस समय उनकी खोज हुई (1914) तब वह कुछ अच्छी अवस्था में थे और उन्हीं चित्रों के द्वारा हमें हजारों वर्ष पूर्व की जीवन शैली का पता चलता है। इसी प्रकार अजन्ता में चित्रित जातक कथाओं से बुद्ध का जीवन, उनका गृहत्याग, एक क्षत्रिय से बौद्ध संत बन जाना, उस समय के रीति रिवाज, दैनिक जीवन, राजनैतिक जीवन, लगभग सम्पूर्ण सामाजिक, राजनैतिक व लोकाचार आदि परिस्थितियों के दर्शन होते हैं।

चूंकि कलाकार एक सामाजिक प्राणी है और उसकी कला की प्रेरणा उसे समाज से ही मिलती है। अतः कलाकार और कला दोनों का दायित्व मानवीय मूल्यों को प्रस्तुत करना और प्रेरणादायी बनाना है और होना चाहिए।

मानव मूल्यों को शिक्षा की आवश्यकता

सुशील कुमार
शोद्यार्थी पी.एच.डी (शिक्षाशास्त्र)
स्कूल ऑफ एजूकेशन
शोभित इंस्टीटयूख्ऑफ इन्जीनियरिंग एण्ड टेक्नालॉजी मेरठ, उ0प्र0 (भारत)

शिक्षा–प्रक्रिया में जिन क्रियाशीलताओं का विशेष महत्व होता है वे बहुत मूल्यवान समझी जाती है। उनसे विद्यार्थी नई बाते सीखते है। इन्ही क्रियाशीलताओं के आधार पर अध्यापक अपनी एक विशिष्ट अध्यापन तकनीकी का विकास करता है। शैक्षिक क्रियाशीलताए बहुधा पाठ्य–वस्तु, शिक्षण–विधि तथा अध्यापक की क्षमता पर निर्भर होती है। ये क्रियाशीलतायें शिक्षा के प्रधान उददेश्य की ओर ही संकेत करती है। इन क्रियाशीलताओं के आधार पर ही विद्यार्थी कुछ गुण, आदत तथा योग्यता ओर विशिष्ट कौशल अपनाता है। ये शैक्षिक मूल्य कहे जा सकते है। पाठयक्रम का संगठन, पाठय–वस्तु का किसी अध्यापन प्रक्रिया हेतु चयन तथा अध्यापन की पद्धति आदि के नियोजन में शिक्षाशास्त्री, शिक्षाधिकारी तथा सम्बन्धित अध्यापक शिक्षा के उदेश्यों पर विशेषतः ध्यान देते है। जो कुछ भी शिक्षा के उददेश्य निर्धारित होते है उन्हीं से अन्ततः शैक्षिक मूल्य प्रस्फुटित होते रहते है। शैक्षिक मूल्यों का विकास केवल अध्यापक का ही दायित्व न होकर उसमें शिक्षाशस्त्री राजकीय शिक्षाधिकारी तथा अन्य सम्बन्धित लोगों का भी दायित्व होता है।

हमारे सामने एक प्रश्न उठता है कि युग मूल्य आखिर बनें कैसे? अर्थात एक काल विशेष में एक समाज के अन्तर्गत वे कौन से कारक है जो मूल्यों को बनाने में सहायक हैं? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें व्यक्ति, समाज तथा शिक्षा तीनों की सम्पूर्ण गतिविधियों का अवलोकन करना होगा। छात्र वह बीज है जो अपने अन्दर समस्त मूल्यों के विकास को समेंटे हुए है। शिक्षा वह परिवेश है जो इस बीज को खाद–पानी देकर उसे विकसित होन का अवसर प्रदान करती है। इन दोनों के योगदान से ही मूल्यों का उद्भव होता है। शिक्षा समाज की वह सीढ़ी है जिस पर पांव रखकर व्यक्ति अपने का उददेश्य प्रायः समाज के सभी व्यक्तियों द्वारा समान रुप से स्वीकार किया जाता है। शिक्षा, समाज तथा व्यक्ति तीनों मिलकर यह निर्धारित करते है कि किन बातों पर ध्यान देने से अमुक काल में व्यक्ति तथा समाज का कल्याण सम्भव है।

भारत में धर्मनिरपेक्षता का बहाना बनाकर मूल्य निरपेक्ष शिक्षा का नारा उछाला गया। अस्तु, देश में विघटनकारी तत्व आज पहले से कहीं अधिक है, युवा पीढ़ी विध्वंसात्मक कार्यो में जुटी दिखाई देती है। समाज के मूल्य क्षण भंगुर हो गए हैं। शिक्षा प्रणाली मनुष्य में राग, द्वेष, हर्ष, शोक उत्पन्न कर रही है। ये ही मूल्यों का हृास होने का प्रमुख कारण है। भावना नहीं अपितु

पदार्थ शिक्षार्थी में चिन्तन का विषय बन गया है। शिक्षा न तो मनुष्य में आत्मनियन्त्रण, न ही स्वाध्याय का विकास कर भेद कर रही है। जब बालक यथार्थता को आदर्शो से भिन्न देखता है तो वह असहाय जो हाता है। वर्तमान शिक्षा पद्धति और मूल्यों में कोई समन्वय नहीं है। भाषण, नोट्स तथा बने बनाये उत्तरों को दोहराने का कौशल ही शिक्षार्थी की परीक्षा का मापदण्ड है। शिक्षार्थी न तो अपने अस्वित्व को पहचान पाता है, न ही पुस्तकीय ज्ञान उसकी सहायता करता है। ये गिरते हुए मूल्य हमारी शिक्षा के लिए एक चुनौती है। शिक्षा में सुधार के द्वारा ही इन्हे सुधारा जा सकता है।

शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत बालक सत्य के आधार पर अहिंसा द्वारा प्रेमपूर्वक जीवनयापन करना सीखें। शिक्षा से ऐसा मनुष्य बनाना है जो स्वयं स्वेच्छा से शाश्वत मूल्यों के पालन का प्रयास करे, जिससे व्यक्ति, समाज सभी का कल्याण सम्भव हो। इसके लिए शिक्षा व्यक्ति की आत्मा जाग्रत करना आवश्यक है, जिसके लिए आध्यात्म की आवश्यकता है। वर्तमान समय में विज्ञान ने आध्यात्म की जडे उखाड़ फेंकी है। शिक्षा में आध्यात्म को भी स्थान दिया जाना चाहिए। तभी मूल्यों का धराशायी वृक्ष पुनः खड़ा हो सकता है। अन्यथा आज की शिक्षा के स्तर को देखते हुए भारतीय संस्कृति के मूल्यों का संरक्षण दुष्कर प्रतीत होता है।

भारतीय संविधान नैतिक मूल्यों की अमूल्य निधि है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में जो मूल्य बताए गये है उन्हे शिक्षा द्वारा छात्रों की जीवन में उतारा जा सकता है। वे मूल्य हैं— प्रजातंत्र, समाजवाद, उपकार, धर्मनिरपेक्षता, न्याय, सहिष्णुता, व्यक्ति की गरिमा, विचार, अभिव्यक्ति आदि। ईमानदारी, उपकार, विनम्रता, अंहकार, निस्वार्थता, समभाव, मन, वचन, कर्म की एकता के गुण। इन्हीं मूल्यों को छात्रों को अपने जीवन में उतारना है। बालक को मूल्यपरक शिक्षा देनी चाहिए। वर्तमान समय में मूल्यों को बताने के लिए मात्र उपदेश ही पर्याप्त साधन माना जाता है। इसमें अनुभूति, चिन्तन तथा क्रियान्विति नहीं है।

मूल्यपरक शिक्षा में ये सभी बातें अपरिहार्य है। शिक्षा ऐसी दी जानी चाहिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति यह समझे कि वह स्वयं क्या है? उसके कर्त्तव्य क्या है? उसे जीवन में किसे प्राथमिकता देनी है? निष्ठाओं का टकराव क्यो होता है? तभी वह अच्छे मूल्यों का विकास कर सकता है। इनका सम्बन्ध पाठ्यक्रम, पाठ्य—वस्तु एवं परीक्षा से भी जुड़ा हुआ है।

मूल्यपरक शिक्षा में शिक्षार्थी को अनुभव से जोड़ना चाहिए। विद्यालय में विभिन्न महापुरुषों की जयन्तियों, धार्मिक उत्सवों का आयोजन करना चाहिए। विद्यालय में समय—समय पर भाषण, संगोष्ठी, निर्देशन, ट्यूटोरियल आदि को अपनाया जा सकता है। आपसी सहयोग एवं सद्भावना के माध्यम से छात्रों में धर्मो के प्रति आदर को अधिकाधिक अवसर प्रदान किए जाने चाहियें। शिक्षक का व्यवहार वैयक्तिक मूल्यपरक शिक्षण तभी दे सकता है, जब उसमें स्वयं अच्छे मूल्य विकसित होंगे। यदि शिक्षक में अच्छे मूल्य विकसित होंगे तो छात्र शिक्षक को

उदाहरण के रुप में प्रेरणा बना सकता है। उपदेश से उदाहरण श्रेष्ठ है। शिक्षक का स्वयं का आचरण भी ऐसा होना चाहिए कि उसका व्यक्तित्व छात्रों के लिए अनुकरणीय बन जाए। हर छात्र का आदर्श उसका शिक्षक ही होता है। वह वही कार्य करने की चेष्टा करता है जो शिक्षक करता है। शिक्षक जिन मूल्यों को छात्रों को देना चाहता है वह स्वयं उसमें भी व्यक्त होने चाहियें।

मूल्यों के विकास हेतु नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति शिक्षा में सुधार हेतु नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति सामने आई है। नई शिक्षा नीति ने शिक्षा की प्रक्रिया का पुनः अभिविन्यास करने का प्रयास किया है। युवकों को यह अनुभव कराया जाए कि किस तरह से वे शोषण असुरक्षा को रोक सकते है। शिक्षा द्वारा छात्र में सत्य, सहयोग, कर्त्तव्यपरायणता आदि का विकास हो। बालक सबसे पहली शिक्षा माता–पिता से लेता है। अतः माता–पिता का व्यवहार मूल्यों से सम्बन्धित होना चाहिए। वर्तमान पाठ्यक्रम में नैतिक मूल्य सम्बन्धी अंशों को बढाना चाहिए, पाठ्य–पुस्तकों में भी नैतिक मूल्य सम्बन्धी अंश होने चाहियें।

वर्तमान समाज में मूल्यो का हशस शिक्षा के लिए एक गम्भीर चुनौती है, जिसे स्वीकार करके शिक्षा को ही मूल्यों का विकास करना होगा। शिक्षा में सुधार द्वारा ही इन मूल्यों के हशस को रोका जा सकता है।

राष्ट्र और समाज के विकास के लिए शिक्षा ही प्रमुख साधन है। इसके द्वारा मानव के शिवत्व एवं विनाश दोनों की ही स्थितियॉ उपस्थित हो सकती है। कुशिक्षा स्वयं के लिए ही नहीं अपितु समाज और राष्ट्र के लिए भी हानिकारक होती है। अतः शिक्षा में शिवत्व पर बल देना चाहिए।

भारत में शिक्षा में आमूल परिवर्तन हेतु राष्ट्रीय शिक्षा आयोगों का गठन एक महत्वपूर्ण शैक्षिक कदम रहा है। वर्तमान युग विज्ञान और औद्योगिकी पर आधारित है। ज्ञान के तीव्र विस्तार एवं विस्फोटक से आगामी दशक में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास विगत कई शताब्दियों के प्राप्त ज्ञान के बराबर या उससे भी अधिक होगा। संसार के समक्ष एक ओर विकट चुनौतियॉ मुखरित हो रही है और दूसरी और सर्जनात्मकता के सम्भावित आयाम खुल रहे है। ज्ञानाधारित विश्व एक खुला विश्व है। डा0 दौलतसिंह कोठारी ने कहा है कि शिक्षा में नई–नई कृत्रिम वस्तुओं का प्रयोग हो रहा है।

कुछ लोगों ने इस युग को सौर युग कहा है, तो हिरोशिमा बम विस्फोट से ज्यादा विस्फोट 'न्यूक्लीयर बम' ने मनुष्य को विनाश के कगार पर खडा कर दिया है। ऐसे में शिक्षा की गुणवत्ता बढ गई है। शिक्षा द्वारा विज्ञान एवं मानवतावाद का बन्धन, ज्ञान और बुद्धि का बन्धन दूर करना है। अन्यथा लोग विशेषज्ञ तो होंगे किन्तु मानव नहीं होगे। अतः विज्ञान के साथ मानवीय मूल्यों को भी महत्व देना होगा।

आज हम बीसवीं शताब्दी के विशाल एवं आश्चर्यजनक सत्य 'विज्ञान' की ओर झुक रहे है। ऐसे में यदि अहिंसा और विज्ञान साथ–साथ होंगे तो वहाँ समता, न्याय, वैभव एवं आनन्दपूर्ण जीवन होगा। यह केवल बुद्ध, अरविन्द, टैगोर एवं गाँधी के देश में हो सम्भव है।

विज्ञान और तकनीकी के विस्तार के साथ विवके और बुद्धि का संकुचन हो रहा है। ज्ञान बढ रहा है और व्यक्तित्व का पतन हो रहा है। इस प्रकार ज्ञान और विवके का असन्तुलन हो गया है। कठिनाइयां बढ गई हैं। जनसंख्या विस्फोट, हिंसा का ताण्डव–नृत्य पारस्परिक शत्रुता, घृणा, मारकाट फैली है। यह मानव स्थिति भी भयानक रुपरेखा है। इस पर वैज्ञानिक बहुत कम विचार कर रहे है। आज आधे से ज्यादा वैज्ञानिक और इंजीनियर संहारक यंत्रों का निर्माण कर रहे है। शिक्षा की इन सब को यही दिशा दे सकती है। शिक्षा द्वारा वैज्ञानिक प्रगति का लक्ष्य हमें अनुसन्धान आदि में उच्चतम स्तर हेतु प्रयास आवश्यक है। विद्यालयों में संयम तथा सामाजिक व नैतिक मूल्यों का सृजन आवश्यक है।

उपसंहार– विविध विद्वान मूल्य शब्द का सम्बन्ध दर्शन, मनोविज्ञान, सामाजिक विज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि के साथ जोडते है। मूल्य शब्द का प्रयोग मूल्य की आवश्यकता, प्रेरणा, आदर्श, अनुशासन आदि अनेक कार्यो में होता है जीवन को आदर्श तथा सफल बनाने में मानव मूल्य सहायक होता है। मानव को पूर्ण व नम्र व्यवहार उसे मूल्यवान बनाता है आज समाज में मूल्य संक्रमण की स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिससे मानव पुराने मूल्यों को पूरी तरह से नकार नही पा रहा तथा नये मूल्यों को सहर्ष ही स्वीकार करना नही चाहता। आज के बदलते सामाजिक परिवेश में शिक्षा, शिक्षा के प्रकार और शिक्षा प्राप्त करने के तरीको में कई परिवर्तन आये है जिसमें शिक्षक की भूमिका में भी बदलाव आया है, एक अच्छे शिक्षक के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा कि श्रेष्ठ शिक्षक वही है जिसको अपने विषय में गहरी पैठ हो। उसका अपने विषय पर तो अधिकार होना ही चाहिए, अध्यापन क्षमता भी उत्कृष्ट कोटि की होनी चाहिए, जिससे छात्रों को श्रेष्ठ ज्ञान लाभ मिल सके। अतः शिक्षा जीवन को दिशा देने के लिए होती है, उसे भटकाव में छोडने के लिए नही।

सन्दर्भ

1. *शर्मा आर0ए0 (2008) मानव मूल्य एवं शिक्षा, आर0लाल0 बुक डिपो मेरठ।*
2. *शर्मा एवं महेश्वरी (2005) समाजिक अध्ययन शिक्षण, आर0लाल0 बुक डिपो मेरठ।*
3. *एन0आर0 स्वरुप सक्सेना (2008) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, आर0लाल0 बुक डिपो मेरठ।*
4. *शर्मा एवं शर्मा (2006) समाजिक पर्यावरण अध्ययन शिक्षण, राधा प्रकाशन आगरा।*

स्नातक स्तर पर शिक्षण के सन्दर्भ में सरकारी एवं निजी प्रबन्धतंत्र (प्राईवेट) महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मूल्यों एवं सामाजिक सफलता के मध्य सह-सम्बन्धों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. नीतू चावला
प्राचार्य
मंगलमय इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमैंट एण्ड टैक्नोंलॉजी, ग्रेटर नोयडा।

समाज और व्यक्ति एक दूसरे के पूरक होते है, एक के बिना हम दूसरे के अस्तित्व की कल्पना भी नही कर सकते मैकाइवर तथा पेज के अनुसार–"व्यक्ति तथा समाज का सम्बन्ध एक तरफ का सम्बन्ध नही है इनमें से किसी एक को समझने के लिए ही आवश्यक है।" अरस्तू के अनुसार ''मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इस बात का सरल अर्थ ये है कि मनुष्य अपने अस्तित्व और विकास के लिए समाज पर जितना निर्भर है, उतना और कोई प्राणी नहीं। मनुष्य में हम जो भी कुछ सामाजिक गुण देखते है वह समाज की ही देन है।" एक व्यक्ति की प्राथमिक पाठशाला उसका अपना परिवार होता है और परिवार का एक अंग है जहाँ हमें सबसे पहले शिक्षा मिलती है। परिवार और समाज के अनुरूप ही एक व्यक्ति में सामाजिक गुणों तथा विशेषताओं का विकास होता है। आज हमारे समाज का स्वरूप तेजी से परिवर्तित हो रहा है, ये भी सही है कि परिवर्तन इस संसार का नियम है लेकिन जिस तरह से हमारे समाज में मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है, वो सही नहीं है। प्राचीन काल में पाठशालाओं में धार्मिक और नैतिक शिक्षा पाठयक्रम का अभिन्न अंग थे। अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षा नीति को धार्मिक तथा मूल्य शिक्षा से बिलकुल अलग रखा, उन्होनें राज्य द्वारा संचालित विद्यालयों में इस शिक्षा को पूर्ण रूप से बंद करके धार्मिक तटस्थता की नीति का अनुसरण किया। स्वतन्त्र भारत में भी देश को धर्म निरपेक्ष धोषित कर दिया कि राज्यकोष से चलाई जाने वाली किसी भी संस्था में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी।

प्रस्तावना

वर्तमान समय में हमारे मूल्य भी बदल रहे हैं क्योंकि नगरीकरण, आधुनिक सभ्यता, वैज्ञानिक दश्ष्टिकोण आदि के कारण नई पीढ़ी के लोग सभी पुरातनपंथी विचारधारा से चिपके नहीं रहना चाहते है। शिक्षा में ऐसे मूल्यों को जोड़ने का असफल प्रयास नहीं करना चाहिए जो

युगानुरूप नहीं रह गए है। इसमें धार्मिक कट्टरता, किसी एक धर्म के प्रति आग्रह जैसा भाव नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे शिक्षा बोझिल हो जाती है। सदाचार की वैसी बातें जो सभी धर्मो व सभी संप्रदायों को मान्य है, समाहित कर हम नए, प्रगतिशील समाज की रचना कर सकते है।

हम ऐसी शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था नहीं कर सकते जिसमें पढ़ाई शुरू करने से लेकर रोगजार पाने तक, सम्पूर्ण अवधि के दौरान बच्चों के चेहरे पर मुस्कान बनी रहे। क्या ऐसा करना संभव है? जो हाँ सम्भव है। यदि हम सम्पूर्ण किसी प्रणाली को सृजनशील बना दे और रूझान व क्षमता के आकार पर सभी युवाओं को रोजगार उपलब्ध करा सकें। प्राइमरी स्कूल के स्तर पर बच्चों की सृजनशीलता को प्रोत्साहित किया जा सकता है। सेकेडरी स्कूल के बच्चों की सृजनशीलता में और निखार लाया जा सके। उद्देश्य यही होना चाहिए कि अंततः उच्च शिक्षा प्राप्तकर छात्र स्वावलंबी बने जिससे वे उद्यमशील हो। उनमें मूल्यों का विकास हो और रोजगार खोजने के बजाए खुद रोजगार पैदा करे।

कक्षा में पढ़ाई जितनी महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण यह है कि कक्षा के बाहर बच्चें स्वयं अनुभव के आधार पर क्या सीख रहे है, बच्चों को प्रेक्षण क्षेत्र अध्ययन, प्रयोग और परिचर्चा के माध्यम से सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। इस मकसद के पाने के लिए विद्यालय को शिक्षा केन्द्र की जगह अपने आप को ऐसे केन्द्र के रूप में डालना चाहिए जहाँ ज्ञान के साथ–साथ कौशल प्राप्त किया जा सके। बच्चों को शिक्षित और तेजस्वी नागरिक बनाने में माता–पिता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उन्हे अपने बच्चों की अच्छी शिक्षा के प्रति सजग रहने की आवश्यकता है। बच्चों के सामने माता–पिता का व्यवहार, आचरण और मूल्यों की मिसाल रखनी चाहिए। इससे बच्चों के मन में माता–पिता के प्रेम और श्रद्धा का विकास होगा। तथा वे उन्हें अपना आदर्श मानेगें। बच्चे जब 18 वर्ष के होते है तब तक उन्हे संवारने का सामूहिक मिशन माता–पिता शिक्षकों, घर एंव विद्यालय परिसर का जिम्मा होता है किन्तु जब वे थोड़े बड़े होकर विद्यालय एंव कालेज जाने लायक होते है तो उन्हें मूल्य आधारित शिक्षा की आवश्यकता होती है। ऐसे में कालेज का माहौल का बड़ा महत्व है जहाँ छात्रों का चरित्र निर्माण किया जा सके।

अध्ययन की आवश्यकता

शिक्षा आधुनिक युग की प्रथम आवश्यकता मानी जा सकती है। ग्रामीण समुदाय का जीवन स्तर ही देश का जीवन स्तर माना जाता है। इस समुदाय की प्रगति सम्पूर्ण देश की प्रगति मानी जाती है। भारत को उन्नत व ग्रमीण विकास के क्षेत्र को सर्थक बनाया जाना चाहिये रचानात्मक कार्यो के द्वारा ग्रामीण क्षेत्र मे बेकार पड़ी ग्रामीण समुदाय की अपार जनशक्ति और साधन का समुचित उपयोग किया जाना चाहियें।

शोध अध्ययन के उद्‌देश्य

1. स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्रों (कुल छात्र व छात्राओं) के बीच संवेगात्मक सफलता की तुलना करना।
2. स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं के बीच संवेगात्मक सफलता की तुलना करना।
3. स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरन छात्रों (पुरूषों) के बीच संवेगात्मक सफलता की तुलना करना

शोध अध्ययन की परिकल्पना

1. स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्रों (कुल छात्र व छात्राओं) के बीच संवेगात्मक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं के बीच संवेगात्मक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरन छात्रों (पुरूषों) के बीच संवेगात्मक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परिसीमन

क्षेत्रः शोध अध्ययन बरेली मण्डल के स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों तक ही सीमित होगा।

- ➢ न्यायदर्शः कला व विज्ञान वर्ग के स्नातक स्तर के अध्ययनरत कुल 600 छात्रों के शोध न्यायदर्श हेतु चुना जायेगा।
- ➢ लिंगः स्त्री लिंग व पुरलिंग दोनों प्रकार के छात्रों को शोध अध्ययन हेतु चुना जायेगा।

अध्ययन विधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता के द्वारा वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधी Descriptive Survey Method का प्रयोग किया गया है।

<u>शोध उपकरण</u> प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्वयं निर्मित शोध उपकरणों का प्रयोग किया गया है जिनमें स्मृति मापनी, अभिवृन्ति मापनी, आदि उपकरणों का प्रयोग किया गया है

<u>प्रदत्त संकलन की विधि</u> प्रदत्त संकलन के हेतु शोधार्थी ने न्यादर्ष के रूप में चयनित बरेली मण्डल के स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालया 600 छात्रों से स्मृति मापनी–अभिवृन्ति मापनी को प्रशासित किया गया। इसके उपरान्त सांख्यकीय विश्लेषण किया गया है।

सारणी 4.6

बरेली मण्डल में स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत कला और विज्ञान वर्ग छात्रों (महिला एवं पुरूष) के मध्य सामाजिक सफलता

सामंजस्य	कला वर्ग N= 243		विज्ञान वर्ग N= 327		T- मूल्य	सार्थकता का स्तर
	Mean	S D	Mean	S D		
भावनात्मक	5.28	3.24	5.04	3.46	0.88	N.S.
सामाजिक	9.48	2.95	8.72	3.04	2.97	0.01
शैक्षिक	8.27	3.47	8.03	3.49	0.81	N.S.
सम्पूर्ण	23.03	6.25	21.79	7.25	2.20	0.05

निष्कर्ष

1. सारणी 4.6 प्रदर्शित करती है कि कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के भावात्मक सफलता के लिये ज. मूल्य 0.88 है जो सार्थक नही है सार्थकता का स्तर 0.05 है। इसलिए शून्य परिकल्पना हैं। कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के भावनात्मक सफलता के मध्य कोई सार्थक अन्तर नही है ऐसा स्वीकार किया गया है। गणना में यह पाया गया कि कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के भावनात्मक सफलता में अन्तर वास्तविक नही है लेकिन यह न्यादर्श त्रुटि के कारण हो सकता है। इस प्रकार यह व्याख्या की जा सकती है कि बरेली मण्डल में स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के भावनात्मक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नही है।
2. सारणी 4.6 यह प्रदर्शित करती है कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता के लिए मूल्य 2.97 है। जिसका सार्थकता का स्तर 0.01 है। इसलिए शून्य परिकल्पना है बरेली मण्डल में स्नातक स्तर के कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नही है। ऐसा अस्वीकृत किया गया।
3. कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता का वास्तविक अन्तर प्राप्त किया जो कि न्यादर्श त्रुटि के कारण नही है। इस प्रकार विज्ञान वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता के माध्य का मान 8.72 है जो कि कला वर्ग छात्रों के 4.6 कला

और विज्ञान वर्ग छात्रों (पुरूष एवं महिलाओ) के मध्य सामाजिक सफलता माध्य के मान 9.48 से कम है। यह व्याख्या की जा सकती है कि बरेली मण्डल में स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत विज्ञान वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता कला वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता से कम है।

4. सारणी 4.6 यह प्रदर्शित करती है कि कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के शैक्षिक सफलता के लिये T- मूल्य 0.81 है। जो कि सार्थक नही है। सार्थकता का स्तर 0.05 है। इसलिए शून्य परिकल्पना है। कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के शैक्षिक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नही है। ऐसा स्वीकार किया गया। कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के मध्य शैक्षिक सफलता में गणना किया गया अन्तर वास्तविक नही है। यह न्यादर्श में त्रुटि के कारण हो सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि बरेली मण्डल में स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सामाजिक सफलता में कोई सार्थक अन्तर नही है।

5. सारणी 4.6 यह प्रदर्शित करती है कि कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सम्पूर्ण सफलता के लिये T- मूल्य 2.20 है जो कि सार्थक है। सार्थकता का स्तर 0.05 है। इसलिये शून्य परिकल्पना है। कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सम्पूर्ण सफलता में कोई सार्थक अन्तर नही है। ऐसा अस्वीकृत किया गया कला वर्ग और विज्ञान वर्ग छात्रों के सम्पूर्ण सफलता में पाया गया अन्तर वास्तविक है। न्यादर्श त्रुटि के कारण नही है। अतः विज्ञान वर्ग छात्रों का सम्पूर्ण सफलता 21.79 है जो कि कला वर्ग छात्रों के सम्पूर्ण सफलता 23.03 से कम है। इस प्रकार व्याख्या की जा सकती हे कि बरेली मण्डल में स्नातक स्तर के सरकारी व निजी महाविद्यालयों में अध्ययनरत विज्ञान वर्ग के छात्रों का सम्पूर्ण कला वर्ग छात्रों के सम्पूर्ण सफलता से कम है।

संन्दर्भ

1. *पाल. हंसराज शर्मा मंजुलता, प्रतिभाशालियों की शिक्षा, षिपरा पब्लिकेषन,दिल्ली*
2. *भटनागर, ए0बी0, अधिगम कर्त्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया लाल बुक डिपों – मेरठ*
3. *झा, दिलीप कुमार, शोध कार्य, श्री लाल बहादुर संस्कृत विघापीठ विश्वविघालय, दिल्ली*
4. *लाल, रमन बिहारी, भारतीय शिक्षा का इतिहास विकास एवं समस्यायें आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ*
5. *शर्मा. पं0 श्री राम, अपरिमित संभावनाओं का आधार मानवी व्यक्तित्व, प्रकाशक, अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा*
6. *जयसवाल. डा0 सीताराम, सामान्य मनोविज्ञान, आर्य बुक डिपों नई दिल्ली*
7. *कृष्ण मूर्ति जे0, संस्कृति का प्रष्न कश्श्ण्मूति फाउनडेशन इंडिया राजघाट फोर्ट वाराणसी*
8. *कुमार, आनन्द, आत्मविश्वास, राजपाल एण्ड संन्स, दिल्ली*

9. जोषी, धनंजय, नैतिक शिक्षा एवं नागरिक शोध कनिडक पब्लिशर्स, दिल्ली
10. Allport, Vernon & Linndzey 1951 A Study of Values. Boston. Houghton Miffin. U.S.A.
11. Armstrong. W.H. 1956 Study is hardwork. Psychological Abstracts No. 30.
12. Gulford, J.P. 1956 Fundamental Statistics in Psychology and Educaiton. Mc Graw Hill. New York.
13. Gulford, J.P. 1956 The Stucture of Intellect. Psychological Bulletin 53(4)
14. Chester, H.& Marrie, R. 1960 Encyclopedia of Educational Research. The Macmillan co. New York.
15. Mitzel, H.E. 1960 Encyclopedia of Educational research. 5th Ed. Macmillan co. New Delhi.
16. Allport, G.V. 1961 Pattern of Growth in Personality. Holt, Rinehart and Winston.
17. Torrence, E.P. 1962 Education and Creative Potential. Univeristy of Minnesota Press, Minnesota.
18. Torrence, E.P. 1962 Guiding Creative Talent. Prentice Hall, Inc. Eaglewood Clift, New Haerry.
19. Mackinnon, D.W. 1963 Creativity and images of the self in education.
20. Taylor, C.W. & 1963 Scientific Creativity: Ist Recognition and Development. Wiley. New York.
21. Raina M.K. 1963 Sex Difference in Creativity in India, Journal of Creative Behavior Vol. 3, Pages 111-114.
22. Drevadahl, J.E. 1964 Some Developmental and Environmental Factors in Creativity. In Taylor, C.W.(Ed) Widening Horizons in Creativity, Wiley New York.
23. Murphy, G. 1964 An Introduction to Psychology. Oxford Book Co. Calcutta Press.
24. Barron, F. 1965 Creative Person and creative process. Holt, Rinehart And Winston, New York.
25. Dreyer, A.S. & Wells, M.B. 1966 Parental Values, Parental Control and Creativity in Young Children. Journal of Marriage and The family. 28, 83-88.
26. Munro, B.C. & Laycock, S.R. 1966 Educational Psychology. The Cops Clark, Toronto.
27. Gulford, J.P. 1967 Creativity : Yesterday, Today and Tomorrow. Journal of Creative Behavior. Vol.1: 3-13
28. Gulford, J.P. 1967 The nature of Human Intelligence. Mc Graw Hill. New York.
29. Raina M.K. 1968 A study of some correlates of creativity in Indian students. Ph.D. University of Rajasthan.

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवीय-जीवन में मूल्यों की आवश्यकता

उमा गुप्ता
शोधार्थी (शिक्षक शिक्षा)
राजा श्रीदत्त पी.जी. कॉलेज, जौनपुर।

मानवीय मूल्यों की कसौटी बहुजन हिताय से सिद्ध होती है अर्थात् जब व्यक्ति निज से ऊपर उठकर सोचता है और उसका लक्ष्य या उद्देश्य समाज का कल्याण बन जाता है। तब माना जाता है कि मानवीय जीवन में मानवीय मूल्यों का विकास हो रहा है क्योंकि मानव मूल्य, व्यक्ति के सद्गुणों के निर्माण, विकास व उन्नयन के लिए आवश्यक होते हैं। विचार, विश्वास, आस्था व निष्ठा आदि की श्रेष्ठ उपस्थिति से ही मानव मूल्यों का विकास सम्भव है। क्योंकि व्यक्ति के अन्तःकरण द्वारा नियन्त्रित होते व दूसरी ओर संस्कृति और परमपरा द्वारा क्रमशः निस्सृत एवं परिपोषित होते हैं।

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारतीय शिक्षा व मानवीय शिक्षा, मूल्यपरक हुआ करती थी। इसी कारण मूल्यपरक शिक्षा अलग से विषय के रूप में नहीं रखी गई थी लेकिन अंग्रेजों के आगमन के बाद हम भारतीयों की शिक्षा अलग से विषय के रूप में नहीं रह गई और आज वर्तमान में समाज इस संक्रमण—काल से गुजर रहा है। वह कभी पुरातन मूल्यों की ओर झुकता है तो कभी आधुनिकता की भ्रामक चमक—दमग की ओर। ऐसी स्थिति में मानवीय जीवन में मूल्य शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि वह समाज को सही दिशा दे सके।

वर्तमान में मानवीय मूल्यों के उन्नयन हेतु अनेक मूल्य जैसे— सामाजिक, राजनैतिक, वैश्विक, सांस्कृतिक, नैतिक, धार्मिक, पर्यावरणीय, वैज्ञानिक, भौगोलिक आदि जो मानव जीवन को प्रभावित करते हैं। इन समस्त विषयों में मनोवैज्ञानिक ढंग से मूल्य समाहित करके मानवीय—मूल्यों पर बल दिया जाना चाहिए और आधुनिक ढंग से इन्हें स्वीकार किया जाना चाहिये। इसके साथ—साथ आधुनिक समय में मानवीय मूल्यों के विकास हेतु सामाजिक जागरूकता, मूल्यपरक—शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन, निरौपचारिक शिक्षा पर बल, स्त्री—सम्मान, सभी धर्मों के प्रति आदर—भावना, उत्तरदायित्व की भावना, उपयुक्त पाठ्यक्रम व शिक्षण—विधियों का प्रयोग, कथन—करनी में भेद की सम्भावना नगण्य आदि पर विशेष रूप से ध्यान आकर्षण की आवश्यकता है। जिससे आधुनिक समय में मानवीय मूल्यों की आवश्यकता की पूर्ति सही दिशा में सम्भव है।

प्रस्तावना

शिक्षा एक विनियोग है। अतः उससे प्राप्त लाभों का वर्णन अपेक्षित है। किसी कार्य के पूर्ण होने के बाद उससे लाभ को जानने का प्रयास किया जाता, परन्तु शिक्षा में परिमाणात्मक सुधार न होकर गुणात्मक सुधार होता है। उसकी व्याख्या संलग्न करना सरल नहीं क्योंकि शिक्षा के प्रतिफल के लिये एक लम्बे समय का इन्तजार करना पड़ता है। जिससे शिक्षक व प्रशिक्षु की आयु में भी वश्द्धि हो जाती है और आयु वश्द्धि व अनुभव के आधार पर जब व्यक्ति के मन में विचार निर्णयात्मक ढंग से आने लगते हैं तो वे मूल्य होते हैं।

अतः किसी व्यक्ति या वस्तु का वह गुण जिसके कारण वह महत्वपूर्ण, सम्मानीय तथा उपयोगी सिद्ध हो Value या मूल्य होता है। मूल्य हमारी खुशियों, रूचियों, प्राथमिकताओं, पसन्दों, कर्तव्यों, नैतिक–कर्तव्यों, कमी, पूर्ति, विरोध, आकर्षण, आवश्यकताओं आदि समस्त स्वरूप को व्यक्त करता है। मूल्य प्रेरणाओं के विशिष्ट पहलू हैं जो कि मानकीकृत संस्कृति की झलक देते हैं। ये सदैव शाब्दिक एवं प्रेरक व्यवहारों में दृष्टिगोचर होते हैं तथा व्यक्ति को क्या करना चाहिये? क्या नहीं का ज्ञान कराते हैं। मूल्य नियामक मापदण्ड है। जिनके आधार पर व्यक्तियों की चुनाव प्रक्रिया प्रभावित होती है तथा अपने प्रत्यक्षीकरण के अनुरूप विभिन्न क्रियाओं का चुनाव करते हैं। मूल्य शाश्वत होते जो व्यक्ति/वस्तु में अन्तर्निहित होते मूल्य का आधार विश्वास होता है। ये उन सभी वस्तुओं या विचारों से सम्बन्धित हैं जिन्हें हम पसन्द करते, जो पुरस्कृत, प्रशंसनीय, सम्मानीय एवं संतोष प्रदान करने वाले होते जिसमें कोई समय सीमा नहीं हाती ये हमारे जीवन में प्रेरणात्मक पहलुओं का प्रतिनिधित्व करते अतः हम अपने जीवन में उन्हीं वस्तुओं को प्राप्त करने का प्रयास करते जो सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक, राजनैतिक, सौन्दर्यात्मक सैद्धान्तिक मूल्यों से ओत–प्रोत होते हैं। अर्थात् मूल्य हमारी अधिगम प्रक्रियाओं के सहायक तत्व होते हैं। क्योंकि मूल्यों में उद्दीपक चुनाव की क्रिया व्यक्ति के स्वभाव एवं इच्छा से निर्देशित होती है।

अंग्रेजो के आगमन से पूर्व भारतीय शिक्षा

अंग्रेजों के भारत आगमन से पूर्व भारतीय शिक्षा व्यवस्था भारतीय संस्कृतिक मानकों, आदर्शों के अनुरूप तथ मूल्यपरक थी। इसलिये पूर्व भारतीय परिस्थितियों में मूल्यों की शिक्षा देने जैसी संकुचित व्यवस्था का जन्म होने का प्रश्न ही नहीं उठता। किन्तु अंग्रेजों ने अपनी आवश्यकतानुसार शैक्षिक परिवर्तनों से सम्पूर्ण शैक्षिक व्यवस्था को लचर बना दिया था। जिससे भारतीय केवल शारीरिक रूप से ही भारतीय बने रहे जबकि मन मस्तिष्क व व्यवहार में अंग्रेजियत में ढल चुके थे। राष्ट्रवादी नेताओं ने पूर्व के संक्रमण काल में कुछ ऐसी नवीन शिक्षा व्यवस्था की संकल्पना की जो भारतीयों में भारतीयता का संचार कर सके उन्हें अपनी संस्कृति, दर्शन, साहित्य के प्रति प्रेरित तथा उनके मस्तिष्क को आन्दोलित कर सके। कहा जा सकता है कि

इसी क्षण से मूल्यपरक शिक्षा की सर्वप्रथम संकल्पना की गई। 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश के राष्ट्रीय संविधान का निर्माण हुआ जिससे नवीन मूल्यों का अभ्युदय हुआ। मूल्यों की शिक्षा का उच्च शिक्षा के सन्दर्भ में सर्वप्रथम तराशने का कार्य डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् जी ने किया। मूल्यों पर बल देते हुए डा० राधाकृष्णन् जी ने कहा,"सामाजिक दर्शन की रूपरेखा, जिनका नियन्त्रण हमारी सभा संस्थाओं पर होना चाहिए, चाहे वे शैक्षिक या आर्थिक और राजनैतिक हों। इसका संकेत हमारे संविधान की प्रस्तावना में भी उद्धृत किया गया है।

सामाजिक मूल्य

कोई भी समाज मूल्यों की शिक्षा के अभाव में, अपनी सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने में सक्षम नहीं हो सकता। समाज, नियम, कानून, आचार संहिता आदि का निर्माण तो कर सकता परन्तु उनका पालन करना उसके सदस्यों के मूल्यों पर निर्भर करता है। यदि सदस्य समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार नहीं करते तो समाज व्यवस्थायें अर्थहीन हो जाती हैं। इसके लिये आवश्यक है कि समाज में मूल्यों की उपलब्धता हो तथा समाज की सभी संस्थायें इन मूल्यों की स्थापना में अपना सहयोग प्रदान करे। जिसमें विद्यालय व परिवार भी अपनी भूमिका का निर्वाह भलीभाँति कर सके।

विद्यालयी मूल्य

शिक्षा के अभाव में विद्यालय की भूमिका शून्य के बराबर है। क्योंकि मूल्यों की शिक्षा सामाजिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है जो प्रत्येक छात्र के लिए अति आवश्यक है। क्योंकि छात्र का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव है। इनके अभाव में विकास सम्भव ही नहीं बल्कि अपूर्ण रहना स्वाभाविक है।

वर्तमान युवा पीढ़ी को भविष्य में किन–किन समस्याओं का सामना करना पड़ेगा, इसका पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि समाज में परिवर्तन की गति अनुमान से कहीं अधिक तीव्र होती है। इसलिये शिक्षा ऐसी हो जो व्यक्ति को भविष्य के लिये तैयार करे। जिसमें मानवीय मूल्य शिक्षा की अहम भूमिका है। यही शिक्षा व्यक्ति में नैतिक निर्णयों की क्षमता और नैतिक दायित्वों का बोध उत्पन्न कर सकती है। इसी से हमारे विभिन्न आयामों सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस तिक, विश्वास, आदर्श, व्यवहार, नैतिकता, सौन्दर्यबोध, पर्यावरणीय, प्रजातांत्रिक मूल्य सम्भव है।

मानवीय मूल्य

मानवीय मूल्यों की कसौटी समाज के सभी वर्गों के हित से सिद्ध होती है। भारतीय धर्मग्रन्थों में मूल्य के लिये 'शील' शब्द का अनेक स्थानों पर प्रयुक्त हुआ। शील शब्द मूल्य का पर्यायवाची नहीं बल्कि समीपी शब्द है। शील का प्रयोग चरित्र के लिये भी किया जाता है। अतः मूल्य/शील वे गुण हैं जिनका लक्ष्य समाज कल्याण होता है और तब समझा जाता है कि उक्त

व्यक्ति में मानव मूल्यों का विकास हो रहा है। ये मानव मूल्य व्यक्ति के अन्तःकरण द्वारा नियन्त्रित होते हैं।

भारतीय संस्कृति के मूल्य

प्राचीन काल से भारतीय अपनी कला संस्कृति और दर्शन की गौरवशाली परम्पराओं पर गर्व करता है आज हमारी संस्कृति और हमारा दर्शन अज्ञानता और अविश्वास के कारण धूल धूसरित हो गया है।

आधुनिक मूल्य

आधुनिकता की भ्रामक अवधारणा ने हमें अपनी इस गौरवमयी संस्कृति से दूर कर दिया है। जिसके बल पर हम विश्व मंच पर श्रेष्ठ सभ्यता और संस्कृति के प्रणेता माने जाते रहे हैं। आज हमने अपनी चिन्तवशति में स्वयं ग्रहण लगा रखा है। अपने आदर्शों, मूल्यों एवं परम्पराओं का ह्रास किया है और इसके स्थान पर विदेशी चिन्तन प्रणाली को प्रतिष्ठित करके अपने मूल्यों को नष्ट कर रहे हैं। परन्तु यह भी सत्य है कि हमारे मानवीय मूल्य पूर्णतः नष्ट नहीं हुये हैं। बल्कि विघटित हो गये हैं। आज भी मानव–मानव के बीच रागात्मक सम्बन्ध है। भले ही वह वांछित रूप में ना हो। नारी के प्रति सम्मान, चोरी, डकैती व झूठ को गलत मानना आज भी हमारे शिष्टाचार व संस्कृति में विद्यमान है।

अतः इसके लिये 1970 में N.C.E.R.T. ने भी एक संगोष्ठी के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया था कि मानव में मूल्य शिक्षा की आवश्यकता का अनुभव किया गया और उसके उन्नयन के लिये निम्न मूल्यों के विकास पर बल दिया जाना चाहिए–सेवा, सत्यवादिता, अहिंसा, पवित्रता, निर्भरता, क्षम का महत्व, दूसरे धर्मों के प्रति आदर भाव, नैतिकता आदि। 1982 में शिमला में भी परिचर्चा के दौरान इनके अभाव को महसूस किया गया और इसके विकास के लिये कुछ और कदम उठाने का प्रयास किया जैसे–सम्पूर्ण देश में मूल्यपरक शिक्षा का प्रावधान हो, शिक्षा के सभी कार्यक्रमों से समूचे समाज को जोड़ा जाए, अभिभावकों को इन कार्यक्रमों से सम्बद्ध किया जाए, पाठ्यक्रम, शिक्षण–विधियों का विकास व प्रयोग इस प्रकार हो जिससे विद्यार्थियों में वांछित मूल्यों का विकास सहज हो सके, शिक्षकों का पूर्ण सहयोग हो, Social Media के विभिन्न माध्यम जैसे– Facebook, whatsapp, twitter, Instagram etc. का सहयोग हो, Formal के साथ–साथ Non Formal education Centre के माध्यम से पाठशाला का आयोजन हो, Print, Non Print तकनीकी शामिल हों, मनोरंजन कार्यक्रमों की भी भूमिका महत्वपूर्ण हो।

वर्तमान जीवन में मूल्यों की आवश्यकता एवं समाधान

अतः सार में कहें तो वर्तमान परिदृश्य में मानवीय जीवन में मूल्यों की अत्यन्त आवश्यकता है। क्योंकि समाज में लोभ, भ्रष्टाचार, छल, घृणा, ईर्ष्या, अहंकार, विश्वासघात, आतुरता, असत्य,

भाषंण, निर्दयता, निष्ठाहीनता, कर्तव्यहीनता, निर्ममता जैसी प्रवृत्तियों के आगोश में है। ऐसी स्थिति में राष्ट्र के जीवन को सुचारू रूप से संचालित करने के लिये जीवन मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करना होगा और इसके लिये मूल्यपरक शिक्षा को अपनाना ही एकमात्र विकल्प है।

आज मानव और प्रकृति के मध्य बनने वाला तालमेल पूरी तरह से बनावटी एवं अप्राकृतिक है। कृत्रिमता का साम्राज्य है। जहां वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने हमारी सोच बढ़ाई है वहीं उसने आध्यात्मिकता के क्षेत्र में संकीर्ण दृष्टिकोण पेश किया। जिससे जीवन की सहजता खत्म हो गई, बनावटी मखौटों के सहारे हम जिन्दा हैं।आज वास्तविक खतरा इस बात का है कि मानव सभ्यता, मानवीय मूल्य समाप्त ना हो और इन्हें बचाने के लिये पुनः पोषण कर विकसित करने के लिये शिक्षा मूल्योनमुखी बनाई जाये। आज समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जातिवाद, धर्मवाद, क्षेत्रवाद की बेड़ियों से आजाद होना होगा और सामाजिक समरसता के साथ पुनः अपने मूल्यों को विकसित करना होगा।

इसके लिये मनुष्य को कुसंगति से बचना होगा, मूल्यों के प्रति आस्थावान रहना होगा, कष्ट सहने के लिये मानसिक रूप से तेयार रहना होगा, परिवार प्रथम पाठशाला है ध्यान रखना होगा, विद्यालयों, समाजसेवी कार्यक्रमों का आयोजन व सहयोग, रेडियो, टी.वी. आदि के कार्यक्रमों पर विश्लेषण भी करना होगा। तभी मूल्यों का बालक/मानव में विकास होगा और उसका व्यक्तित्व भी विकसित होगा। तभी विश्वपटल पर अपनी पहचान वापस आ सकती है।

शिक्षक एवं व्यवसायिक नैतिकता

डॉ. मनीष पोरवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग,
रॉयल एजूकेशनल इंस्टीट्यूटगाजियाबाद।

शिक्षक के कार्य के महत्त्व देखते हुए उसे ''राष्ट्र का निर्माता'' कहा गया हैं। प्राचीन काल में शिक्षकों में उच्च कोटि की नैतिकता पायी जाती थी जो आज निम्न स्तर की और जा रही हैं। आज शिक्षण एक व्यवसाय हैं अतः आवश्यक हैं कि व्यवसाय की नैतिकता पर ध्यान दिया जाये एवं एवं इसका मूल्यांकन भी किया जाये। शोधपत्र सारांशित करता है कि शिक्षकों के लिए व्यवसायिक नैतिकता क्या हो एवं कौन–से बाधक तत्व है जो उसकी व्यवसायिक नैतिकता को प्रभावित करते है एवं शिक्षक स्वयं उच्च चरित्रवान होते हुए अपने छात्रों के समक्ष कैसे आदर्श प्रस्तुत करें।

प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र की प्रगति उस देश की शिक्षित जनसँख्या पर निर्भर करती हैं। राष्ट्र निर्माण में शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आज शिक्षा एक व्यवसाय हैं, हर व्यवसाय की अपनी आचार संहिता होती हैं व्यवसाय की आचार संहिता उस व्यवसाय की प्रतिबद्धता होती हैं। अध्यापक के पास अपना जीवन दर्शन होता हैं, जो प्रजातांत्रिक मूल्यों पर आधारित हैं अतः आवश्यकता इस बात की हैं कि अध्यापक के लिये आदर्श चरित्र आचार संहिता का निर्माण एवं अनुकरण करते हुए समाज के समक्ष आदर्श प्रस्तुत करें।

शिक्षण व्यवसाय सम्बन्धी आचार संहिता

- **कक्षा अध्यापन सम्बन्धी** कक्षा में नियमित समय पर आना, पाठ की पूर्ण तैयारी एवं कक्षा में पूरा समय शिक्षण कार्य करना, व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखना, ई–अधिगम के माध्यम से छात्रों को ज्ञान प्रदान करना, नियमित गश्ह कार्य की जाँच करना, छात्रों की विविधता का ध्यान रखना।
- **परीक्षा सम्बन्धी** परीक्षा की गोपनीयता कायम रखना, नकल विहीन परीक्षा सम्पन्न कराना, पक्षपात न करना।
- **सामान्य आचार संहिता** किसी नशे का सेवन ना करना, छात्रों से निजी कार्य न कराना।
- **छात्रों से व्यवहार** विद्यार्थियों के साथ प्रेम और स्नेहपूर्ण व्यवहार करना होगा और बिना किसी लिंग, जाति, धर्म, भाषा और जन्म स्थान के भेदभाव से न्यायपूर्ण व्यवहार करना उनकी गोपनीय जानकारियों को अपने तक सीमित रखना।

- **<u>नैतिकता सम्बन्धी</u>** ट्यूशनों से होने वाली अतिरिक्त कमाई को अस्वीकृत करना, छात्रों में देश प्रेम और भाई–चारे की भावना विकसित करना। बोलचाल, वेशभूषा और व्यवहार के सन्दर्भ में आदर्श प्रस्तुत करना।
- **<u>साथियों से व्यवहार</u>** अपने साथ काम करने वाले अध्यापकों का सम्मान करना, छात्रों के सम्मुख साथी की निन्दा न करना।
- **<u>अभिभावकों से व्यवहार</u>** अभिभावकों के साथ सहयोगी एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध, अभिभावकों को उनके बच्चो के गुण–दोषों से अवगत कराना, स्कूल सुधार कार्यक्रम में अभिभावकों को भागीदार बनाना।
- **<u>प्रकाशको से व्यवहार</u>** छात्रों को निजी पुस्तक खरीदने के लिए बाध्य न करें, प्रकाशको से केवल व्यवहारिक सम्बन्ध रखे।
- **<u>व्यवसायिक अभिवृद्धि</u>** सन्दर्भ पुस्तको का अध्ययन, गोष्ठियों एवं कार्यशालाओं में भाग, SWYAM से जुड़े।

शिक्षा के व्यवसायिक नैतिकता के मार्ग में बाधायें

- **<u>भ्रष्टाचार</u>** भ्रष्टाचार आज शिक्षा की मुख्य समस्या है जब सार्वजनिक लाभ के स्थान पर व्यक्तिगत लाभ लिया जाता है तो भ्रष्टाचार बढ़ता है, छात्रों से अतिरिक्त शुल्क लिया जाना, छात्रों की उपस्थित न होने पर भी उपस्थित दिखाना, शिक्षको की सैलरी पूरी न दी जानी, प्रैक्टिकल कार्यो का मूल्यांकन ईमानदारी से ना किया जाना।
- **<u>प्राइवेट शैक्षिक संस्थाओ में वृद्धि</u>** सरकार द्वारा प्राइवेट कॉलेजों को सम्बद्धता प्रदान करना जहां ग्राहक एवं दुकानदार संस्कृति पनप रही है नो प्राफिट नो लॉस केवल कागजो में है वास्तविकता में अध्यापको का न्यूनतम वेतनमान नहीं, मानक के अनुसार पर्याप्त शिक्षक नहीं, अधिकतम लाभ के लिए कोर्स की अतिरिक्त यूनिट लेना आदि।
- **<u>राजनीतिक हस्तक्षेप</u>** राजनैतिक पार्टियां अपने लाभ के लिए शिक्षकों को पार्टी की सदस्यता दिलाती है एवं अपनी पार्टी के एजेंडे को अध्यापको से पूरा करती है जिससे अध्यापको की निष्ठा अपने पेशे के स्थान पर राजनैतिक पार्टियों के प्रति होती है और ऐसे अध्यापक उच्च पदों एवं अपनी मनचाही जगह पर नियुक्ति लेते है।
- **अनुचित मूल्यांकन** अधिकतर विश्वविद्यालयो में परीक्षाओ में विस्तृत उत्तरीय प्रश्न पूछे जाते है जिनका मूल्यांकन अध्यापक की व्यक्तिनिष्ठता पर निर्भर होता है वस्तुनिष्टता का ध्यान आज मूल्यांकन में नही दिया जा रहा, अध्यापको को एक दिन में लगभग 100 उत्तर पुस्तिकाओ की जाँच करनी होती है इससे भी मूल्यांकन उचित नहीं हो पाता।

- **कक्षा में अनुपस्थिति** अध्यापक कक्षा में समय से उपस्थित नही होते जबकि अध्यापक छात्रों के लिए रोल मॉडल की तरह होते है अध्यापक छात्रों में समझ कौशल, कोर वैल्यूज, अभिवशक्ति आदि विकसित करते है अध्यापको के अनुपस्थित रहने के कारण छात्रों में उपरोक्त विशेषताओ का विकास उचित रूप से नही हो पाता।

उपसंहार

आज के समय में यह आवश्यक हो गया है कि अध्यापक के लिए आचार संहिता का पालन करना आवश्यक हो जिससे शिक्षण प्रक्रिया को संवेदनशील बनाया जा सके हालाकि हमे अध्यापको की समस्या का भी ध्यान रखना आवश्यक है इलाहाबाद हाई कोर्ट ने भी स्ववित्तपोषित कर्मचारियों की सेवा नियमावली बनाने में देरी पर नाराजगी जताई है अध्यापको की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए व्यावसायिक नैतिकता का पालन करना आवश्यक हो।

मानवीय मूल्यों पर वातावरण का प्रभाव

लेफ्टिनेंट (डॉ.) प्रवेश कुमार[1], डॉ. सुनीति लता[2]
[1]सहायक प्रोफेसर, शिक्षक–शिक्षा विभाग,
राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर
[2]प्रवक्ता – शिक्षा शास्त्र
बलदेव आर्य कन्या इंटर कॉलेज़,मुरादाबाद

मूल्य कोई जन्मजात प्रवृत्ति या विलक्षणता नहीं है व्यक्ति के जीवन में इसका विकास समाजीकरण की प्रक्रिया के साथ–साथ होता है एक कट्टर ब्राह्मण परिवार में पलने वाले बालक में हरिजनों के प्रति छुआछूत संबंधी मूल्य पनप जाता है जबकि एक प्रगतिशील परिवार के बालक में अंतरजातीय विवाह में से संबंधित मूल्यों का विकास होता है मूल्य सामाजिक जीवन का एक आवश्यक अंग है क्योंकि व्यक्ति अपने समाज को प्यार करता है इस कारण वह अपने समाज में प्रचलित मूल्यों को अपना मान लेता है और उन्हें धीरे–धीरे अपने जीवन में ढालता है व्यक्ति मूल्यों का अर्जन समाज के उन लोगों या घटनाओं से करता है जिनको वह अपना समझता हैं क्योंकि ऐसा करने से वह अन्य लोगों के समान हो जाता है और उसका अनुकूलन समाज के साथ हो जाता है इस अर्थ में व्यक्ति सामाजिक अन्य क्रियाओं के दौरान अनुकरण और इसी भांति की अन्य प्रक्रियाओं और सामाजिक मूल्यों को अर्जित करता है इसलिए मानवीय मूल्यों अर्थात व्यक्तियों पर व्यक्तिगत रूप से समाज तथा समाज में व्याप्त वातावरण का सीधा सीधा प्रभाव व्यक्ति अथवा बालक पर पड़ता है जैसे लैमार्क एवं डार्विन के द्वारा जीव विज्ञान के अंतर्गत जैव विकास में कहा गया है कि वातावरण का जंतुओं पर तथा पेड़ पौधों पर सीधा सीधा प्रभाव पड़ता है जैसे अंगों का उपयोग तथा अनुउपयोग वस्तुतः लैमार्क ने जिराफ का उदाहरण देते हुए कहां कि जिराफ की गर्दन का लंबा होना इस बात का घोतक है कि जिराफ को जब जमीन पर खाने के लिए भोजन ना मिले हो तब उसने पत्तियों को खाया और जैसे जैसे पेड़ की पत्तियां नीचे समाप्त होती गई वैसे वैसे अपनी गर्दन को ऊपर उठा कर अपना भोजन करता रहा, इसलिए जिराफ की गर्दन लंबी होती गई, उसी प्रकार समाज में बालक का सामाजिकारण होता है समाज में व्याप्त सकारात्मक अथवा नकारात्मक मूल्यों का प्रभाव उसके मन,दिमाग उसकी वृद्धि में पड़ता है इसलिए आज वर्तमान परिपेक्षय में मानवीय मूल्यों पर वातावरण का सीधा–सीधा प्रभाव पड़ता है जिसका विवरण आगे स्पष्ट किया गया है। मानवीय मूल्यों में सामाजिक मूल्य हो, सांस्कृतिक मूल्यों हो, नैतिकता का मूल्य हो, मानव के सम्मान की भावना हो, सदाचार की बात हो, शांति और प्रेम की बात हो, सत्य और अहिंसा की बात हो। यह सभी बालक के परिवार, आस–पड़ोस समाज, विद्यालय तथा अच्छी पुस्तकों के पढ़ने पर ही बालक के व्यक्तित्व उनके मस्तिष्क में विकसित होता है।

जीवन के मूल्यों में पर्यावरणीय मुद्दों के प्रभाव

मानव जीवन अथवा जीवन मूल्यों पर पर्यावरणीय मुद्दों के प्रभाव को जानने के लिये सर्वप्रथम आवश्यक है कि हम यह भी जानें कि हमारे जीवन के मूल्य क्या हैं तथा वर्तमान समय में पर्यावरणीय मुद्दे क्या हैं तत्पश्चात् उनके पारस्परिक सम्बन्धों के अन्तर्गत प्रभाव का अध्ययन किया जाना सर्वथा उचित होगा।जीवन मूल्य– मानव मूल्य या जीवन मूल्य वास्तव में एक ऐसी आचार संहिता है, जिसे अपने संस्कारों तथा सामाजिक पर्यावरण के माध्यम से अपना कर मनुष्य अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपनी जीवन शैली का निर्धारण करता है, अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। ये जीवन मूल्य न केवल व्यक्ति के अन्तःकरण द्वारा नियंत्रित होते हैं अपितु उसकी संस्कृति एवं परम्परा द्वारा क्रमशः विस्तृत एवं परिपोषित होते हैं। कुछ प्रमुख जीवन मूल्यों का वर्गीकरण निम्नवत् है–

1. शैक्षिक मूल्य–

शिक्षा में नियमितता व निष्ठा मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठता एवं निष्पक्षता स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना व्यवसाय के प्रति निष्ठा छात्रों की सृजनात्मकता का पोषण मौलिकता के प्रति सद्भमाव होता हैं। शैक्षिक मूल्य – ऐसी क्रियाएँ जो शिक्षा क्षेत्र में उपयोगी होती हैं, उनका निश्चित रूप से कुछ मूल्य अवश्य होता है। उदाहरण के लिए पाठ्यक्रम का चयन, शिक्षण विधि का प्रयोग, अनुशासन पालन के नियम आदि क्रियाएँ उपयोगी साबित होती हैं। शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों मिलकर वस्तुतः उपयोगिता की दृष्टि से सृजन कार्यों को करते हैं। वे ही शैक्षिक मूल्य कहलाते हैं।

बूब्रेकर महोदय के शब्दों में– "शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारित करना शैक्षिक मूल्यों को निर्धारित करना है। "मूल्यों की प्राप्ति हेतु विद्यालयों का विषय संबंधी व्यापक, व्यावहारिक, उपयोगी, वृद्धिवर्धक, उत्सुकता बढ़ाने वाला एवं व्यक्तिगत निर्माण में सहायक ज्ञान उचित रूप से प्रयोग करना चाहिए।'' विषयों की सार्थकता आधुनिक काल में तभी मानी जाती है जबकि वे व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित कियेजाएँ। इसके अतिरिक्त ज्ञान को बढ़ाने हेतु पुस्तकालय, रेडियो, टेलीविजन, सेमिनार, वर्कशाप इत्यादि का भी सहारा लिया जाना चाहिए। शिक्षण पद्धति में वाद–विवाद, विचार–विनिमय, लोगों के भाषण, उत्सव एवं अभिनय के माध्यम से क्रियाशीलता लानी चाहिए। इन सबसे बौद्धिक विकास अच्छा एवं सर्वतोमुखी होती है। ऐसे कार्यों हेतु विषयों की परिषदें तथा सभाएँ भी स्थापित की जानी चाहिए। शिक्षक एवं विद्यार्थी, विद्यार्थी–विद्यार्थी पारस्परिक सहयोग, सहकारिता, प्रेम स्नेह, आज्ञा पालन, नम्रता सौहार्द्र आदि भाव जैसे मूल्य विकसित होते हैं। यह सब विद्यालय के वातावरण पर निर्भर करता है। इसलिए शैक्षिक मूल्यों को प्राप्त करने के लिए अच्छे अध्यापक अच्छा समाज विद्यालय का वातावरण तथा वहां का प्रबंधन अच्छा होना अनिवार्य है यदि यह सब कुछ अच्छा होगा तब अच्छे मूल्य बालक प्राप्त कर

पाएगा यदि विद्यालय का यह परिवेश अथवा वातावरण सही नहीं होगा तो बालक के व्यक्तित्व पर व्मानवीय मूल्य विकसित अथवा प्रभाव ठीक नहीं पड़ेगा।

2. नैतिक मूल्य

ईमानदारी, त्याग, निष्ठा, करुणा, दया, नम्रता तथा उत्तरदायित्व की भावना सच्चाई को स्वतः साध्य मूल्य कहा जाता है यह अपने आप में ही मूल्यपूर्ण है ।इसका प्रयोग साधन की भांति नहीं किया जाता, बल्कि यह स्वतः साध्य है। सभी विवादों में भी सत्य के अन्वेषण का प्रयास किया जाता है। सभी नैतिक मूल्यों का नैतिक आधार सत्य ही है। यद्यपि सत्य एक व्यापक दार्शनिक अवधारणा है लेकिन संक्षेप में इसे वस्तुस्थिति को ज्यों का त्यों कहना कहा जाता है। अर्थात् बिना किसी पूर्वाग्रह के किसी वस्तुस्थिति को देखना, समझना और व्यक्त करने को ही सच्चाई कहते हैं। मनुष्य में दयालुता नामक सदगुण भी विद्यमान होता है। मनुष्य में अन्यों के प्रति दयालुता का भाव होता है। प्रायः वे अन्यों को कठिनाई में देखते हुए उनकी सहायता का प्रयास करते हैं क्योंकि मनुष्य यह स्वीकार करता है कि इस प्रकार की समस्याएं व घटनाएं किसी के साथ भी हो सकती है इसलिए मनुष्य दयालुता के बोध के कारण ही एक दूसरे की सहायता का प्रयास करते हैं। प्रेम को सर्वोपरि मानव कहा गया है। मनुष्य प्रायः एक दूसरे से प्रेम करते हैं। प्रेम न केवल मानव जाति में विद्यमान होता है बल्कि मनुष्य में अन्य जीवों के प्रति भी प्रेमभाव विद्यमान होता है। क्रिश्चियन धर्म प्रेम पर अत्यधिक जोर देता है। उसका तर्क है कि सभी मनुष्य एक ही ईश्वर की संतान हैं, इसलिए उनमें परस्पर प्रेम होना चाहिए। वास्तव में मानव प्रेम ही ईश्वर की सच्ची प्रार्थना है। क्रिश्चयसन धर्म, प्रेम और मानव सेवा पर सर्वाधिक जोर देता है ।प्राचीन भारत में "वसुधैव कुटुम्बकम'' की अवधारणा पाई जाती है जिसका अभिप्राय है कि पूरी धरती ही एक परिवार है और यहाँ सभी को एक दूसरे के साथ परस्पर प्रेमपर्वक रहना चाहिए। भारतीय संस्कृति की यह अवधारणा उसके सारतत्व 'सह अस्तित्व' पर आधारित है। इसे वर्तमान वैश्वीकरण से भी जोड़कर देखा जा सकता है जहाँ पूरा विश्व एक गाँव में परिणित हो गया है। यह सभी ऐसी बातें हैं जो बालक को समाज के अंतर्गत प्राप्त होती है यदि समाज का वातावरण है अच्छा होगा, सकारात्मक होगा, बालक पर उसके सामाजिकरण में सकारात्मकता आएगी। अच्छे मूल्यों का विकास होगा। अच्छी बातों का विकास होगा। इससे यह प्रतीत होता है कि मानवीय मूल्यों पर वातावरण का सीधा सीधा प्रभाव पड़ता है। बच्चा या बालक जन्मजात सच्चाई लेकर नहीं आता, बुराई लेकर नहीं आता, अहिंसा लेकर नहीं आता। यह सभी उसके विकास के अंतर्गत समाज में दिए गए गुण एवं अवगुण से ही मूल्यों का विकास होता है।

3. सामाजिक राजनैतिक मूल्य

सामाजिक दायित्व, आदर्श नागरिकता, लोकतन्त्र के प्रति निष्ठा, मानवतावाद, सामाजिक संवेदनशीलता, राष्ट्रीय एकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना, वसुधैव कुटुम्बकम की भावना का

विकास में लोगों की मानसिकता जैसे पतन की ओर जा रही है.लगता है पूरा समाज एक दिखावे पर जी रहा है। क्यों आज कोई अपनी स्वतंत्र राजनीतिक राय नहीं रख सकता। क्यों आज मैं बीजेपी के किसी काम की तारीफ करूँ तो मैं "भक्त" बन जाता हूँ या आम आदमी पार्टी की सराहना करूँगा तो "आपिरया" हो जाऊंगा. ऊपर से कुछ राजनैतिक पार्टियों के समर्थक अन्य पार्टियों के लिए जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं वह बहुत ही निचले स्तर और व्यक्तिगत होते है और तो और ये सदी के महानायकों को भी नहीं छोड़ते जिन्होंने इस देश की आजादी में बड़ा योगदान दिया था.गाँधी जी, नेहरू जी के बारे में इतनी ओछी भाषा का प्रयोग करते हैं जितना कोई दुश्मन के लिए भी नहीं करता.हर राजनीतिक पार्टी की अपनी विचारधारा होती है और उनमे मतभेद होना भी स्वभाविक है पर ये कौन सा तरीका हुआ। सब अपनी ही जड़ें खोदने में लगे हैं।

इस समय पूरी दुनिया एक ग्लोबल विलेज बनी हुई है आप किसी भी कोने से कुछ भी देख और जान सकते हैं ऐसे में हमे ये देखना है की हम दुनिय को अपने देश के बारे में क्या सन्देश दे रहे हैं। इस सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति में समाज बिखर सा गया है और जाति, धर्म, क्षेत्रवाद, व्यक्तिवाद आदि में बंट गया है कोई भी व्यक्ति समाज के विकास की बात नहीं करता। देश के विकास की बात नहीं करता। समाज को आज किस बात की जरूरत है इसकी बात नहीं करता है। लोग अपनी कुर्सी बचाने के लिए देश को बेच रहे हैं इससे यह प्रतीत होता है कि यह समाज में और राजनीति में जो व्यक्ति हैं उनका इस प्रकार की सोच का प्रभाव भविष्य के युवा पर सीधा–सीधा पड़ रहा है अर्थात राजनीतिक एवं सामाजिक वातावरण अच्छा नहीं है। सब पैसे की लूट मचा रहे है पता नहीं कहां लेकर जाएंगे इस सब को समाप्त करना होगा और फिर से मूल्यों को विकसित करना होगा।

4. वैश्विक मूल्य

स्वतन्त्रता, न्याय, अवसर की समानता, दासता, उन्मूलन, सम्प्रभुता का सम्मान इन सब में देखा जाए तब 1990 के दशक के मध्य से वैश्विक मूल्य श्रृंखला की अवधारणा का पहला संदर्भ। प्रारंभिक संदर्भ विकासशील देशों के लिए उन्नयन की संभावनाओं के बारे में उत्साहित थे जो उनसे जुड़ गए थे। पूर्वी एशियाई परिधान फर्मों पर शोध पर आधारित अपने शुरुआती काम में , गैरी गेरेफी , मूल्य श्रृंखला विश्लेषण में अग्रणी, जीवीसी में भाग लेने वाली फर्मों के लिए लगभग 'प्राकृतिक' सीखने और उन्नयन की प्रक्रिया का वर्णन करते हैं। इसने पूर्व एशियाई ' टाइगर्स ' की सफलता पर आधारित ' ईस्ट एशियन मिरेकल ' रिपोर्ट में विश्व बैंक के 'निर्यात के नेतृत्व वाले' प्रवचन को प्रतिध्वनित किया ।अर्थशास्त्र में, GVC पहले 2001 में Hummels, इशी और यी द्वारा एक समाचार पत्र में औपचारिक रूप दिया गया। उन्होंने GVC को आउटपुट के उत्पादन के लिए प्रयुक्त आयातित मध्यवर्ती इनपुट के विदेशी घटक के रूप में परिभाषित किया, और आउटपुट का कुछ अंश बाद में निर्यात किया जाता है। इस तरह के ढांचे के लिए

अनुमति देते हुए, केई–मु यी ने 2003 के एक पेपर में दिखाया कि विश्व व्यापार के विकास को व्यापार लागत में मामूली बदलाव के साथ समझाया जा सकता है और इस घटना को ''ऊर्ध्वाधर विशेषज्ञता'' नाम दिया गया है । इसने विश्व बैंक और अन्य प्रमुख संस्थानों को नई तकनीक के हस्तांतरण के माध्यम से स्थानीय फर्मों की मदद करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले प्रमुख बहुराष्ट्रीय उद्यमों (एमएनई) के साथ वैश्विक मानकों को पूरा करने के लिए तकनीकी क्षमताओं को उन्नत करने की प्रक्रिया के माध्यम से अपनी स्वदेशी क्षमताओं को विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए प्रोत्साहित किया । इन सब से यह प्रतीत होता है कि वर्तमान परिपेक्ष में व्यक्ति अवसरवादी हो गया है और जब यह स्थिति उत्पन्न होती है तब संसार का प्रत्येक बालक अवसरवादी होता है और एक होड लगती है कि मैं इससे पीछे ना रह जाऊं , इसलिए इन सभी बातों का असर समाज में नीचे से ऊपर तक के वालकों पर पड़ता है किसी की कोई संपत्ति हड़प्पना यह मूल्य नहीं है उसकी मानवीय पहचान नहीं है।

5. वैज्ञानिक मूल्य

वस्तुनिष्ठता, सृजनात्मक सोच, तथ्यपरकतां, तर्कयुक्तता, ज्ञान के प्रति उत्सुकता – प्राकृतिक विज्ञान के अलावा अन्य क्षेत्रों जैसे सामाजिक और नैतिक मामलों में वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग करना। वैज्ञानिक दृष्टिकोण हासिल करना मानव व्यवहार में परिवर्तन लाता है और इसलिए यह प्राकृतिक विज्ञान का हिस्सा नहीं है। यह प्राकृतिक विज्ञान का अध्ययन करने से नहीं बल्कि वैज्ञानिक तरीकों को मानव व्यवहार में अमल करने से मजबूत होता है। सभी छात्रों (वैज्ञानिकों सहित) में वैज्ञानिक दृष्टिकोण मजबूत करने के लिए उनके पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान और मानविकी को शामिल करने की आवश्यकता है। मैं अक्सर सोचता हूं कि भारत में वैज्ञानिक सामान्य मुद्दों पर बात करने या लिखने, खासकर मीडिया या अखबारों में लिखने–बोलने को लेकर क्यों अनिच्छुक रहते हैं। इसलिए 9 अगस्त 2017 को आयोजित 'विज्ञान के लिए मार्च' पर विभिन्न विद्वानों के बीच चली बहस में की गई आलोचनात्मक टिप्पणियों को देखकर मुझे बहुत खुशी हुई। मैं सोच रहा था कि क्या मुझे इस बहस में हस्तक्षेप करना चाहिए किंतु मैं लिखने के प्रति अनिच्छुक था। बहस में विज्ञान के प्रति संदेह व्यक्त किया गया। फिर संदेह और पूर्वाग्रह की विस्तृत आलोचना की गई। दावा किया गया कि समाज शास्त्र भी एक विज्ञान है और कुछ समाज शास्त्री भी वैज्ञानिकों के साथ मार्च में शामिल थे। यह भी कहा गया कि सामाजिक वैज्ञानिकों को वैज्ञानिक पद्धति का पालन करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन फिर भी वे वैज्ञानिक होने का दावा कर सकते हैं। इस बहस में आखिरी दावे को छोड़कर सभी को ध्वस्त कर दिया गया था। मैं सोच रहा था कि क्या अभी भी इसके बारे में टिप्पणी करने के लिए कुछ बचा था? मुझे समझ में आने लगा कि वैज्ञानिक क्यों नहीं लिखते हैं। कलम हाथ में लेने से पूर्व ही विपक्षियों ने एक–दूसरे को ध्वस्त कर दिया था।

आखिरकार मैंने सोचा कि मैं भी लिखूंगा, शायद अधिक समावेशी तरीके से, क्योंकि मेरे विचार में वैज्ञानिक दृष्टिकोण युवा मन की शिक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण एक मनोवैज्ञानिक रवैया है जो रोजमर्रा का विज्ञान करते रहने से प्रभावित नहीं होता बल्कि इसके लिए अपने मूल्यों और नैतिकता के ढांचे में बदलाव की जरूरत होती है। इसलिए यदि वर्तमान समय में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न होगा तब युवा के अंतर्गत वैज्ञानिक मूल्यों का भी विकास हुआ और इससे देश का विकास ही नहीं परंतु नए नए आयाम उत्पन्न होंगे।

6. सांस्कृतिक मूल्य

सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण रखना, प्राचीन संस्कृति के प्रति सम्मान तथा संस्कृति का हस्तांतरण है।जो विश्वासों, भाषाओं, रीति–रिवाजों, परंपराओं और रिश्तों के एक समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं जो समाज या लोगों के समूह की पहिचान करते हैं ।किसी समाज, समुदाय या जातीय समूह की सांस्कृतिक विरासत को सांस्कृतिक मूल्यों में संकलित किया जाता है, इसलिए, वे प्रत्येक सामाजिक समूह में भिन्न और अनन्य हैं।इसी तरह, सांस्कृतिक मूल्य लोगों की सांस्कृतिक पहचान, उनकी आदतों, दृष्टिकोण और सामाजिक विशेषताओं को स्थापित करना संभव बनाते हैं। इस कारण से, सांस्कृतिक मूल्यों को विभिन्न समुदायों के बीच विभेदित किया जा सकता है, भले ही साझा मानवीय और सामाजिक मूल्यों की एक श्रृंखला हो। ऐसे विषयों में, सांस्कृतिक मूल्यों को बनाने वाली सामग्री और सारहीन वस्तुओं का महत्व प्रबल होता है। उदाहरण के लिए, एक राष्ट्रीय प्रतीक का सम्मान करना, इतिहास में एक शानदार व्यक्ति के लिए प्रशंसा दिखाना, राष्ट्रीय उद्यानों की देखभाल करना, अन्य लोगों के बीच स्वदेशी जातीय समूहों का सम्मान करना। सांस्कृतिक मूल्य लोगों को एक सामाजिक समूह के साथ पहचान करने की अनुमति देते हैं, अपने जीवन भर उन्हें सिखाए गए रीति–रिवाजों में निहित और जड़ों की भावना उत्पन्न करते हैं।मान और संस्कृति ,.यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि मूल्य वे गुण, विशेषताएं और सिद्धांत हैं जिन्हें लोगों द्वारा व्यवहार में लाना और उनके होने के सर्वोत्तम तरीके का प्रदर्शन करना सकारात्मक माना जाता है।दूसरी ओर, संस्कृति का अर्थ उन सभी ज्ञान, विश्वासों, परंपराओं, जठरांत्रियों, कलात्मक, साहित्यिक अभिव्यक्तियों और आदतों को शामिल करता है जो ऐसे लोगों के समूह की पहचान करते हैं जो किसी क्षेत्र या देश से संबंधित हैं। दोनों अर्थों को एक करने से सांस्कृतिक मूल्यों को प्राप्त होता है, जो उस व्यापक भावना को उजागर करता है जो व्यक्ति अपने रीति–रिवाजों, गुणों और जीवन के तरीके के प्रति महसूस करते हैं। सांस्कृतिक मूल्य उन जड़ों को बढ़ावा देते हैं जो व्यक्तियों को उनके रीति–रिवाजों और परंपराओं के लिए हैं। वे एक विरासत का हिस्सा हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को समय के साथ पारित किया जाता है। सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के आधार पर सांस्कृतिक मूल्य अर्थ या महत्व में बदल सकते हैं। इसलिए, वे समय के साथ अमूर्त और परिवर्तनशील हैं।

परंपराऐं

परंपराएं सांस्कृतिक मूल्यों का एक मूलभूत हिस्सा हैं, इसलिए, उनकी विरासत में मिली प्रथाओं को बनाए रखना प्रत्येक व्यक्ति की अपनी उत्पत्ति के लिए मूल्य और सम्मान का एक उदाहरण है।

धर्म

आध्यात्मिकता और अनुष्ठान या विश्वास प्रथाओं की अभिव्यक्ति की एक विस्तृत विविधता है जो दुनिया भर में विस्तारित हुई है, और जो एक विशेष सामाजिक समूह वाले लोगों की पहचान करती है। हमारे आसपास के लोगों द्वारा प्रचलित धर्म का सम्मान किया जाना चाहिए।

न्याय

कंपनियों के पास नियमों और विनियमों की एक श्रृंखला होनी चाहिए जो उन कृत्यों को स्थापित करती हैं जिन्हें नैतिक माना जाता है और जो नहीं हैं उनके सामने सही है। कानून के समक्ष सभी नागरिकों के समान अधिकार और कर्तव्य हैं। न्याय एक मूल्य है जो सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने और बढ़ावा देने की आवश्यकता पर प्रतिक्रिया करता है।

अनगिनत शोधों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भौतिक पर्यावरण मानव के विचारों, चिन्तन, विचारधाराओं तथा संस्कृति एवं व्यवहारों को प्रभावित करता है। उदाहरणस्वरूप बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में मनुष्य में यह धारणा होती है कि नदियाँ सदा विनाश की स्रोत होती हैं। ठीक इसके विपरीत जल संकट क्षेत्रों में नदियाँ जीवनदायिनी समझी जाती हैं।औद्योगिक क्रान्ति के बाद मानव व पर्यावरण सम्बन्ध में गुणात्मक परिवर्तन हुआ है। पर्यावरण दोहन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है। प्राकृतिक पर्यावरण की अंतःनिर्मित स्वयं नियामक प्रक्रिया जोकि पर्यावरण की बाहरी परिवर्तनों को आत्मसात् करने की क्षमता होती हैं, काफी दुर्बल हो गयी है। इस काल में पर्यावरण विदोहन के कारणों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि, नगरीकरण, औद्योगीकरण, तकनीकी विकास, भौतिकवाद आदि प्रमुख हैं। पर्यावरण अवनयन के दुष्परिणामों में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, भूमण्डलीय ताप में वृद्धि, चरम घटनाएँ, प्राकृतिक प्रकोप तथा विनाश जैसे भूकम्प, बाढ़ तथा सूखा, चक्रवात आदि उल्लेखनीय हैं। मनुष्य अब पर्यावरण अवनयन का मूल्य चुका रहा है।मानवीय मूल्यों को विकसित करने में शिक्षा की विशेष भूमिका होती है। इससे यह पता चलता है कि मानवीय मूल्यों पर वातावरण का सीधा प्रभाव पड़ता है यदि बालकों का सामाजिकरण उचित वातावरण में कराया जाता है तो उनके मानवीय मूल्यों में सकारात्मक वृद्धि होगी उनके अंतर्गत व्यवहारिक पक्ष अग्रसर होंगे तथा अपने आप में वह मजबूत तथा बड़ों का सम्मान कर पाएंगे

संदर्भ

1. क्रो एंड क्रो– सेकेंडरी एजुकेशन अमेरिकन बुक कंपनी नियर 1961 ।
2. फ्री ट्रायल अल्बर्ट के –एक्स्ट्रा करिकुलर एक्टिविटीज इन सेकेंडरी स्कूल्स हिंदुस्तान नफीस कंपनी 1931।
3. स्मिथ डब्ल्यू. आर.– कंस्ट्रक्टिव स्कूल डिसिप्लिन।
4. सक्सेना, एन.आर. स्वरूप –शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत आर लाल बुक डिपो मेरठ 2004।
5. सारस्वत एम. एवं गौतम एस. एल.– 'भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामाजिक समस्याएं' आलोक प्रकाशन लखनऊ इलाहाबाद।
6. गुप्ता, वाई. के. एंड अनय– वैल्यू ऐडेड एजुकेशन नीड ऑफ द हावर, शिक्षा प्रकाशन जयपुर।
7. नेशनल पॉलिसी आफ एजुकेशन 1986– मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट गवर्नमेंट ऑफ इंडिया डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन, न्यू दिल्ली।
8. प्लान ऑफ एक्शन एन.पी 1986 –मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट गवर्नमेंट ऑफ इंडिया डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन ।
9. कार्य योजना 1992– मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट गवर्नमेंट ऑफ इंडिया डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन।
10. नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 20–20– मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट गवर्नमेंट ऑफ इंडिया डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन न्यू दिल्ली।
11. शर्मा, श्री राम –भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व, मथुरा अखंड ज्योति संस्थान ।
12. लाल, आर.बिहारी 2002– शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ ।
13. असगर, अलीय कलीम, रुखसाना (2019–12–30)। ''वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं की आर्थिक स्थिरता में संस्थानों की भूमिकाः पाकिस्तानी परिधान उद्योग का एक अनुवांशिक घटना विश्लेषण'' । एप्लाइड इकोन मिक्स और बिजनेस स्टडीज के जर्नल । 3 (1): 1–14। डीओआई : 10.34260/tSCl.311 । आईएसएसएन 2523–2614 ।
14. पासी, बी.के एवं पी. सिंह 2000 – वैल्यू एजुकेशन, आगरा। साइकोलॉजिकल कारपोरेशन
15. ' ''अवधारणा और उपकरण – वैश्विक मूल्य श्रृंखला'' ।Globalvaluechains.org । 19 अप्रैल 2018 को लिया गया ।
16. वांग, जे., मूल्य श्रृंखला और आपूर्ति श्रृंखला की तुलना, क्यू स्टॉक इन्वेंटरी, 19 नवंबर 2020 को एक्सेस किया गया।
17. गेरेफी, जी., (1994)। क्रेता संचालित वैश्विक कमोडिटी श्रृंखलाओं का संगठनः कैसे अमेरिकी खुदरा विक्रेता विदेशी उत्पादन नेटवर्क को आकार देते हैं। इन जी. गेरेफी, और एम. कोरजेनिविक्ज (एड्स), कमोडिटी चेन्स एंड ग्लोबल कैपिटलिज्म। वेस्टपोर्ट, सीटीः प्रेगर।
18. आंद्रे ओ। लैपलूमय बेंट पीटरसनय जोशुआ एम। पियर्स (2016)। ''3 डी प्रिंटिंग के नजरिए से वैश्विक मूल्य श्रृंखला'' । इंटरनेशनल बिजनेस स्टडीज जर्नल ।

19. इनोमाटा, एस। (2017)। ''अध्याय 1ः वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं के लिए विश्लेषणात्मक ढांचेः एक सिंहावलोकन (वैश्विक मूल्य श्रृंखला प्रतिमानः नया—नया—नया व्यापार सिद्धांत?)'' (पीडीएफ) ।वैश्विक मूल्य श्रृंखला विकास रिपोर्ट 2017ः आर्थिक विकास पर जीवीसी के प्रभाव को मापना और उसका विश्लेषण करना ।पी 15. आईएसबीएन 978—92—870—4125—8.

20. एस्कैथ, एच.य मिरोडोट, एस। (2016) ।वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं (पीडीएफ) में उद्योग—स्तर की प्रतिस्पध्ार्त्मकता और अक्षमता फैलती है ।24वां अंतर्राष्ट्रीय इनपुट—आउटपुट सम्मेलन 4—8 जुलाई 2016, सियोल, कोरिया।

21. गैरी गेरेफी (2018)।वैश्विक मूल्य श्रृंखला और विकास ।कैम्ब्रिज और न्यूयॉर्कः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

22. स्टर्जन और कावाकामी

23. हर्टेस्टीन, पीटर (2019)।बहुराष्ट्रीय कंपनियां, वैश्विक मूल्य श्रृंखलाएं और शासनः अंतर—फर्म संबंधों में शक्ति के यांत्रिकी।एबिंगडन और न्यूय कर्ःरूटलेज। .

24. जेनिफर बेयर (2009) ग्लोबल कमोडिटी चेन्सः वंशावली और समीक्षा। जे. बैर (एड.) फ्रंटियर्स ऑफ कमोडिटी चेन रिसर्च में ।स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, स्टैनफोर्डः कैलिफोर्निया।

25. एच. एस्कैथ और एस. इनोमाटा (2013) ग्लोबल वैल्यू चेन्स इन ईस्ट एशियाः द रोल ऑफ इंडस्ट्रियल नेटवर्क्स एंड ट्रेड पॉलिसीज।इन डी. एल्म्स एंड पी. लो (एड्स।) ग्लोबल वैल्यू चेन्स इन ए चेंजिंग वर्ल्ड , डब्ल्यूटीओ, जिनेवा।

26. एच. एस्कैथ (2014) मैपिंग ग्लोबल वैल्यू चेन्स एंड मेजरिंग ट्रेड इन टास्क।बी. फेरारिनी और डी. हम्मेल्स एशिया एंड ग्लोबल प्रोडक्शन नेटवर्क्सः इंप्लीकेशंस फॉर ट्रेड, इनकम एंड इकोनॉमिक वल्नरेबिलिटी । मंडालुयोंग, फिलीपींस और चेल्टेनहैम, यूकेकेः एशियाई विकास बैंक और एडवर्ड एल्गार प्रकाशन।

27. कीन ली इकोनॉमिक कैच—अप एंड टेक्नोलॉजिकल लीपफ्रॉगिंगः द पाथ टू डेवलपमेंट एंड मैक्रोइकॉनॉमिक स्टेबिलिटी इन कोरिया ।एडवर्ड एल्गार, चेल्टेनहैमः यूके और नॉर्थरम्पसुओनः मास केयून ली (2019) द आर्ट ऑफ इकोनॉमिक कैच—अपः बैरियर्स, डेटॉर्स एंड लीपफ्रॉगिंग।कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

28. ली, क्यूनय सजापिरो, मरीनाय माओ, जुकिंग (14 अक्टूबर 2017)। ''ग्लोबल वैल्यू चेन्स (ळटब) से लेकर लोकल वैल्यू चेन्स एंड नॉलेज क्रिएशन के लिए इनोवेशन सिस्टम्स तक''।विकास अनुसंधान के यूरोपीय जर्नल ।

29. हम्फ्री, जे., और एच. शमित्ज।2004. ''चेन गवर्नेंस एंड अपग्रेडिंगः टेकिंग स्टॉक''।ग्लोबल इकोनॉमी में लोकल एंटरप्राइजेज में , एच. शमित्ज द्वारा संपादित, 349—82।चेल्टेनहमः एडवर्ड एल्गार।

30. हम्फ्री, जे. और शमित्ज, एच. (2000)।शासन और उन्नयनः औद्योगिक क्लस्टर और वैश्विक मूल्य श्रृंखला को जोड़ना।आईडीएस वर्किंग पेपर 120, इंस्टीट्यूट ऑफ डेवलपमेंट स्टडीज, यूनिवर्सिटी ऑफ ससेक्स, ब्राइटन।

31. जोडी कीन (2013)। ''व्यापार और वैश्विक मूल्य श्रृंखला के लिए सहायताः दक्षिण एशिया के लिए मुद्दे'' (पीडीएफ) ।नीति संक्षिप्त ।सं. 26. सावती ।19 अप्रैल 2018 को लिया गया — Sawtee-org के माध्यम से।

32. गैरी गेरेफी, जॉन हम्फ्री, और टिमोथी स्टर्जन, ''द गवर्नेंस ऑफ ग्लोबल वैल्यू चेन,'' इंटरनेशनल पॉलिटिकल इकोनॉमी की समीक्षा , वॉल्यूम।12, नहीं।1, 2005

33. *कपलिंस्की, आर. (2010), द रोल ऑफ स्टैंडर्ड्स इन ग्लोबल वैल्यू चेन्स एंड देयर इम्पैक्ट ऑन इकोनॉमिक एंड सोशल अपग्रेडिंग, पॉलिसी रिसर्च पेपर 5396, वर्ल्ड बैंक*

34. *एएच प्रातोनो, ''समावेशी वैश्विक मूल्य श्रृंखला के लिए क्रॉस–सांसॅतिक सहयोगः रतन उद्योग का एक केस स्टडी,'' इमर्जिंग मार्केट्स का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, वॉल्यूम। 12, नहीं। 1, 2005*

35. *नवास–अलेमन, एल। (2011)। ''अपग्रेडिंग के लिए कई मूल्य श्रृंखलाओं में संचालन का प्रभावः ब्राजीलियाई फर्नीचर और फुटवियर उद्योग का मामला''। विश्व विकास ।*

36. *ए बी विश्व निवेश रिपोर्ट 2013: वैश्विक मूल्य श्रृंखलाः विकास के लिए निवेश और व्यापार (पीडीएफ) । स्विट्जरलैंडः संयुक्त राष्ट्र। 2013. आईएसबीएन 978–92–1–112868–0. 19 अप्रैल 2018 को पुनर्प्राप्त & Unctad-org के माध्यम से।*

37. *असगर, अलीय कलीम, रुखसाना (2019–12–30)। ''वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं की आर्थिक स्थिरता में संस्थानों की भूमिकाः पाकिस्तानी परिधान उद्योग का एक अनुवांशिक घटना विश्लेषण'' । एप्लाइड इकोन मिक्स और बिजनेस स्टडीज के जर्नल । 3 (1): 1–14। डीओआई : 10-34260/tSCl-311 । आईएसएसएन 2523–2614 ।*

38. *कैर, मर्लिनय चेन, मार्था ऑल्टरय टेट, जेन (200). ''वैश्वीकरण और गृह–आधारित श्रमिक''। नारीवादी अर्थशास्त्र ।*

39. *''स्थायित्व लक्ष्यों को पूरा करनाः स्वैच्छिक स्थिरता मानक और सरकार की भूमिका'' । प्रशांत संस्थान । 2020–08–07 को लिया गया ।*

40. *जियोवान्नुची, डेनियलय हंसमैन, बर्थोल्डय पालेखोव, दिमित्रीय श्मिट, माइकल (2019), श्मिट, माइकलय जियोवान्नुची, डेनियलय पालेखोव, दिमित्रीय हैंसमैन, बर्थोल्ड (सं.), ''द एडिटर्स रिव्यू ऑफ एविडेंस एंड पर्सपेक्टिव्स ऑन सस्टेनेबल ग्लोबल वैल्यू चेन्स'', सस्टेनेबल ग्लोबल वैल्यू चेन्स, ट्रांजिशन में नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट, चौमः स्प्रिंगर इंटरनेशनल पब्लिशिंग, पीपी। 1–15, डीओआई : 10.1007६ 978–3–319–14877–9ऋ1, आईएसबीएन 978–3–319–14877–9*

41. *असगर, अलीय कलीम, रुखसाना (2019–12–30)। ''वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं की आर्थिक स्थिरता में संस्थानों की भूमिकाः पाकिस्तानी परिधान उद्योग का एक अनुवांशिक घटना विश्लेषण'' । एप्लाइड इकोनॉमिक्स और बिजनेस स्टडीज के जर्नल ।*

42. *''वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं के प्रबंधन की सबसे बड़ी चुनौतियाँ क्या हैं?''*

43. *''अमीर और गरीब देशों पर वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं का प्रभाव'' ।*